एशिया का तापमान सबसे गर्म

डब्ल्यूएमओ (विश्व मौसम संगठन) की 'स्टेट ऑफ द क्लाइमेट इन एशिया, 2024' रिपोर्ट चिंताजनक और चौंकाने वाली है, जिसके मुताबिक, एशिया का तापमान वैश्विक औसत से लगभग दोगुनी तेजी से बढ़ रहा है और पिछला साल एशिया के इतिहास के सबसे गर्म या दूसरे सबसे गर्म वर्षों में एक रहा. डब्ल्यूएमओ की रिपोर्ट के अनुसार, 1961-1990 और 1991-2024 की दो प्रमुख अवधि में इस महाद्वीप की धरती और महासागर, औसत से अधिक तेजी से गर्म हुए, वर्ष 2024 में एशिया का औसत तापमान 1991 से 2020 के औसत से करीब 1.04 डिग्री सेल्सियस अधिक था. एशिया सबसे बड़ा महादेश तो है ही, जहां दुनिया की 60 प्रतिशत आबादी रहती है, आर्कटिक तक फैले होने के कारण इसकी जलवायु संवेदनशीलता भी ज्यादा बढ़ जाती है. एशिया की पिछले वर्ष की इस जलवायु स्थिति रिपोर्ट में सतह के तापमान, ग्लेशियर द्रव्यमान और समुद्रतल जैसे प्रमुख जलवायु संकेतकों में बदलावों को रेखांकित किया गया है, जिसका क्षेत्र के समाजों, अर्थव्यवस्थाओं और पारिस्थितिकी तंत्रों पर असर पड़ना तय है. बढ़ते तापमान के कारण ही पिछले साल एशिया के कई हिस्से में भीषण गर्मी और लू का कहर दर्ज किया गया. अप्रैल से नवंबर के बीच पूर्वी एशिया में लू ने जनजीवन को बुरी तरह त्रस्त कर दिया था, तो जापान, दक्षिण कोरिया और चीन में महीनों तक तापमान बहुत अधिक बना रहा था. चीन में सूखे से लाखों लोगों के प्रभावित होने की बात कही गयी, जबकि भारत के कई हिस्सों में अत्यधिक गर्मी से हीटस्ट्रोक के करीब 48,000 मामले सामने आये और लगभग 150 लोगों की मौत हुई. रिपोर्ट कहती है कि सर्दी में बर्फबारी में कमी और गर्मी में उच्च तापमान के कारण एशिया के हिमनद बुरी तरह प्रभावित हुए. बर्फ की कमी से हिमनदों की कगार टूटने, बाढ़ और भूस्खलन जैसी आपदाओं का खतरा बढ़ गया है. चरम मौसम के तहत एक तरफ सूखे से भारी आर्थिक और कृषि संबंधी नुकसान हुआ, तो अत्यधिक वर्षा से भी कई देशों में क्षति हुई और जानमाल का नुकसान हुआ. बीते साल समुद्रों की सतहों का तापमान भी रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच गया. एशिया में समुद्र वैश्विक औसत के करीब दोगुनी तेजी से गर्म हो रहे हैं और इसका असर अरब सागर और प्रशांत महासागर में कहीं ज्यादा स्पष्ट रूप से दिखाई देता है. इससे जहां निचले तटीय क्षेत्रों में खतरा बढ़ गया है, वहीं भारत समेत दूसरे एशियाई देशों में बारिश के पैटर्न पर भी इसका असर पड़ा है.

विश्व मौसम संगठन की 2024 की रिपोर्ट में जहां यह बताया गया है कि पिछला वर्ष एशिया के इतिहास का सबसे गर्म या दूसरा सबसे गर्म साल रहा, वहीं उसकी यह जानकारी बेहद चौंकाने वाली है कि एशिया का तापमान वैश्विक औसत से लगभग दोगुनी तेजी से बढ़ रहा है.

आपातकाल से सबक सीखना जरूरी

केसी त्यागी
पूर्व सांसद
kctyagimprs@gmail.com

पचास साल पहले आज ही के दिन इंदिरा गांधी ने देश पर आपातकाल थोपा था. लगभग डेढ़ लाख से ज्यादा नेता और कार्यकर्ता जेल जा चुके थे. परिजनों को यातनाएं दी जा रही थीं. जमानत के लिए अदालतों पर दबाव बनाया गया और स्वतंत्र प्रेस से खफा श्रीमती गांधी ने सेंसरशिप लगाकर उसकी आजादी का भी गला घोंट दिया. आपातकाल के तमाम प्रसंगों और घटनाक्रमों से एक बड़ी सीख मिलती है कि जब कोई व्यक्ति या नेता अपने को पार्टी या फिर राष्ट्र का पर्याय मान लेता है, तो लोकतांत्रिक मूल्यों का पतन और तानाशाही की बुनियाद शुरू हो जाती है.

श्रीमती गांधी द्वारा आपातकाल की घोषणा बाह्य या आंतरिक उथल-पुथल के कारण नहीं थी. वर्ष 1971 के बांग्लादेश युद्ध के दौरान ही बाह्य इमरजेंसी लगी हुई थी. गुजरात और बिहार के युवाओं के बढ़ते असंतोष से पनपे आंदोलन का राष्ट्रव्यापी स्वरूप में आना, जेपी जैसे महानायक द्वारा इसे अपना नेतृत्व प्रदान करना, 12 जून, 1975 को गुजरात प्रांत से आये नतीजों में कांग्रेस की पराजय आदि कई प्रमुख कारण रहे. जेपी स्वाधीनता संग्राम में गांधी, नेहरू के विश्वासपात्र साथियों में थे, लिहाजा उनकी पीड़ा आपातकाल को लेकर अन्य नेताओं से भिन्न और मार्मिक थी. इसलिए इंदिरा गांधी को जेल से लिखा पत्र उनकी आत्मा की आवाज थी, 'कृपया उन बुनियादों को तबाह न करें, जिन्हें राष्ट्र के पिताओं ने, जिनमें आपके पिता भी शामिल हैं, अपने खून-पसीने से सींचने का काम किया है. आप जिस रास्ते पर चल पड़ी हैं, उस पर संघर्ष और पीड़ा के सिवाय और कुछ नहीं है. आपको एक महान परंपरा, महान मूल्य और कार्यरत लोकतंत्र विरासत में मिला है. जाते-जाते दुखी कर देने वाला मलबा छोड़कर मत जाइए, फिर से जोड़ने में काफी समय लग जायेगा. जिन लोगों ने ब्रिटिश साम्राज्य से लोहा लिया और उसे परास्त किया, वे अनिश्चित काल तक अधिनायकवाद के अपमान और शर्म को बर्दाश्त नहीं कर सकते.'

इलाहाबाद हाईकोर्ट के न्यायमूर्ति जगमोहन लाल सिन्हा के 12 जून के फैसले से समूचे देश में भूचाल-सा आ गया था. समाजवादी नेता राजनारायण ने 1971 में श्रीमती गांधी के विरुद्ध लोकसभा का चुनाव लड़ा था. वे चुनाव में पराजित हो गये, लेकिन उन्होंने श्रीमती गांधी के चुनाव को इलाहाबाद हाईकोर्ट में चुनौती दी. जस्टिस सिन्हा ने अपने फैसले में श्रीमती गांधी को चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग करने, भ्रष्ट हथकंडे अपनाने, शराब एवं कंबल आदि बांटने का दोषी पाया और उनका चुनाव रद्द कर उन्हें छह वर्ष के लिए अयोग्य भी घोषित कर दिया. यद्यपि बाद में उनके वकील डीपी खरे द्वारा एक याचिका दायर की गयी, जिसमें 20 दिन की छूट की मांग इस आधार पर की गयी कि नये नेता का चुनाव करना होगा और इस बीच कोई उथल-पुथल राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध हो सकती है. यद्यपि नेता के चुनाव की बात तो दूर, समूची पार्टी ने एक बड़ी रैली 23 जून को कर उनके प्रति न सिर्फ आस्था का परिचय दिया, बल्कि तत्कालीन पार्टी अध्यक्ष देवकांत बरुआ ने सभ्यता की सभी सीमाएं लांघकर उन्हें राष्ट्र का पर्याय घोषित कर दिया कि 'इंदिरा ही भारत है और भारत ही इंदिरा है.'

25 जून, 1975 को दिल्ली के रामलीला मैदान में समूचे विपक्ष द्वारा आयोजित रैली संख्या में विशाल थी. जनसंघ नेता मदनलाल खुराना मंच का संचालन कर रहे थे. लोकदल से प्रतिनिधि के रूप में सत्यपाल मलिक और मैं भी उपस्थित था. सभी प्रमुख दलों के नेताओं के बाद जेपी अपना भाषण प्रारंभ करने को उठे. विशाल जनसमुदाय देर तक तालियां बजाकर उनका अभिवादन करने लगा. राष्ट्रीय कवि दिनकर की इस कविता का भी कई बार उल्लेख हुआ, **'सदियों की ठंडी-बुझी राख सुगबुगा उठी/मिट्टी सोने का ताज पहन इठलाती है, दो राह, समय के रथ का घर्घर-नाद सुनो/ सिंहासन खाली करो कि जनता आती है.'** जेपी ने इलाहाबाद हाईकोर्ट के घटनाक्रम का जिक्र करते हुए श्रीमती गांधी के इस्तीफे की पुनः मांग की कि यह जनसमर्थन के अभाव वाली सरकार है और वे इसे अस्वीकार करते हैं तथा वे सेना एवं पुलिस से भी अपील करते हैं कि किसी भी अवैध आदेश का पालन न करें, जैसा कि उनका मैन्युअल भी कहता है. इस प्रकार का प्रस्ताव 1930 के दशक में इंदिरा गांधी के दादा मोतीलाल नेहरू ने भी पारित किया था कि पुलिस को चाहिए कि वह अवैध आदेशों का पालन न करें. उस समय के अंग्रेजी जजों ने भी स्वीकार किया था कि अवैध आदेशों का पालन न करने की अपील करने में कुछ गलत नहीं है.

श्रीमती गांधी असुरक्षा के दौर से गुजर रही थीं. एक तबके द्वारा अदालत का फैसला आने तक किसी वरिष्ठ मंत्री को कार्यभार सौंपने की मांग भी उठने लगी. सरदार स्वर्ण सिंह एवं बाबू जगजीवन के नाम प्रमुखता से चर्चा में रहे, लेकिन श्रीमती गांधी को अब किसी नेता पर विश्वास नहीं बचा था. उनकी मुसीबत को निरंतर बढ़ाने का काम युवा तुर्क नेता चंद्रशेखर एवं कंपनी भी कर रही थी. मोहन धारिया, कृष्णकांत, लक्ष्मीकान्तमा इस कोर ग्रुप के सदस्य थे, जो निरंतर टकराव टालने एवं जेपी से संवाद करने के पैरोकार थे. इन्हीं नेताओं के प्रयास से दो दौर की वार्ता श्रीमती गांधी और जेपी के बीच हो चुकी थीं, जो बेनतीजा रहीं. इसी असुरक्षा के दौर में आरके धवन, संजय गांधी एवं चौधरी बंसीलाल का त्रिगुट सक्रिय हो चला. संजय गांधी को मारुति उद्योग के लिए 290 एकड़ जमीन आवंटित किये जाने पर संसद कई बार ठप्प हो चुकी थी. तीनों ने मिलकर सख्त कार्रवाई करने का दबाव बनाना शुरू कर दिया. इंदिरा गांधी के आवास पर 12 जून से निरंतर जनसमर्थन के नाम पर रैली आयोजित होने लगी. लंपट किस्म के तत्वों की यूथ कांग्रेस में भरमार हो चली. चंद्रशेखर के नॉर्थ एवेन्यू स्थित आवास पर 24 जून को जेपी के सम्मान में आयोजित डिनर में दो दर्जन से अधिक कांग्रेसी सांसदों की उपस्थिति सबको आश्चर्यचकित करने वाली थी.

सिद्धार्थ शंकर रे जैसे कानूनविद आपातकाल का मसविदा तैयार करने लगे और संजय ब्रिगेड ने जेपी की पुलिस और सेना से की गयी अपील को मुख्य मुद्दा बना कर आपातकाल का प्लान तैयार कर लिया. रात्रि 11:45 को राष्ट्रपति फखरुद्दीन अहमद से हस्ताक्षर करा कर इसकी घोषणा कर दी गयी. प्रातः छह बजे कैबिनेट की बैठक में सभी महत्वपूर्ण जानकारियां आदान-प्रदान होती रहीं. उस समय तक देश के लगभग डेढ़ लाख से ज्यादा नेता और कार्यकर्ता जेल जा चुके थे. परिजनों को यातनाएं दी जा रही थीं. जमानत के लिए अदालतों पर दबाव बनाया गया और स्वतंत्र प्रेस से खफा श्रीमती गांधी ने सेंसरशिप लगाकर उसकी आजादी का भी गला घोंट दिया. हालांकि प्रेस क्लब, दिल्ली से कुलदीप नैयर की अगुवाई में 100 से ज्यादा पत्रकारों ने इसका विरोध भी किया, लेकिन श्रीमती गांधी के सत्ता के जुनून के सामने सब फीका पड़ गया. आपातकाल के तमाम प्रसंगों व घटनाक्रमों से एक बड़ी सीख मिलती है कि जब कोई व्यक्ति या नेता अपने को पार्टी या फिर राष्ट्र का पर्याय मान लेता है, तो लोकतांत्रिक मूल्यों का पतन और तानाशाही की बुनियाद शुरू हो जाती है.

(आपातकाल में लेखक जेल यात्रा कर चुके हैं.)
(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

इंदिरा गांधी के निजी संकट के कारण लगा आपातकाल

रामबहादुर राय
पद्मभूषण से सम्मानित वरिष्ठ पत्रकार
rbrai118@gmail.com

अगर इंदिरा गांधी को सुप्रीम कोर्ट से राहत मिल जाती, तो देश पर आपातकाल नहीं थोपा जाता. आपातकाल के लिए सिर्फ इंदिरा गांधी जिम्मेदार थी.

इंदिरा गांधी द्वारा देश पर आपातकाल थोपने के कई कारण बताये जाते हैं. जैसे कि जेपी का आंदोलन, कांग्रेस के अंदर के द्वंद्व, इलाहाबाद हाईकोर्ट के फैसले के बाद इंदिरा गांधी को मिली चुनौती और आर्थिक कारण. लेकिन आपातकाल लगाये जाने का एक ही कारण था. वह था इंदिरा गांधी का निजी संकट. अगर इंदिरा गांधी को सुप्रीम कोर्ट से राहत मिल जाती, तो आपातकाल नहीं लगाया जाता. विपिन चंद्रा जैसे इतिहासकार गलत कहते हैं कि आपातकाल के लिए जितनी जिम्मेदार इंदिरा गांधी थीं, उतने ही जिम्मेदार जेपी थे. आपातकाल के लिए सिर्फ इंदिरा गांधी जिम्मेदार थीं. सिद्धार्थ शंकर रे तब पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री थे, लेकिन जब-तब उन्हें विचार-विमर्श के लिए दिल्ली बुला लिया जाता था. रे 20 जून, 1975 से ही दिल्ली में थे. उन्होंने ही इंदिरा गांधी को समझाया था कि बिना कैबिनेट की सिफारिश के भी आपातकाल का फैसला लिया जा सकता है. इस तरह इंदिरा गांधी छल-कपट का सहारा लेकर निजी हैसियत से राष्ट्रपति के पास पहुंचीं और 25 जून, 1975 को देश में आपातकाल लगा.

जिस दिन आपातकाल लगा, मैं अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) के कार्यक्रम में कानपुर देहात में था. अगले दिन सुबह, यानी 26 जून को कानपुर से एक साथी ने आकर मुझे आपातकाल लगाये जाने की खबर दी. यह सुनते ही कानपुर से मैं पटना पहुंचा. उस समय मैं एबीवीपी का राष्ट्रीय सचिव था, और मेरा कार्यक्षेत्र पटना था. पटना में मुझे गोविंदाचार्य और त्रिपुरारीशरण मिले. उन्होंने मुझसे कहा कि पटना में आपका रहना खतरे से खाली नहीं. चूंकि मैं एबीवीपी के ऑफिस में ही सोता था, इसलिए वहां मेरी गिरफ्तारी बहुत आसान थी. इस कारण मैं बनारस निकल गया. तीस जून को दोपहर बाद मैं बनारस पहुंचा. वहां एक मित्र के यहां सामान रखकर मैं कहीं जा रहा था कि मैदागिन के पास कांग्रेस के सांसद सुधाकर पांडेय और उनके कुछ सहयोगियों ने मुझे देख लिया. उन्होंने बगल में ही कोतवाली में जाकर खबर कर दिया. उन्होंने क्या कहा था, यह तो मुझे मालूम नहीं, लेकिन थोड़ी ही दूर पहुंचा था कि पुलिस ने मुझे घेर लिया. मुझे चौकाघाट जेल में ले जाया गया. वहां लालमणि चौबे और मजूमदार मेरे साथी थे. वहां से एक दिन हमें शिवपुर स्थित सेंट्रल जेल भेज दिया गया. हम साथी लोग जेल जीवन को आनंदमय बनाने की कोशिश किया करते थे. त्योहारों का मेन्यू बनाते थे. इसी क्रम में जेल की लाइब्रेरी तक हमारी पहुंच हो गयी. मैंने जेलर से कहकर अपराधी बंदियों को पढ़ाने का काम शुरू कर दिया. उसी दौरान दीनदयाल उपाध्याय के दो हत्यारों- रामअवध और भरत से परिचय हुआ. उन दोनों से लंबी बातचीत से पता चला कि वे तो दीनदयाल उपाध्याय को जानते तक नहीं थी. केजीबी के एजेंटों ने उन दोनों का इस्तेमाल किया था. वे दोनों मुझसे पछताते हुए कहते, हमसे बड़ा अपराध हो गया.

जेल में जो बूढ़े-बुजुर्ग कैदी थे, वे बेहद डरे हुए थे. लेकिन युवाओं में जोश दिखता था. उनको इसका गर्व था कि वे इंदिरा गांधी की तानाशाही का विरोध कर रहे हैं. जेल में विभिन्न विचारधाराओं के लोग थे. समाजवादी साथियों की एक आदत थी. वे बात-बात में लोहिया का जिक्र कर बैठते थे कि लोहिया जी ने यह कहा है, वह कहा है. मैंने उसकी काट के लिए कहना शुरू किया, बाबा का यह कहना है. जबकि बाबा कोई नहीं थे. जेल के अंदर भी दहशत का माहौल था और जेल के बाहर भी. लेकिन आपातकाल लगाये जाने के पांच-छह महीने के बाद स्थिति बदलने लगी थी. लोग प्रतिरोध करने लगे थे. जेल से छूटने के बाद मैंने दिल्ली में अटल बिहारी वाजपेयी से मुलाकात थी. तब उनके स्लिप डिस्क का ऑपरेशन हुआ था, लेकिन उन्होंने बातचीत की. बनारस में जेपी से मुलाकात हुई, तो उन्होंने इंदिरा गांधी से मुकाबला करने के लिए एक विपक्षी पार्टी के गठन की जरूरत बतायी. जेपी में सब कुछ दांव पर लगाकर लड़ने का माद्दा था.

आपातकाल के दौरान ही इंदिरा गांधी ने चुनाव की घोषणा कर दी. विपक्षी नेता इस घोषणा से हतप्रभ थे. उनमें से कोई भी चुनाव लड़ना नहीं चाहता था. राजनारायण जी जेल में थे. उनसे पूछने पर पता चला कि वे चुनाव नहीं लड़ेंगे. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2018 में हेमवतीनंदन बहुगुणा पर डाक टिकट जारी करते समय कहा था कि उन्हें जॉर्ज फर्नांडीज को चुनाव लड़ने के लिए कहने के लिए भेजा गया था. लेकिन फर्नांडीस ने उनसे कहा, मैं तो इस चुनाव के बहिष्कार के बारे में सोच रहा हूं. इंदिरा गांधी को लगता था कि आपातकाल में ही चुनाव होंगे, तो विपक्ष चुनाव लड़ने की स्थिति में नहीं होगा. वह चुनाव जीत जायेंगी, फिर आसानी से प्रचारित कर देंगी कि आपातकाल को देश की जनता का समर्थन है. लेकिन बाबू जगजीवन राम, हेमवतीनंदन बहुगुणा, नंदिनी सत्पथी आदि के कांग्रेस से अलग होते ही विपक्ष में एकाएक जान आ गयी. इस बीच आपातकाल हटा लिया गया, चुनाव हुए और जनता पार्टी ने चुनावी जीत हासिल की. अगर जनता पार्टी के नेतागण आपस में नहीं लड़ते, तो इंदिरा गांधी को आपातकाल लगाने के उनके फैसले के लिए न्यूरेम्बर्ग जैसे ट्रायल से गुजरना पड़ता.

(आपातकाल में लेखक जेल यात्रा कर चुके हैं.)
(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

ट्रंप के लापरवाह रवैये से पश्चिम एशिया में बढ़ सकता है संघर्ष

बमबारी से ईरान समाप्त नहीं होगा. अमेरिकी बम परमाणु हथियार बनाने के लिए आवश्यक जानकारी को नष्ट नहीं कर पायेंगे, न ही ऐसा करने की इच्छाशक्ति को, यदि तेहरान ऐसा चाहता है तो. ऐसे में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि अमेरिका द्वारा ईरान पर किया गया हमला क्या इस्राइल और ईरान के बीच चल रहे युद्ध को रोक पायेगा, भले ही फिलहाल दोनों के बीच युद्धविराम की घोषणा हो चुकी है. यह भी कि क्या इस हमले से पश्चिम एशिया में स्थायी शांति आ पायेगी, गाजा में नरसंहार समाप्त हो पायेगा, फिलिस्तीनियों को न्याय मिल पायेगा, या तेहरान और वाशिंगटन के बीच आधी शताब्दी से अधिक समय से चली आ रही शत्रुता समाप्त हो पायेगी? अधिक संभावना इस बात की है कि ट्रंप का जल्दबाजी और लापरवाही भरा रवैया इन सभी समस्याओं को भड़कायेगा और बढ़ायेगा. ट्रंप का दावा है कि अमेरिका का हमला तेहरान में सत्ता परिवर्तन को गति देने के उद्देश्य से किये गये अभियान की शुरुआत नहीं है. परंतु ईरान के राजनेता और लोग इसे इस तरह से नहीं देखेंगे. ट्रंप, एक अलग-थलग किये हुए राष्ट्रपति हैं, जिन्होंने विदेशी युद्धों से बचने की कसम खायी थी, वे इस्राइल के बेंजामिन नेतन्याहू द्वारा तैयार किये गये जाल में फंस गये हैं- एक ऐसा जाल जिससे उनके चतुर पूर्ववर्तियों ने भी परहेज किया था. नेतन्याहू ने लगातार ईरानी परमाणु खतरे की तात्कालिकता को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया है. जबकि ईरान ने हमेशा परमाणु बम बनाने की कोशिश से इनकार किया है. नेतन्याहू का हालिया दावा कि ईरान हथियार बना रहा है, का समर्थन अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी या अमेरिकी खुफिया विशेषज्ञों ने नहीं किया. परंतु ट्रंप ने इस पर विश्वास करना तय किया. इस प्रकार, एक बार फिर अमेरिका झूठ के सहारे विवादित, शायद दोषपूर्ण खुफिया जानकारी के आधार पर पश्चिम एशिया में युद्ध में उतर गया.

The Guardian

-सिमॉन टिसडैल

आपातकाल के उस डरावने माहौल की याद आज भी है

प्रो राजकुमार जैन
समाजवादी नेता और पूर्व विधायक
Delhi@prabhatkhabar.in

उस समय का माहौल बड़ा सख्त और डरावना था. पुलिस और सरकारी अधिकारी बदतमीजी से पेश आते थे. जेल में जहां सौ लोगों की क्षमता थी, वहां तीन सौ लोगों को ठूंस दिया गया था.

पचास साल बाद जब मैं आपातकाल के उस दौर को याद करता हूं, तो एक अजीब-सा अहसास होता है. चारों तरफ अशांति, उथल-पुथल और भय का माहौल था. आपातकाल भले ही 25 जून, 1975 को लगा हो, लेकिन उसकी पृष्ठभूमि तो पहले से ही बननी शुरू हो गयी थी. तत्कालीन दो आंदोलनों-गुजरात के नवनिर्माण आंदोलन और बिहार के छात्र आंदोलन ने आपातकाल लगाने की पृष्ठभूमि तैयार की. देश की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी थीं, लेकिन सत्ता पर उनके बेटे संजय गांधी का कब्जा था, जो उग्र और अलोकतांत्रिक थे. इंदिरा गांधी के जो सहयोगी और सलाहकार थे, वे भी उतने ही अलोकतांत्रिक थे. उनमें से एक देवकांत बरुआ ने तो 'इंडिया इज इंदिरा एंड इंदिरा इज इंडिया' का नारा ही गढ़ दिया था. ऐसे ही सिद्धार्थशंकर रे थे, जिन्होंने आपातकाल लगाने की सलाह दी थी. इंदिरा गांधी को भी लगा था कि कुछ समय आपातकाल लगाने के बाद उसे हटा लिया जायेगा.

जब आपातकाल लगाया गया, तब मैं दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफसर बन गया था, लेकिन प्रोबेशन पर था. चूंकि मैं शुरू से ही समाजवादी आंदोलन से जुड़ा हुआ था, इसलिए आपातकाल लगने के बाद मैंने साथियों के साथ भूमिगत रहकर आंदोलन जारी रखने का फैसला लिया. पुलिस-प्रशासन को मेरे बारे में जानकारी थी. इस कारण पुलिस मुझे गिरफ्तार करने के लिए मेरे घर पहुंची. लेकिन मैं वहां नहीं था. आखिरकार दिल्ली यूनिवर्सिटी के कैंपस से मुझे मीसा के तहत गिरफ्तार कर लिया गया. फिर तो पूरे उन्नीस महीने तक मैं जेल में ही था.

आंदोलनों के सिलसिले में जेल से मेरा पुराना नाता था. वर्ष 1966 में मैं राममनोहर लोहिया जी के साथ दिल्ली की तिहाड़ जेल में था. तब जनसंघ के नेता मदनलाल खुराना भी गोरक्षा आंदोलन के सिलसिले में जेल में थे. लेकिन आपातकाल में मीसा के तहत गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल लाये जाने के बाद मैंने पाया कि माहौल बदला हुआ है. सिर्फ लोग ही डरे हुए नहीं थे, हरियाणा कैडर के जेलर शर्मा जी के तेवर भी बदले हुए थे. जेल की ड्योढ़ी पर पहुंचते ही मैंने शर्मा जी को घबराये हुए और भारी गुस्से में देखा. मैंने उन्हें नमस्कार किया, लेकिन वह बदतमीजी पर उतर आये. मुझे डपटते हुए उन्होंने कहा, 'तुम्हें पता है तुम मीसा के तहत गिरफ्तार किये गये हो?' मैंने कहा, 'देखिए, हमारी लड़ाई इंदिरा गांधी से है. आप बीच में क्यों पड़ते हैं?' जेलर को लगा कि अगर मुझे कैदियों के जनरल वार्ड में भेजा गया, तो मैं उनके बारे में उल्टा-सीधा कुछ न कह दूं, क्योंकि मैं उनका परिचित जो ठहरा. इसलिए मुझे और मेरे एक साथी को उन्होंने सजायाफ्ता कैदियों की बी क्लास बैरक में डाल दिया. आपातकाल के समय जेल में मदनलाल खुराना हमारे साथ थे. जेल में मुझे चौधरी चरण सिंह दिखे. हम उनसे नाराज थे, क्योंकि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में उन्होंने छात्रसंघ को प्रतिबंधित कर दिया था. छात्र आंदोलनकारियों को उन्होंने तब न सिर्फ जेल में डाल दिया था, बल्कि कहा था कि यह जेल है, कोई पिकनिक स्पॉट नहीं. चौधरी साहब को देखते ही मैंने कहा, 'अब तो पता चल रहा होगा कि जेल और पिकनिक स्पॉट में क्या फर्क होता है?' उनको लगा कि मैं किसी दूसरी पार्टी का कार्यकर्ता हूं. मैंने उनसे कहा, 'चौधरी साहब, मैं सोशलिस्ट पार्टी से हूं'. यह सुनकर उन्होंने मुझे पास बुलाया और सफाई देते हुए बोले, पिकनिक स्पॉट को गलत तरह से देखा गया. मैंने वह बात गुंडों के लिए बोली थी, कार्यकर्ताओं के लिए नहीं. उसके बाद मेरे उनके साथ रिश्ते गहरे हो गये.

आपातकाल के समय का माहौल बड़ा सख्त और डरावना था. पुलिस और सरकारी अधिकारी आम लोगों से बेहद सख्ती और बदतमीजी से पेश आते थे. जहां सौ लोगों के रहने की क्षमता थी, वहां तीन सौ लोगों को ठूंस दिया गया था. संडास के लिए लंबी लाइन लगती थी. बरसात के समय तो हालत बहुत ही खराब हो गयी थी. खाना बनाने की जगह भी गंदी थी और बर्तन भी गंदे होते थे. छह महीने तक तो हमारे परिवार वालों को पता तक नहीं चला था कि हमें कहां रखा गया है. लोग जेल में बंद अपने परिजनों को ढूंढते-ढूंढते परेशान हो गये थे. उस दौरान न्यायालय का माहौल भी कोई अलग न था. दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश मीसा बंदियों के साथ सख्ती से पेश आते थे. हालांकि रंगराजन जैसे अच्छे और संवेदनशील न्यायाधीश भी मैंने उस दौर में देखे, जिन्हें बंदियों से हमदर्दी थी.

चूंकि हम समाजवादी रात में जोर-जोर से नारे लगाते थे, इसलिए हमें हरियाणा की हिसार जेल में भेज दिया गया. वहां जॉर्ज फर्नांडिस, राजनारायण, ओमप्रकाश चौटाला और जनसंघ के नेता भाई महावीर आदि थे. जेल में वैसे तो विभिन्न विचारधाराओं के नेता-कार्यकर्ता थे और सभी की लड़ाई इंदिरा गांधी की तानाशाही से थी, लेकिन जनसंघी और समाजवादी कार्यकर्ताओं के बीच ज्यादा टकराव दिखता था. जनसंघ के लोग दुखी थे, क्योंकि उनमें से ज्यादातर का व्यापार चौपट हो रहा था, लेकिन इंदिरा गांधी की तानाशाही के खिलाफ हम सब एक थे.

(आपातकाल में लेखक जेल यात्रा कर चुके हैं.)
(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

आपके पत्र

ईरान-अमेरिका युद्ध का वैश्विक असर

ईरान को परमाणु हथियार बनाने से रोकने के लिए इजराइल ने हमला किया. इसमें अमेरिका भी कूद गया और उसने ईरान पर हमला किया है. अमेरिका के इस युद्ध में शामिल होने के बाद इजरायल को राहत मिली है, लेकिन इसका व्यापक असर वैश्विक स्तर पर पड़ने की आशंका बढ़ गयी है. इसमें भारत को अपनी भूमिका तय करनी पड़ेगी. ईरान तेल का बड़ा उत्पादक है और उसके युद्ध में शामिल होने से कच्चे तेल की कीमत अंतरराष्ट्रीय बाजार में बढ़ेगी और भारत पर भी इसका असर पड़ेगा. ऐसे में भारत लंबे समय तक तटस्थ नहीं रह सकता है.

मोनू कुमार, पटना

आतंकवाद पर अमेरिका की दोहरी नीति

अमेरिका की आतंकवाद पर दोहरी नीति को समाप्त करने के लिए वर्तमान परिदृश्य में भारत को चीन के साथ नये सिरे से संबंध प्रगाढ़ करने की आवश्यकता है. पश्चिम एशिया में उभरते भारत की ताकत को अमेरिका हजम नहीं कर पा रहा है. उसे मलाल है कि आपरेशन सिंदूर के दौरान भारत ने अमेरिका से किसी भी प्रकार की मदद नहीं मांगी. भारत कभी भी युद्ध का समर्थक नहीं रहा है. यह एक विकासशील व शांतिप्रिय देश है. अमेरिका पश्चिम एशिया में अपनी दादागिरी के आगे सबसे बड़ा रोड़ा भारत को मानता है.

युगल किशोर राही, छपरा

https://t.me/AllNewsPaperPaid

अब डिजिटल होगी जातिवार जनगणना, डेटा संग्रहण में आएगी पारदर्शिता

आरती कुमारी

दुनिया की सबसे बड़ी आबादी की जनगणना की अधिसूचना जारी हो गई है। कोविड महामारी के कारण 2021 में होने वाली यह जनगणना अब षुरू होगी। कांग्रेस समेत पूरा विपक्ष जातिवार जनगणना कराने की मांग कर रहा था। अचानक मोदी सरकार ने जातिवार जनगणना कराने का फैसला लेकर पूरे विपक्ष को चौंका दिया। क्योंकि अब यह मुद्दा हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगा। साथ ही सभी वर्गों की प्रमुख जातियों के साथ उपजातियों की जनगणना के आंकड़े जब सामने आएंगे, तब यह स्पश्ट हो जाएगा कि सैद्धांतिक रूप से जातिगत गणना कराना उचित था या नहीं ? ई-बाजार, ई-आवेदन, ई-रेल व बस में आरक्षण ई-भुगतान के बाद अब ई-जनगणन यानी डिजिटल गिनती होगी। इस गिनती में जाति की गिनती भी साथ-साथ होगी। इसमें जन्म और मृत्यु दोनों ही डिजिटल जनगणना से जुड़े होंगे। हर जन्म के बाद डिजिटल जनगणना खुद ही अद्यतन हो जाएगी और जब किसी की मृत्यु होगी तो उसका नाम खुद ही डाटा से डिलीट हो जाएगा। सेंसर रजिस्टर यानी जनगणना में बच्चे के जन्म माता-पिता ,जाति और जन्म स्थान की जानकारी समेत 16 भाशाओं में 36 प्रष्नों के उत्तर दर्ज हो जाएंगे। बालक जब 18 साल का होगा तो खुद ही उसका नाम चुनाव आयोग के पास चला जाएगा, नतीजतन उसका मतदाता पहचान पत्र बनने के साथ मतदाता सूची में भी नाम स्वमेव दर्ज हो जाएगा। फिर जब किसी की मौत हो जाएगी तो ऑनलाइन जनगणना के डाटा से उस शख्स का नाम खुद ही डिलीट भी हो जाएगा। इस तरह से जनगणना का डाटा हमेशा खुद अद्यतन होता रहेगा। राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्ट्रर (एनपीआर) की प्रक्रिया पर करीब 12000 करोड़ रुपए खर्च होंगे। डिजिटल जनगणना की घोशणा 1 फरवरी 2021 को वित्तमंत्री निर्मला सीतारमण ने की थी।

जनगणना-2021 में नागरिकों को गणना में षामिल होने की एक बेहतर और अनूठी ऑनलाइन सुविधा दी गई है। भारत सरकार के केंद्रीय गृह मंत्रालय ने भारतीय नागरिकों को ऑनलाइन स्व-गणना का अधिकार देने के लिए नियमों में परिवर्तन किए हैं। जनगणना (संषोधन)-2022 के अनुसार परंपरागत तरीके से तो जनगणना घर-घर जाकर सरकारी कर्मचारी करेंगे ही, लेकिन अब नागरिक स्व-गणना के माध्यम से भी अनुसूची प्रारूप भर सकता है। इसके लिए पूर्व नियमों में 'इलेक्ट्रॉनिक फार्म' षब्द जोड़ा गया है, जो सूचना प्रौद्योगिकी कानून 2000 की धारा दो की उप धारा (एक) के खंड आर में दिया गया है। इसके अंतर्गत मीडिया, मैग्नेटिक, कंप्यूटर जनित माइक्रोचिप या इसी तरह के अन्य उपकरण में तैयार कर भेजी या संग्रहित की गई जानकारी को इलेक्ट्रॉनिक फार्म में दी गई जानकारी माना जाएगा। यानी एनरायड मोबाइल से भी अपनी गिनती दर्ज की जा सकेगी, जो कि आजकल घर-घर में उपलब्ध है। इस ऑनलाइन प्रविष्टि के अलावा घर-घर जाकर भी जनगणना की जाएगी। इसमें कोई दो राय नहीं कि ऑनलाइन प्रयोग अद्वितीय है। लेकिन देश की जनता के स्थायी और निरंतर गतिशील पंजीकरण के दृष्टिगत अब जरूरी है कि ग्राम पंचायत स्तर पर जनगणना की जवाबदेही सौंप दी जाए। गिनती के विकेंद्रीकरण का यह नवाचार जहां 10 साला जनगणना की बोझिल परंपरा से मुक्त होगा, वहीं देश के पास प्रतिमाह प्रत्येक पंचायत स्तर से जीवन और मृत्यु की गणना के सटीक व विश्वसनीय आंकड़े मिलते रहेंगे। इस लेख में प्रस्तुत की जाने वाली जनगणना की यह तरकीब अपनाना इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि तेज भागती यांत्रिक व कंप्यूटरीकृत जिदंगी में सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक बदलाव के लिए सर्वमान्य जनसंख्या के आकार व संरचना का दस साल तक इंतजार नहीं किया जा सकता ? वैसे भी भारतीय समाज में जिस तेजी से लैंगिक, रोजगारमूलक और जीवन स्तर मे परिवर्तन आ रहे हैं, उसकी बराबरी के प्रयासों के लिए भी जरूरी है कि हम जनगणना की परंपरा में आमूलचूल परिपर्तन लाएं ?

जनसंख्या के आकार, लिंग और उसकी आयु के अनुसार उसकी जटिल संरचना का कुछ ज्ञान न हो तो आमतौर पर अर्थव्यवस्था के विकास की कालांतर में प्रगति, आमदनी में वृद्धि, खाद्य पदार्थों व पेयजल की उपलब्धता, आवास, परिवहन, संचार, रोजगार के संसाधन, शिक्षा, स्वास्थ्य व सुरक्षा के पर्याप्त उपायों के इजाफे के पूर्वानुमान लगाना मुश्किल है। जनसंख्या में वृद्धि के अनुपात में ही लोकसभा और विधानसभा सीटों को परिसीमन के जरिए बढ़ाया जाता है। 2028 में होने वाले लोकसभा चुनाव में महिलाओं के लिए भी 33 प्रतिषत सीटें आरक्षित रहेंगी। जनगणना में निरंतरता इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि देश व दुनिया में जनसंख्या वृद्धि विस्फोटक बताई जा रही है। संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक दुनिया की जनसंख्या लगभग सात सौ करोड़ हो चुकी है। 2050 में यह आंकड़ा 10 करोड़ तक पहुंच सकता है। इस आबादी का पचास प्रतिशत से भी ज्यादा हिस्सा महज नौ देशों चीन, भारत, अमेरिका, पकिस्तान, बांग्लादेश, नाइजीरिया, कांगो, इथोपिया और तंजानिया में होगा। परिवार नियोजन के तमाम उपायों के बावजूद दुनिया में प्रति महिला सकल प्रजनन दर 2.5 शिशु है, 2050 में यह दर घटकर 2.1 प्रति महिला प्रति शिशु रह जाने की उम्मीद है। धरती पर जितनी तेजी से मानव समुदायों की आबादी उन्नसवीं सदी में बढ़ी है, उतनी तेजी से बढ़ोतरी पहले कभी दर्ज नहीं हुई। एक अनुमान के मुताबिक ईसवी सन एक में धरती पर कुल आबादी लगभग तीस करोड़ थी। अठारहवीं शताब्दी के अंत में दुनिया की जनसंख्या एक अरब के आंकड़े को भी पार नहीं कर पाई थी। इन शताब्दियों में जन्म दर की मात्रा अधिक होने के बावजूद जनसंख्या विृद्ध दर बेहद मंदी थी। प्रकृति पर निर्भर गर्भ निरोधकों से दूर और उपचार की आसान व सुलभ पद्धतियों से अनजान स्त्री-पुरूष बच्चे तो खूब पैदा करते थे, लेकिन उनमें से ज्यादातर मर जाया करते थे। बीमारियों की पहचान और उपचार से नियंत्रण के चलते बीसवीं शताब्दी के पहले ही तीन दशको में यह आबादी दोगुनी होकर करीब पौने दो अरब के आंकड़े को छू गई थी।

भारत की जनसंख्या 1901 में 23,83,96,327 थी। आजादी के साल 1947 में यह आबादी 34.2 करोड़ हो गई थी। 1947 से 1981 के बीच भारतीय आबादी की दर में ढाई गुना वृद्धि दर्ज की गई और आबादी 68.4 करोड़ हो गई थी। जनसंख्या वृद्धि दर का आकलन करने वाले विशेषज्ञो का मानना है कि भारत में प्रति वर्ष एक करोड़ 60 लाख आबादी बड़ जाती हैं। इस दर के अनुसार हमें अपने देश की करीब एक अरब 40 करोड़ लोगों की एक निशचित जनसंख्या प्रारूप में गिनती करनी है, ताकि व्यक्तियों और संसाधनों के समतुल्य आर्थिक व रोजगारमूलक विकास का खाका खींचा जा सके । जनसंख्या का यह आंकड़ा अज्ञात भविष्य के विकास की कसौटी पर खरा उतरे उसका मूलाधार वैज्ञानिक तरीके से की गई सटीक जनगणना ही है।

हरेक दस साल में की जाने वाली जनता-जनार्दन की गिनती में करीब 34 लाख कर्मचारी जुटते हैं। डिजिटल डिवाइस से लैस 1.3 लाख जनगणना अधिकारी भी रहेंगे। छह लाख ग्रामों, पांच हजार कस्बों, सैकड़ों नगरों और दर्जनों महानगरों के रहवासियों के द्वार-द्वार दस्तक देकर जनगणना का कार्य करना कर्मचारियों के लिए जटिल होता है। यह काम तब और बोझिल हो जाता है जब किसी कर्मचारी-दल को उसके स्थनीय दैनंदिन कार्य से दूर कर उसे दूरांचल गांव में भेज दिया जाता है। ऐसे हालात में गिनती की जल्दबाजी में वे मानव समूह छूट जाते हैं, जो आजीविका के लिए मूल निवास स्थल से पलायन कर जाते हैं। ऐसे लोगों में ज्यादातर अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के लोग होते हैं। बीते कुछ सालों में आधुनिक व आर्थिक विकास की अवधारणा के चलते इन्हीं जाति समूह के करीब चार करोड़ लोग विस्थापन के दायरे में हैं। इनसे रोशन गांव तो अब बेचिराग हैं, लेकिन इन विस्थापितों का जनगणना के समय स्थायी ठिकाना कहां है, जनगणना करने आए दल को यह पता लगाना मुशकिल होता है ?

जनगणना की विधि का हो विकेंद्रीकरण

जनगणना की प्रक्रिया के वर्तमान स्वरूप को बदला जाकर एक ऐसे स्वरूप में तब्दील किया जाए, जिससे इसकी गिनती में निरंतरता बनी रहे। इसके लिए न भारी भरकम संस्थागत ढांचे की जरूरत है और न ही सरकारी अमले की। केवल गिनती की केन्द्रीयकृत जटिल पद्धति को विकेन्द्रीकृत करके सरल करना है। गिनती की यह तरकीब ऊपर से शुरू न होकर नीचे से शुरू होगी। देश की सबसे छोटी राजनीतिक व प्रशासनिक इकाई ग्राम पंचायत है। जिसका त्रिस्तरीय ढांचा विकास खण्ड व जिला स्तर तक है। हमें करना सिर्फ इतना है कि तीन प्रतियों में एक जनसंख्या पंजी पंचायत कार्यालय में रखनी है। इसी पंजी की प्रतिलिपि कंप्युटर में फीड जनसंख्या प्रारूप पर भी दर्ज हो। जिन ग्राम पंचायतों में इसे जनसंख्या संबंधी वेबसाइट से जोड़कर इन आंकड़ो का पंजीयन सीधे अखिल भारतीय स्तर पर हो सकता है। जैसा कि अब ऑनलाइन माध्यमों से अपनी गिनती दर्ज करा सकेंगे। परिवार को इकाई मानकर सरपंच, सचिव ओर पटवारी को यह जवाबदेही सौंपी जाए कि वे परिवार के प्रत्येक सदस्य का नामकरण व अन्य जानकारियां जनसंख्या प्रारूप के अनुसार इन पंजियों में दर्ज करें। इस गिनती को सचित्र भी किया जा सकता है। चूंकि ग्राम पंचायत स्तर का प्रत्येक व्यक्ति एक दुसरे को बखूबी जानते हैं इसलिए इस गिनती में चित्र व नाम के स्तर पर भ्रम की स्थिति निर्मित नहीं होगी। जैसा कि मतदाता सूचियों और मतदाता परिचय-पत्र में हो जाती हैं। गिनती की इस प्रक्रिया से कोई वंचित भी नहीं रहेगा। क्योंकि जनगणना किए जाने वाले जन और जनगणना करने वाले लोग स्थानीय हैं। गांव में किसी भी शिशु के पैदा होने की जानकारी और किसी भी व्यक्ति की मृत्यु की जानकारी तुरंत पूरे गांव में फैल जाती है, अतः इस जानकारी को अविलंब पंजी में दर्ज किया जा सकेगा। ग्राम पंचायत पर एकत्रित होने वाली यह जानकारी प्रत्येक माह की एक निश्चित तारीख को विकासखण्ड स्तर पर पहुंचाई जाकर पंजी की एक प्रति विकासखण्ड कार्यालय में रखी जाए और इसे आधार बनाकर इसका तत्काल कंप्यूटरीकरण किया जाए। जिले के सभी विकास खंडों की यह जानकारी जिला स्तर पर बुलाई जाए और यहां इसका एकीकरण किया जाकर इस गिनती को कंप्यूटर में फीड किया जाए। इस तरह से सभी विकासखण्डो के आंकड़ों की गणना कर जिले की जनगणना प्रत्येक माह होती रहेगी। जिलाबार गणना के डाटा को प्रदेश स्तर पर सांख्यकीय कार्यालय में इकट्ठा कर प्रदेश की जनगणना का आंकड़ा भी प्रत्येक माह सामने आता रहेगा। प्रदेशवार जनसंख्या के आंकडो को देश की राजधानी में जनसंख्या कार्यालय में संग्रहीत कर प्रत्येक माह देश की जनगणना का वैज्ञानिक व प्रामाणिक आंकड़ा मिलता रहेगा। देश के नगर व महानगर वार्डो में विभक्त हैं। अतः वार्डवार जनगणना के लिए गिनती की उपरोक्त प्रणाली ही अपनाई जाए। इस गिनती में जितनी पारदर्शिता और शुद्धता रहेगी उतनी किसी अन्य पद्धति से संभव नहीं है।

पश्चिम एशिया में फैला हुआ है अमेरिका के सैन्य अड्डा

जितेन्द्र कुमार सिन्हा

पश्चिम एशिया एक बार फिर युद्ध की आशंका के घेरे में है। अमरीका द्वारा की गई सैन्य कार्रवाई के बाद ईरान और उसके समर्थक समूहों में आक्रोश देखा जा रहा है। इस तनावपूर्ण वातावरण में सबसे अधिक खतरा उन अमरीकी सैन्य ठिकानों पर मंडरा रहा है जो इस क्षेत्र के कई देशों में फैला हुआ है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमरीका ने इस्लामी दुनिया के हृदय स्थल माने जाने वाले पश्चिम एशिया में रणनीतिक सैन्य अड्डों की एक पूरी श्रृंखला खड़ी की है। यह बेस खुफिया संचालन, हवाई हमलों, रसद आपूर्ति, नौसेना गतिविधियों से लेकर ड्रोन मिशनों तक के लिए इस्तेमाल होता हैं। 1996 में बना अल उदीद एयर बेस, कतर की राजधानी दोहा से 30 किमी दूर स्थित है। यह अमरीका का सबसे बड़ा सैन्य बेस है जो 24 हेक्टेयर (60 एकड़) क्षेत्र में फैला हुआ है। यहां 100 से अधिक फाइटर जेट्स और ड्रोन तैनात हैं। 10,000 अमरीकी सैनिक तैनात हैं। इराक, सीरिया और अफगानिस्तान में हुए कई ऑपरेशन यहीं से संचालित हुए हैं। यह बेस सेंटकॉम (US Central Command) के एयर ऑपरेशनों की रीढ़ है। ईरान जानता है कि यह अड्डा हमले की स्थिति में अमरीका की जवाबी कार्रवाई की प्राथमिक जगह होगा, इसीलिए यह उसका प्रमुख संभावित लक्ष्य भी है।

बहरीन में स्थित यह नौसैनिक अड्डा HMS Juffair के पुराने ब्रिटिश बेस पर विकसित किया गया है। इसमें 9,000 से अधिक सैन्य और नागरिक कर्मचारी कार्यरत हैं। अमरीकी नौसेना की पांचवीं फ्लीट (Fifth Fleet) की तैनाती है। फारस की खाड़ी, ओमान की खाड़ी और अरब सागर पर पैनी नजर रखता है। यह बेस जहाजों, विमानों और सैन्य टुकड़ियों को ईंधन, मरम्मत, सुरक्षा और खुफिया सूचना प्रदान करता है। फारस की खाड़ी में अमरीका की उपस्थिति ईरान को कूटनीतिक रूप से संतुलन में रखने का काम करता है। इराक के उत्तरी क्षेत्र कुर्दिस्तान की राजधानी एरबिल में स्थित यह एयर बेस अमरीकी सेना की हवाई गतिविधियों के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। इसके अलावा अल-हरीर और अल-असद जैसे अन्य बेस भी इराक में मौजूद है। एरबिल से IS के खिलाफ अभियान चलाया गया था। यह बेस सीरिया और ईरान की सीमा के करीब है, जिससे इसे रणनीतिक बढ़त मिलती है। ईरान समर्थित मिलिशिया गुट पहले भी इन बेसों को रॉकेट और ड्रोन हमलों से निशाना बना चुका है। कुवैत में अमेरिका के कई बेस हैं लेकिन सबसे अहम है कैंप आरिफजान, जो 1999 में बनाया गया था। यह बेस दक्षिण-पूर्व कुवैत में स्थित है। लॉजिस्टिक सपोर्ट, ट्रेनिंग और कमांड सेंटर का कार्य करता है। इसमें हजारों अमेरिकी सैनिक तैनात रहते हैं। इराक युद्ध के समय यह बेस युद्ध सामग्री के ट्रांजिट प्वाइंट के रूप में भी प्रयोग हुआ था। अबू धाबी के पास स्थित अल दहफरा एयर बेस में 10 विमान स्क्वाड्रन है। MQ-9 रीपर ड्रोन, एफ-22 रैप्टर स्टील्थ फाइटर, AWACS जैसे विमानों की तैनाती है। टोही, निगरानी और हवाई लड़ाई के लिए पूरी तरह सक्षम है। यह बेस अमेरिका के खुफिया नेटवर्क का एक अहम हिस्सा है, जिससे ईरान की गतिविधियों पर निगरानी रखा जाता है। अमरीका के कई बेस और फॉरवर्ड ऑपरेटिंग लोकेशंस (FOLs) जॉर्डन में जरका और अज-जरका है। सऊदी अरब में प्रिंस सुल्तान एयर बेस है। मिस्र में सिनाई प्रायद्वीप के पास छोटा बेस है। यह सभी अड्डा संभावित संघर्षों में सक्रिय भूमिका निभा सकता है। अमरीका ने सिर्फ एयरबेस और नौसैनिक अड्डा नहीं बनाया हैं, बल्कि रडार चौकियों और सैटेलाइट निगरानी केंद्रों की भी एक मजबूत श्रृंखला खड़ा किया है। उदाहरण के लिए तुर्किए (तुर्की) में इंकिरलिक एयर बेस, सीरिया के उत्तर-पूर्व में गुप्त चौकियां, लेबनान की सीमा के करीब खुफिया चौकियां। इन चौकियों का कार्य है, खतरे की पहचान, ईरान समर्थित गुटों की हलचल पर नजर रखना और आवश्यक स्थिति में तेजी से जवाब देना। ईरान समर्थक समूहों द्वारा अमेरिकी अड्डों पर हमला कोई नई बात नहीं है। इतिहास गवाह है कि 2020 में इराक में अल-असद एयर बेस पर मिसाइल हमला, सीरिया में 2023 में अमेरिकी चौकियों पर ड्रोन अटैक, यमन से हौथी विद्रोहियों द्वारा यूएई में अमेरिकी प्रतिष्ठानों पर निशाना। इन हमलों में यह देखा गया है कि ईरान सीधे हमला नहीं करता है, बल्कि अपने प्रॉक्सी मिलिशिया के जरिए सटीक और रणनीतिक वार करता है। संभावना कम है कि ईरान सीधे इन अड्डों पर मिसाइल दागेगा, क्योंकि इससे अमेरिका-ईरान पूर्ण युद्ध की स्थिति आ सकता है। अंतरराष्ट्रीय समर्थन खो सकता है। अमेरिका के पास जवाबी कार्रवाई की क्षमता कहीं अधिक है।

परंतु, 'असिमेट्रिक वारफेयर' यानि छिपे हुए गुटों द्वारा हमला या साइबर युद्ध की संभावना बहुत अधिक है। अमेरिका इन सभी बेसों को इंटरलिंक्ड नेटवर्क से जोड़ता है। THAAD और पैट्रियट मिसाइल डिफेंस सिस्टम तैनात हैं। रेड अलर्ट मोड में कई बेस चलाया जा रहा है। ड्रोन निगरानी और इलेक्ट्रॉनिक वॉरफेयर की व्यवस्था की गई है। यदि हमला होता है तो अमेरिका का प्रतिउत्तर सीमित न होकर क्षेत्रीय स्तर पर बड़ा हो सकता है। पश्चिम एशिया एक बार फिर एक चिंगारी से जल उठने के कगार पर है। अमेरिका के सैन्य अड्डा न केवल सामरिक रूप से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि ईरान के लिए हमेशा से एक 'प्रोवोकेशन पॉइंट' रहा हैं। ईरान चाहे सीधे हमला करे या अपने सहयोगी गुटों के जरिए, टकराव की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता।

इन अड्डों की मौजूदगी यह भी दिखाता है कि अमेरिका इस क्षेत्र में अपनी सुपरपावर की पकड़ किसी भी कीमत पर नहीं छोड़ना चाहता है। वहीं, ईरान क्षेत्रीय शक्ति बनने की आकांक्षा में इन ठिकानों को 'आधुनिक औपनिवेशिक प्रतीक' मानता है। इसलिए, आने वाले दिनों में यदि पश्चिम एशिया का तापमान युद्ध की लपटों से गरम हो, तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। ईरान के निशाने पर जो दिख नहीं रहा, वही सबसे ज्यादा खतरा में है।

मेष राशिः आज का दिन आपके अनुकूल रहने वाला है। आज आपका मित्र आपसे मिलने आपके घर आ सकता है, जिसे सामने देखकर आपको यकीन नहीं होगा, मित्र से कुछ निजी समस्याओं पर बात करके आपको हल्का महसूस होगा। इस राशि के इंजीनियर्स के लिए दिन बढ़िया होने वाला है, आपको अच्छा फायदा होने के योग हैं। साझेदारी में किसी डील को फाइनल करना आपके लिए अच्छा रहेगा और आपके औद्योगिक मामले सुधरेंगे। आज आपके दांपत्य जीवन में सुख समृद्धि बनी रहेगी।

वृष राशिः आज का दिन आपके लिए ठीक-ठाक रहेगा। आज स्पोर्ट्स से जुड़े लोग अपनी ट्रेनिंग में पूरी मेहनत करेंगे। कोरियर का बिज़नेस कर रहे कारोबारियों को आज फायदा होगा। आज विद्यार्थी प्रैक्टिकल को पूरा करने में सीनियर्स की मदद लेंगे। परिवार में सुख संतोष बढ़ेगा, स्वास्थ्य आज पहले से बेहतर रहेगा। नवविवाहित जीवनसाथी आज धार्मिक स्थल पर जाने का विचार करेंगे।

मिथुन राशिः आज का दिन आपके लिए खुशियों से भरा रहने वाला है। आज परिवार में आपकी तारीफ होगी और आपके काम करने की स्किल को सराहना मिलेगी। आज आपके जीवन में कुछ बदलाव आ सकते हैं जो आपके लिए बढ़िया साबित होंगे। आज आपको किसी काम को करने के लिये ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी। जो लोग होटल या रेस्टोरेंट जैसे बिजनेस से जुड़े हैं, उनके लिए आज का दिन पहले से बेहतर रहेगा, आज आपका दिन ज्यादा लाभ कमाने का है। आज आपको जीवन और कार्यक्षेत्र दोनों जगहों पर पिता का सहयोग मिलेगा।

कर्क राशिः आज का दिन आपके लिए अच्छा रहने वाला है। परिवार में आपके अच्छे काम की तारीफ़ होगी। महिलाओं के लिए आज का दिन बेहद ख़ास रहने वाला है। आज आपके पास बिजनेस को आगे बढ़ाने का अच्छा मौका है। कॉम्पटीशन की तैयारी कर रहे छात्र तैयारी जारी रखेंगे। जिस व्यक्ति की आपने कभी मदद की थी वह आज आपके काम आएगा। आपके व्यावसायिक कौशल में तेजी आयेगी और आप एक मजबूत भावना के साथ पेशेवर दौड़ में खुद को आगे पायेंगे।

सिंह राशिः आज का दिन आपके लिए शानदार रहने वाला है। आज अपने बिजनेस को आगे बढ़ाने की नयी योजना बनायेंगे, जिससे आपकी कामयाबी आसमान की बुलंदियों पर होगी। आपकी मुलाकात बचपन के किसी दोस्त से होगी, आपकी पुरानी यादें ताज़ा होंगी। आमोद-प्रमोद में आपका ज्यादा मन लगेगा। अर्थराईटिस की परेशानी से जुड़े लोगों को आज राहत मिलेगी।

कन्या राशिः आज आप अपने दिन की शुरुआत किसी गरीब की मदद करके करेंगे। आज आपके घर में कोई धार्मिक अनुष्ठान होने से घर में भक्ति भावना का माहौल बना रहेगा। पारिवारिक रिश्तों में हो रही गलतफहमियां आज दूर होंगी। स्किन प्रॉब्लम से परेशान लोग आज अच्छे डॉक्टर से सलाह लेंगे। बिजनेस पार्टनर के साथ किसी विदेश की यात्रा का योग बन रहा है। किसी बहुत इम्पोर्टेन्ट पर्सन से मुलाकात होगी।

तुला राशिः आज का दिन आपके लिए सुनहरा रहने वाला है। आज आपके दांपत्य जीवन में मधुरता बनी रहेगी। इस राशि के बिजनेसमैन के लिए आज का दिन रिलैक्स से भरा होगा। आप दोस्तों के साथ ट्रिप पर जाने का प्लान बना सकते हैं। अधिकारियों और निचले वर्ग के लोगों से भी समय-समय पर मदद मिलेगी। आज आपके बिजनेस में तरक्की होगी।

वृश्चिक राशिः आज का दिन आपके लिए ठीक-ठाक रहेगा। आज आपकी शिक्षा में आ रही परेशानी से छुटकारा मिलेगा, आपको ख़ुशी होगी। आज आप किसी मांगलिक कार्यक्रम में बढ़ चढ़कर हिस्सा लेंगे। धार्मिक कार्यों के प्रति आस्था व विश्वास से आगे बढ़ेंगे।

धनु राशिः आज आपका दिन बढ़िया रहेगा। परिवार संग किसी धार्मिक स्थान पर दर्शन के लिए जायेंगे, पारिवारिक प्रेम बढ़ेगा। आज शांत मन से किसी काम को करेंगें तो जल्द ही पूरा हो जाएगा। कोई पारिवारिक निर्णय लेने से पहले घर के बड़े बुजुर्ग की राय जरूर लें। बिजनेसमैन के लिए नया बिजनेस स्टार्ट करने के लिए आज का दिन शुभ है जो आने वाले समय में अधिक फायदा कराएगा।

मकर राशिः आज का दिन आपके लिए उमंग से भरा रहने वाला है। आज किसी काम में आपको ज्यादा मेहनत करनी पड़ सकती है, इसलिए शाम को थकान रहेगी। आज कार्य स्थल पर आपकी मुलाकात ऐसे व्यक्ति से होगी जिससे मिलकर आपको अच्छा लगेगा। आज आप माता जी की इच्छा पूरी करेंगे, माता जी की ख़ुशी देखने लायक होगी। आप अपने कामों पर पूरा फोकस बनाए रखें और आपको एक से अधिक स्त्रोतों से लाभ होने के योग बन रहे हैं।

कुम्भ राशिः आज आपका दिन लकी रहेगा 7 कुछ मामलों में मेहनत ज्यादा रहेगी और नतीजा कम लाभ वाला मिलेगा। ऑफिस में कोई नया काम भी सामने आ सकता है। उस नए काम को बहुत अच्छी तरह करने का प्रयास करेंगे। आज आपको धन लाभ होने के योग बन रहे हैं। किसी खास मित्र से आज आपकी मुलाकात होगी, जिनसे मिलकर आप खुश होंगे।

मीन राशिः आज का दिन आपके लिए बदलाव से भरा हो सकता है। आज आपके जीवन में कुछ बदलाव आ सकते हैं जो आपके लिए बढ़िया साबित होंगे। आज आपको किसी काम को करने के लिये ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी। आज माता-पिता के आशीर्वाद से किये गये कार्यों में आपको सफलता मिलेगी। परिवार को जोड़कर चलने से आपकी भूमिका बड़ी हो जाएगी ,जिससे परिवार में आपका सम्मान बढ़ेगा आपको खुद पर गर्व होगा।

अभिव्यक्ति के अधिकार का कत्ल है कमल कौर की नृशंस हत्या!

मनोज कुमार अग्रवाल

अभिव्यक्ति का हक संविधान प्रदत्त है मानते हैं कि इस में सभी की भावनाओं मान्यताओं का सम्मान होना चाहिए लेकिन क्या कोई स्वयंभू स्वघोषित ईज्जत का रखवाला बनकर किसी महिला की पोस्ट से असहमत होने पर उसका अपने गुर्गों से सरेआम कत्ल कराएगा और कुछ अन्य महिला इंफलुएंसर को हत्या की धमकी देगा? क्या अजीब बात है यह तो तमाम कानून व्यवस्था संविधान लोकतंत्र और अभिव्यक्ति के अधिकार को खुली चुनौती है। हाल ही में एक घटनाक्रम में बंठिंडा की सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर कंचन कुमारी, जिन्हें कमल कौर भाभी के नाम से भी जाना जाता है, की निर्मम हत्या कर दी गई। यह हत्या हमें इस बात की याद दिलाती है कि कथित नैतिकता के नाम पर की जा रही विरोध और असहमति , जो कभी ऑनलाइन ट्रोलिंग तक सीमित थी, अब हिंसक आपराधिक गुंडई और आतंकवाद में बदल गई है। इस सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर की हत्या को अंजाम देने वाला कथित मास्टरमाइंड अमृतपाल सिंह मेहरों, कथित तौर पर कौम दे राखे नामक एक कट्टरपंथी समूह का प्रमुख बताया जाता है। जिसने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर इस सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर द्वारा प्रसारित की गई सामग्री को कथित तौर पर अनैतिक कृत्य के रूप में दर्शाते हुए हत्या को सही ठहराने का प्रयास किया है। इतना ही नहीं, हत्याकांड के बाद संयुक्त अरब अमीरात भागने के बाद हत्या को सही ठहराते हुए, एक वीडियो को जारी करना, संकीर्ण मानसिकता का दुस्साहस ही दर्शाता है। निस्संदेह, यह मामला संकीर्णता के पोषक और कट्टरपंथी तत्वों की सोच से अलग नहीं है। यह उस दुराग्रही सोच की कड़ी का ही हिस्सा है, जो हिंसा और धमकियों के माध्यम से महिलाओं की अभिव्यक्ति पर सोशल पुलिसिंग के जरिये शिकंजा कसने की कोशिश में रहती है।आपको याद रहे कि 28 जून 2022 को राजस्थान के उदयपुर में एक हिन्दू टेलर कन्हैयालाल तेली की हत्या भारतीय जनता पार्टी की प्रवक्ता नूपुर शर्मा के समर्थन में एक सोशल मीडिया पोस्ट साझा करने के लिए की गई थी , जिनकी टिप्पणियों के कारण 2022 में मुहम्मद पैगम्बर को लेकर की गई टिप्पणी पर विवाद हुआ था । हमलावरों ने कन्हैया लाल की दुकान में घुसकर उसे मारने से पहले ग्राहक बनकर प्रवेश किया। उसकी नृशंसता से हत्या की इस हत्या के वीडियो बना कर इंटरनेट पर पोस्ट किए गए थे, जिसमें दो कथित हमलावर कसाई के चाकू पकड़े हुए थे और हत्या की ज़िम्मेदारी लेते हुए खुद की पहचान मुहम्मद रियाज़ अत्तारी और मुहम्मद गौस के रूप में कर रहे थे। शर्मनाक बात यह है कि दो मुख्य आरोपियों को हाइकोर्ट से जमानत पर रिहा कर दिया गया। अब कमल कौर की हत्या भी कन्हैया लाल कांड की पुनरावृत्ति है। आए दिन देश के विभिन्न हिस्सों में अलग-अलग कट्टरपंथी अपराधी व आतंकी समूहों द्वारा धर्म या पंथ या संस्कृति और नैतिकता के रखवाले बनकर ऐसे कृत्यों को अंजाम दिया जाता रहा है। पिछले दिनों बेंगलुरू में भी एक महिला सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर को केवल उसके पहनावे को अभद्र बताते हुए एसिड हमले की धमकी दी गई। इस धमकी भरे वीडियो के वायरल होने के बाद उस व्यक्ति को उसके नियोक्ता ने नौकरी से निकाल दिया। यह विडंबना ही है कि कभी ऐसे मामले पाकिस्तान व अफगानिस्तान में महिला सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसरों को लेकर सामने आते थे। अब भारत में कथित सांस्कृतिक धार्मिक शुचिता व नैतिकता के नाम पर ऐसे हमले किए जा रहे हैं। एक अन्य खतरनाक घटना में, एक लोकप्रिय यूट्यूब शो में दिखाई देने वाली एक डिजिटल निर्माता अपूर्वा मुखीजा को बलात्कार और जान से मारने की ऑनलाइन धमकी दी गई। इस पर राष्ट्रीय महिला आयोग ने दस्तक्षेप करते हुए कड़ी कार्रवाई की मांग की। निस्संदेह, इन लोगों का रवैया बता रहा है कि इस तरह की वारदातों के पीछे एक तय अजेंडा काम कर रहा है जिसका लक्ष्य कथित नैतिकता के संरक्षण के नाम पर हिंसा कर आतंक की नई फसल को तैयार करना है । सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसरों, विशेष महिलाओं को कथित सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण के नाम पर तेजी से निशाना बनाया जा रहा है। सवाल उठता है कि उनके इन मूल्यों को कौन परिभाषित करता है और किसने उन्हें इस सतर्कता को लागू करने का अधिकार दिया बठिंडा की दुर्भाग्यपूर्ण घटना की पंजाब महिला आयोग ने निंदा करके सही कदम उठाया है, लेकिन केवल आधिकारिक निंदा पर्याप्त नहीं है। कानून प्रवर्तन एजेंसियों को ऐसे मामलों को सुनियोजित अपराधों के रूप में दर्ज करना चाहिए, जो हमारे सामाजिक ताने-बाने को खतरा पहुंचाते हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों को भी इस दिशा में जिम्मेदारी उठानी चाहिए कि वे समय रहते सोशल मीडिया के दुरुपयोग रोकें व घृणास्पद सामग्री को अपने प्लेटफॉर्म से हटाएं। साथ ही सोशल मीडिया का दुरुपयोग करने वाले तत्वों पर कड़ी नजर रखें। किसी भी लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की आजादी एक अपरिहार्य अंग है। निश्चित रूप से अभिव्यक्ति की आजादी की अपनी सीमाएं भी हैं। हालांकि, यह आजादी आलोचना से प्रतिरक्षा नहीं देती, लेकिन यदि आलोचना किसी की मर्यादा को नुकसान पहुंचाने या हत्या की धमकी में तब्दील होने लगे, तो शासन-प्रशासन को सख्त संदेश देना चाहिए। खासकर डिजिटल सतर्कता बढ़ाने की जरूरत है। विशेषकर जब डिजिटल निगरानी शारीरिक हिंसा में बदलने लगे। जिसे किसी कीमत पर सहन नहीं किया जाना चाहिए। यदि ऐसे मामलों में अभी से सख्ती न दिखाई गई तो समाज में ऐसी हिंसक कार्रवाई की घटनाओं को थामना मुश्किल हो। आपको बता दें कि अब पंजाब के बहुचर्चित कमल कौर उर्फ कंचन कुमारी हत्याकांड में नया मोड़ सामने आया है. इस मामले के मुख्य आरोपी और कथित मास्टरमाइंड अमृतपाल सिंह मेहरो के समर्थन में पोस्टर लगाए गए हैं, जिनमें उसे 'इज्ज़त का राखा' बताया गया है. ये पोस्टर लुधियाना-मालेरकोटला रोड स्थित प्रसिद्ध गुरुद्वारा आलमगीर साहिब के पास देखे गए, जिनकी तस्वीरें अब सोशल मीडिया पर तेजी से वायरल हो रही हैं.पोस्टरों में अमृतपाल सिंह मेहरो को एक धार्मिक व्यक्ति के रूप में पेश किया गया है और उसके खिलाफ चल रही जांच को साजिश बताया गया है. पोस्टर में लिखा गया है कि 'महिरो ने जो किया वह इज्ज़त की रक्षा के लिए किया', जो जांच एजेंसियों और पुलिस के लिए चिंता का विषय बन गया है. अब पोस्टर सामने आने के बाद पुलिस को शक है कि आरोपी को बचाने या उसके पक्ष में माहौल बनाने की कोशिश की जा रही है. पुलिस का कहना है कि इस घटनाक्रम पर नजर रखी जा रही है और जिन लोगों ने ये पोस्टर लगाए हैं, उनकी पहचान कर कार्रवाई की जाएगी। वहीं, अमृतसर की सोशल मीडिया इंफ्लुएंसर दीपिका लूथरा को जान से मारने की धमकी देने के मामले में पुलिस ने पटियाला से रमनदीप सिंह नाम के व्यक्ति को गिरफ्तार किया है। आतंकी संगठन बब्बर खालसा और निहंग अमृतपाल सिंह मेहरो और उसके साथियों की तरफ से दीपिका को लगातार धमकियां मिल रही हैं। साबइर थाना पुलिस अमृतपाल सिंह मेहरो और उसके दो साथियों के खिलाफ केस दर्ज कर चुकी है और दीपिका को सुरक्षा के लिए दो गनमैन मुहैया करवा दिए गए हैं। सवाल यह है कि देश कानून से चलेगा या अपराधिक आतंकी मानसिकता वाले लोग समानांतर खौफ और आतंक का माहौल बना कर लोगों को निशाना बनाएंगे और दहशत का राज कायम करेंगे। क्या अमृत पाल मैहरों जैसे लोग नया भिंडरावाला बनने की फिराक में है? ऐसे लोग समाज में भय और दहशत फैलाने के लिए एक रील बनाने वाली निहत्थी युवती का कत्ल करने कराने में भी गर्व और गौरव समझते हैं। ऐसे असामाजिक आतंकी तत्वों के जितना जल्दी हो सके कानून की नकेल डालकर नियंत्रित करना चाहिए वरना यह समाज के लिए नए नासूर बनेंगे। यहां यह भी बता दें कि इस तरह के मामलों में पुलिस की कमजोर विवेचना और लोक अभियोजकों की कमजोर पैरवी के चलते कन्हैयालाल तेली जैसे नृशंस हत्याकांड के दो प्रमुख आरोपी को हाइकोर्ट से जमानत मिल जाती है यही वजह है कि हत्यारों के भीतर कानून का कोई भय नहीं रह पाता है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। **–वाल्तेयर**

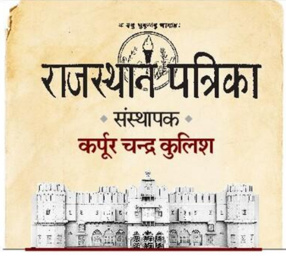

सबको याद रखने होंगे आपातकाल के सबक

देश में आपातकाल लागू होने के पचास बरस पूरे हो गए हैं। आपातकाल के उस दौर को लोग आज भी याद इसलिए करते हैं क्योंकि तब नागरिकों को उनके मूल अधिकारों से वंचित करने के साथ-साथ अभिव्यक्ति की आजादी पर सबसे ज्यादा प्रहार हुआ। अखबारों पर सेंसरशिप तो थोपी ही गई सत्ता के खिलाफ आवाज उठाने वालों को जेल में डाल दिया गया था। सत्ता में बने रहने के लिए संविधान के प्रावधानों की मनमानी व्याख्या व दुरुपयोग का यह ऐसा उदाहरण था, जिसने देशभर में लोगों को आंदोलित कर दिया। आपातकाल के उस दौर को काले अध्याय के रूप में याद किया जाता है। जब आपातकाल खत्म हुआ तो सत्ता परिवर्तन के जरिए जनआक्रोश भी सामने आया।

अब पचास बरस बाद काफी-कुछ बदलाव आ चुका है। आपातकाल का दुरुपयोग नहीं हो सके इसलिए जरूरी संविधान संशोधन भी किए गए हैं। वहीं सुप्रीम कोर्ट ने आपातकाल की घोषणा को न्यायिक समीक्षा के दायरे में रखते हुए लोकतंत्र की मजबूती की दिशा में अहम कदम उठाए हैं। जनता भी इस दौरान अपने अधिकारों को लेकर जागरूक हुई है। आपातकाल से सबसे बड़ा जो सबक मिला, वह यह है कि लोकतंत्र की मजबूती और लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षा के लिए स्वतंत्र प्रेस, मजबूत न्यायपालिका और जागरूक नागरिकों की अहम भूमिका रहती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आपातकाल के बाद के दौर में भारत का लोकतंत्र दिनोंदिन परिपक्व हुआ है। लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए हैं। वहीं सरकारों में भी दायित्वबोध बढ़ा है। लेकिन चुनौतियां सरकार और समाज दोनों के सामने कम नहीं है। नागरिकों को अपने अधिकारों की पालना के साथ सतर्क रहना चाहिए, यह बात सही है लेकिन अपने दायित्वों को भी समझना होगा। आपातकाल का भी सबसे बड़ा सबक यही है कि लोकतंत्र की रक्षा हर नागरिक का कर्तव्य हो। ऐसे में अभिव्यक्ति की आजादी स्वच्छंदता में नहीं बदलने लगे, इस बात पर विशेष ध्यान देना होगा। खासतौर से तब, जब डिजिटल माध्यमों के जरिए हमें अभिव्यक्ति का नया हथियार मिला हुआ है। जिस तरह से लोग अपने हक के लिए आवाज उठाते हुए मजबूती से बात कहने लगे हैं, उससे यह भी लगता है कि पचास बरस पहले के मुकाबले जनता अधिक जागरूक हो गई है।

आपातकाल और उसके बाद सत्ता में बदलाव ने साफ कर दिया था कि सरकारी तंत्र के माध्यम से किसी भी स्तर की ज्यादतियों को बर्दाश्त करने की एक सीमा ही हो सकती है। आज के दौर में भी सत्ता में चाहे कोई भी हो, उसे इस बात का ध्यान रखना होगा कि आपातकाल जैसा माहौल फिर से नहीं बन पाए। वहीं जनता को भी इस बात का खासतौर से ध्यान रखना होगा कि नागरिक अधिकारों के साथ-साथ वह अपने कर्तव्यों की पालना भी जिम्मेदारी के भाव से करे। सबको ही आपातकाल के सबक याद रखने होंगे।

आपातकाल के 50 वर्ष सत्ता की बौखलाहट और जनता की जीत की कहानी

जब बंधक बना भारत का संविधान

आपातकाल भारतीय लोकतंत्र के इतिहास का वह अध्याय है, जो आज भी हमें चेतावनी देता है कि सत्ता जब निरंकुश होती है, तो नागरिक अधिकारों और संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता कैसे खतरे में पड़ सकती है। आज, जब उस निर्णय को 50 वर्ष हो गए हैं, हमें न केवल उस दौर की घटनाओं को याद करना चाहिए, बल्कि यह भी सोचना चाहिए कि हमने उस संकट से क्या सीखा, जब संविधान बंधक बन गया था। हालांकि अंधेरे के उस दौर में भी सत्य को आवाज मिली। कलम झुकी नहीं और जनता ने भी सत्ता पलटकर स्पष्ट संदेश दिया कि भारत में लोकतंत्र केवल संविधान की किताब में नहीं, बल्कि लोगों की चेतना में बसता है। यह चिंतन का समय है और जागरूकता का भी।

अखबार के माध्यम से उभरता रहा दृष्टिकोण

देश में आपातकाल के दौर को पत्रिका के संस्थापक श्रद्धेय कर्पूर चन्द्र कुलिश जी के संस्मरणों से समझा जा सकता है...

सन् 1975 जब श्रीमती इंदिरा गांधी का चुनाव इलाहाबाद हाईकोर्ट के एक फैसले में निरस्त कर दिया गया था तभी मुझे आने वाली विकट परिस्थितियों का पूर्वाभास-सा होने लगा था। मैंने अदालत के इस निर्णय का सम्मान करते हुए मुख पृष्ठ पर कई संपादकीय छापे। अलग-अलग पहलुओं को आधार बनाकर टिप्पणियां लिखीं। लेख लिखे। मेरा दृष्टिकोण यह था कि श्रीमती गांधी को न्यायपालिका पर आस्था प्रकट करते हुए सम्मान के साथ प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र दे देना चाहिए। श्रीमती गांधी के समर्थन में और अदालत के फैसले के विरोध में उस समय जो पूर्व नियोजित जुलूस और प्रदर्शन आयोजित हो रहे थे, वह स्वस्थ राजनीति का प्रतीक नहीं थे। मेरा यह दृष्टिकोण अखबार के माध्यम से उभरता रहा।

आपातकाल लागू होने की यों लगी खबर

हुआ वही, जिसका मैं पूर्वानुमान कर चुका था। मैं लाडनूं अपनी भानजी की शादी पर भात भरने गया था। जयपुर लौटते वक्त रास्ते में पता चला की देश में आपातकाल की घोषणा हो चुकी है। विपक्ष के बड़े-बड़े नेता गिरफ्तार कर लिए गए हैं। मेरी आतुरता बेहद बढ़ गई। इधर-उधर की बातों से पूर्ण ज्ञान नहीं हो रहा था इसलिए मैं सीधा ही बिना कहीं रुके जयपुर आ गया।

अखबारों पर भी सेंसरशिप लागू

जयपुर पहुंचकर ज्ञात हुआ कि अखबारों पर सेंसरशिप लागू हो गई है। प्रदेश के कई बड़े नेता गिरफ्तार हो चुके हैं। कई नेता भूमिगत हो चुके हैं। मुझे भी निकट सूत्रों से मेरी गिरफ्तारी के संकेत मिले। साथ ही भूमिगत होने की सलाह भी। श्रीमती इंदिरा गांधी के विरुद्ध अदालत के फैसले पर मेरे लेखों के कारण मुझ पर शासन विरोधी होने का ठप्पा तो लग ही चुका था। खैर.... मैं सहज रूप से पूरे दिन 'पत्रिका' कार्यालय में ही अखबार का दैनिक कामकाज करता रहा। सेंसरशिप की व्यवस्था तय हुई कि अखबार का पृष्ठ तैयार होकर सेंसर अधिकारी के पास अनुमोदन के लिए जाएगा। जो भी संशोधन या आपत्ति वह करेगा उसे संशोधत और समायोजित करने के बाद ही अखबार छपेगा।

राजस्थान भ्रमण का संकल्प

दो-तीन महीने तो लगातार तनाव के वातावरण में, नियमित दिनचर्या में, बंधे-बंधाए क्रम और माहौल में मेरा वक्त गुजरता गया। मैंने महसूस किया कि सेंसरशिप भी सख्ती और कठोरता की तहों से निकलकर अब सामान्य दिनचर्या या प्रक्रिया का अंग बनती जा रही है। पाठक भी लीक से हटकर कुछ नयापन तलाश रहे हैं। निश्चय कहूं या मन में संकल्प उठा कि क्यूं न इस वक्त का सदुपयोग करते हुए मैं राजस्थान के समग्र दौरे पर निकल जाऊं। बस मन में एक विचार जागा कि पाठकों को भी पढ़ने के लिए नई सामग्री मिलेगी और मैं भी अपने पाठकों से और गांवों से नजदीक से परिचित हो जाऊंगा। बस तुरंत अपनी 1972 मॉडल की एक 'फोर्ड फाल्कन' गाड़ी खुद ही चलाता हुआ राजस्थान के दौरे पर निकल पड़ा। एक-एक जिले में पांच-पांच, सात-सात दिन तक घूमता रहा। नित्य रिपोर्ट लिखकर सारा वृत्तांत अखबार में छपने के लिए भेज देता जो साथ-साथ 'पत्रिका' में छपता रहता। *('धाराप्रवाह' से)*

(आपातकाल लागू होने के पूर्व तक कुलिश जी के पत्रिका में लगातार प्रकाशित अग्रलेखों के अंश कल पढ़ें कुलिश जी के साप्ताहिक सृजन संसार में)

आपातकाल (1975-77) का कालक्रम

12 जून 1975 इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा ***इंदिरा गांधी का चुनाव रद्द।*** जस्टिस जगमोहन लाल सिन्हा ने ***इंदिरा गांधी को चुनावी भ्रष्टाचार का दोषी ठहराया और 6 साल तक चुनाव लड़ने पर लगाई रोक।***

25 जून 1975 (रात) ***आपातकाल की घोषणा।*** इंदिरा गांधी की सिफारिश पर राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद ने ***अनुच्छेद 352 के अंतर्गत देश में लागू किया आपातकाल। रात को दिल्ली में प्रेस क्षेत्र की काटी गई बिजली।***

26 जून 1975 (सुबह) देशवासियों को मिली आपातकाल की जानकारी ऑल इंडिया रेडियो से। ***प्रेस पर सख्त सेंसरशिप लागू। विपक्षी नेताओं की गिरफ्तारियां शुरू।***

04 जुलाई 1975 ***राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर लगाया प्रतिबंध।*** संघ के स्वयंसेवकों ने भूमिगत रहकर जारी रखा आंदोलन।

1975-76 दमन व्यापक स्तर पर ***विपक्षी नेताओं जैसे जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी समेत हजारों गिरफ्तार।*** प्रेस, न्यायपालिका और संसद की शक्तियों पर अंकुश।

अप्रेल 1976 ***जबरन नसबंदी और झुग्गी हटाने के विरोध में दिल्ली के तुर्कमान गेट पर हिंसा, कई लोगों की मौत।***

18 अक्टूबर 1976 ***मुजफ्फरनगर में किया गया नसबंदी विरोध प्रदर्शन,*** सैंकड़ों लोगों ने घेरा पुलिस स्टेशन को। प्रदर्शन में कई लोगों की मौत।

जनवरी 1977 इंदिरा गांधी ने चुनाव कराने की घोषणा की। विपक्ष को मिला एकजुट होकर चुनाव लड़ने का अवसर।

30 जनवरी 1977 चंद्रशेखर और जयप्रकाश नारायण की बड़ी जनसभाएं। विपक्षी लहर तेज हुई।

21 मार्च 1977 मतगणना में कांग्रेस की भारी हार। रायबरेली से इंदिरा गांधी और अमेठी से संजय गांधी भी हारे। आपातकाल आधिकारिक रूप से हुआ समाप्त।

प्रमुख घटनाएं और प्रभाव

- **लोकतंत्र का दमन:** प्रेस की स्वतंत्रता छीनी गई, न्यायपालिका की शक्तियां सीमित की गईं।
- **जन आंदोलन:** सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन, आरएसएस व अन्य संगठनों द्वारा भूमिगत विरोध।
- **नसबंदी अभियान:** विशेष रूप से गरीब वर्ग के लोगों को निशाना बनाया गया।
- **राजनीतिक गिरफ्तारी:** विपक्ष के नेताओं की गिरफ्तारियां की गईं।
- **जनता पार्टी का उदय:** विपक्ष एकजुट हुआ और 1977 में सत्ता में आया।

हालात बयां करतीं तस्वीरें

आपातकाल के दौरान पत्रकारों ने तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के समक्ष विरोध भी जताया था।

अदालत के फैसले के बाद इंदिरा गांधी के इस्तीफे के विकल्प पर उनके पुत्र संजय गांधी सहमत नहीं थे।

आपातकाल की घोषणा के बाद रामलीला मैदान में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में रैली आयोजित की गई।

आपातकाल के दौरान लालू यादव, शरद यादव व रामविलास पासवान।

आपातकाल के दौरान दिल्ली में तुर्कमान गेट पर तोड़फोड़ का जनता ने जताया था विरोध।

मोरारजी देसाई व अटल बिहारी वाजपेयी अन्य नेताओं के साथ।

जॉर्ज फर्नान्डिस गिरफ्तारी के दौरान हाथों में हथकड़ी दिखाते हुए।

याद से भी ज्यादा जरूरी है आपातकाल से सबक सीखना

राज कुमार सिंह
वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तंभकार
@patrika.com

भारतीय लोकतंत्र का काला अध्याय रहे आपातकाल की घोषणा को 50 साल होने पर 'संविधान हत्या दिवस' मनाया जा रहा है। संविधान प्रदत्त नागरिक अधिकारों समेत कमोबेश लोकतंत्र को ही स्थगित कर देने वाला आपातकाल दरअसल लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में भी पनप सकने वाली सत्ता-लोलुपता और राजनीतिक विकृतियों की ही देन था। इसलिए उसे याद रखना जरूरी है- पर उससे सही सबक सीखना विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के सुरक्षित भविष्य के लिए और भी ज्यादा जरूरी है।

इन 50 सालों में दो नई पीढ़ियां आ गई हैं, जिन्हें आपातकाल की बाबत उतना ही पता है, जितना राजनीतिक दलों ने अपने-अपने एजेंडा के तहत उन्हें बताया है। पहला जरूरी सबक तो उन परिस्थितियों से ही सीखना चाहिए, जिनके चलते 1971 में पृथक बांग्लादेश बनवाने वाली प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने ही 1975 में भारत पर आपातकाल थोप दिया। आपातकाल का जन्म लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित प्रधानमंत्री की ही लोकतंत्र में घटती आस्था और बढ़ती सत्ता लोलुपता से पनपते वंशवाद से हुआ था। बेहद लोकप्रिय राजनेता और सख्त प्रशासक रहीं इंदिरा को सत्ता और पुत्र के मोह ने ही तानाशाह बनने को प्रेरित किया था, पर विडंबना देखिए कि दूसरी आजादी के जरिये बनी सरकार आपातकाल जितने समय ही चल पाई। सत्ता-संघर्ष में उलझे जनता पार्टी के क्षत्रपों ने भी बीमार जेपी की एक नहीं सुनीं। दरअसल सत्ता लोलुपता और वंशवादी सोच मूलतः अलोकतांत्रिक और असंवैधानिक हैं, पर हमारे राजनेता इसे समझने को तैयार नहीं।

विस्तार से पढ़ने के लिए **क्यूआर कोड स्कैन करें**

सेंसरशिप के दौरान... आपातकाल में लोकतंत्र के प्रहरी के रूप में 'पत्रिका' बना जनता की आवाज

जब देश पर आपातकाल थोपा गया, तब प्रेस की आजादी पर सबसे पहला प्रहार हुआ। ऐसे में राजस्थान पत्रिका ने सेंसरशिप के दौरान उन खबरों को प्रकाशित किया, जिससे जनता में जागरूकता बढ़े। लोकतंत्र के प्रहरी के रूप में सच्चाई को रिपोर्ट किया और जनता की आवाज को जगह दी। लोकतंत्र के मूल्यों की रक्षा को प्राथमिकता दी। आज भी उस दौर की कटिंग्स और रिपोर्ट्स राजस्थान पत्रिका के जिंदा दस्तावेज के रूप में एक ऐसी मिसाल हैं, जो आने वाली पीढ़ियों को सच कहने का हौसला देती है।

इंदिरा गांधी का चुनाव अवैध
छह साल चुनाव के लिए अयोग्य करार

इंदिरा गांधी का चुनाव अवैध

12 जून 1975 भारतीय लोकतंत्र के इतिहास का वो दिन... इलाहाबाद हाईकोर्ट के फैसले ने इंदिरा गांधी की गद्दी को हिला दिया। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने चुनाव में गड़बड़ी के आरोप में उनकी लोकसभा सदस्यता रद्द कर दी।

राजस्थान पत्रिका, 12 जून 1975 (मुख्य पृष्ठ)

देश में आपात स्थिति की घोषणा
हर कीमत पर राष्ट्र की एकता व स्थायित्व की रक्षा

देश में आपात स्थिति की घोषणा

फैसला बना आपातकाल की नींव... पहले हाईकोर्ट फिर सुप्रीम कोर्ट ने भी इंदिरा गांधी को चुनाव राहत नहीं दी। इसके बाद देश में राजनीतिक अस्थिरता बढ़ी। 25 जून 1975 की रात देश में आपातकाल लागू कर दिया गया।

राजस्थान पत्रिका, 27 जून 1975 (मुख्य पृष्ठ)

इन्दिरा परास्त
उत्तरी राज्यों में कांग्रेस का सफाया

इन्दिरा परास्त

आपातकाल के 21 महीने बाद...जब चुनाव हुए, तो कांग्रेस को हार मिली। राजस्थान पत्रिका ने प्रकाशित किया- इंदिरा परास्त, उत्तरी राज्यों में कांग्रेस का सफाया।

राजस्थान पत्रिका, 21 मार्च 1977 (मुख्य पृष्ठ)

अंधकारमय दौर में भी जनमानस ने नहीं मानी थी हार

घनश्याम तिवाड़ी
राज्यसभा सदस्य
@patrika.com

यह केवल स्मृति नहीं, चेतावनी भी है। यह दिन हमें स्मरण कराता है कि सत्ता का अहंकार जब संविधान के ऊपर चढ़ने लगे, तो देश को सजग रहना होता है।

पच्चीस जून 1975 की रात लगाया गया आपातकाल केवल कागजों पर नहीं था, यह भारत के लोकतांत्रिक ढांचे पर सीधा प्रहार था। इस आपातकाल की पृष्ठभूमि में राजनीतिक सत्ता की चिढ़ और न्यायिक फैसले को लेकर असहजता थी।

इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के निर्वाचन को अवैध ठहराए जाने के बाद लोकतंत्र की मर्यादा निभाने के बजाय सत्ता में बने रहने के लिए संविधान की गरिमा को ताक पर रख दिया गया। इस दौरान प्रेस पर सेंसरशिप लागू कर समाचार पत्रों की स्वतंत्रता छीन ली गई। नेताओं और पत्रकारों को जेलों में ठूंसा गया। नागरिकों के अधिकांश मौलिक अधिकार निलंबित कर दिए गए। इतना ही नहीं, न्यायपालिका तक को शक्तिहीन बनाने के प्रयास किए गए। संविधान के 42वें संशोधन के माध्यम से न केवल संविधान की प्रस्तावना में 'समाजवादी' और 'धर्मनिरपेक्ष' जैसे शब्द जोड़े गए, बल्कि कार्यपालिका को असीमित शक्तियां प्रदान कर दी गईं। आपातकाल के विरोध में उठने वाली हर आवाज को बेरहमी से कुचला गया। उन दिनों जनसंघ के युवा संघ का उत्तरदायित्व मेरे पास था। मैं वकालत भी कर रहा था। मुझे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से प्रतिबंध हटाने का पक्षधर होने और डीआइआर एक्ट में गिरफ्तार कर जयपुर सेंट्रल जेल भेजा गया। जब मेरे केस की सुनवाई हुई तो मैंने कहा कि मैंने कोई राष्ट्र विरोधी गतिविधि नहीं की है। जब प्रतिबंध लगाने की आवाज उठाना अपराध नहीं है तो प्रतिबंध हटाने की आवाज उठाना भी अपराध नहीं है। मेरी पैरवी पर जज ने मुझे डिस्चार्ज कर दिया।

एक बार मैं कुछ बाल व किशोर स्वयंसेवकों को जेल में डाले जाने तथा कठोर प्रताड़ना की सूचना पर उनकी पैरवी करने झुंझुनूं पहुंचा। कोर्ट में बहस के दौरान मेडिकल जांच की मांग करने पर वहां उपस्थित पुलिस उप अधीक्षक आग बबूला होकर मुझे न्यायाधीश के समक्ष ही घसीट कर कोर्ट से बाहर ले गए। मुझे पुलिस ने कठोर यातनाएं दी और मेरे बाल नोच लिए गए। मरा हुआ समझकर अर्धबेहोशी की हालत में मुझे लोहारू-सीकर के बीच चलने वाली ट्रेन की बोगी में फेंक कर चले गए। बाद में ब्यावर में भूमिगत रहते हुए काम किया। आपातकाल का दौर यह केवल एक राजनीतिक संकट ही नहीं था बल्कि भारत की लोकतांत्रिक चेतना की परीक्षा थी। लेकिन इस अंधकारमय दौर में भी जनमानस ने हार नहीं मानी। वर्षों तक अन्याय सहने के बाद जब 1977 में चुनाव हुए, तब जनता ने स्पष्ट संदेश देकर लोकतंत्र को कुचलने वालों को सत्ता से बाहर का रास्ता दिखा दिया। आज जब हम 25 जून को याद करते हैं, तो यह केवल एक स्मृति नहीं है, यह चेतावनी भी है। यह दिन हमें स्मरण कराता है कि सत्ता का अहंकार जब संविधान के ऊपर चढ़ने लगे, तो देश को सजग रहना होता है। लोकतंत्र केवल मत देने का अधिकार नहीं, यह विचार, आलोचना और असहमति व्यक्त करने का अधिकार भी है।

रैलियों में गूंज: सिंहासन खाली करो कि जनता आती है...

जसबीर सिंह
पूर्व अध्यक्ष,
राजस्थान अल्पसंख्यक आयोग

तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के आदेश पर 25 जून 1975 को देश में लगाया गया आपातकाल एक ऐसी घटना थी जब संविधान की समस्त मर्यादाओं का खुला उल्लंघन किया गया। देश के जनमानस में उस समय व्याप्त निराशा को देखकर कवि दुष्यंत कुमार ने कहा भी 'कैसे मंजर सामने आने लगे हैं, गाते-गाते लोग चिल्लाने लगे हैं। अरे अब तो इस तालाब का पानी बदल दो, ये कमल के फूल कुम्हालने लगे हैं।' जयप्रकाश नारायण ने देश में कई रैलियों को संबोधित किया। इन रैलियों में वह उद्‌घोष लगाते थे 'सिंहासन खाली करो, कि जनता आती है।' उस समय के इस बर्बर व स्वछंद शासन के विरुद्ध नारा लगता था 'तानाशाही तेरे तीन दलाल- शुक्ला, मेहता, बंसीलाल'। इशारा विद्याचरण शुक्ला सूचना प्रसारण मंत्री, ओम मेहता गृहराज्य मंत्री व बंसीलाल रक्षा मंत्री की तरफ होता था।

विस्तार से पढ़ने के लिए **क्यूआर कोड स्कैन करें**

आत्मरक्षा न केवल हमारा अधिकार है, बल्कि यह हमारा कर्तव्य भी है। -रोनाल्ड रीगन

ट्रंप ने अलसुबह जब ईरान-इस्राइल के बीच सीजफायर की घोषणा की, तब उम्मीदें जरूर बंधने लगी थीं, लेकिन जैसा कि उनकी घोषणाओं के साथ होता है, दोपहर बाद से ही आने लगीं युद्ध विराम के उल्लंघन की खबरों ने समग्र पश्चिम एशिया में संकट के बादल फिर से गहरा दिए हैं।

ट्रंप के सीजफायर

ऐसे वक्त में, जब पूरी दुनिया तीसरे विश्वयुद्ध के मुहाने पर खड़ी दिख रही थी, तब अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारत-पाकिस्तान की तर्ज पर एकाएक अलसुबह ईरान-इस्राइल के बीच जिस सीजफायर की घोषणा कर सभी को एक बार फिर चौंका दिया था, दोपहर बाद से ही दोनों पक्षों की तरफ से उसके उल्लंघन की खबरें भी आने लगीं। उल्लेखनीय है कि संघर्ष के बारहवें दिन ट्रंप के सीजफायर के एलान के कुछ ही घंटों बाद ईरान ने इस्राइल पर मिसाइलें दागी थीं, जिसके जवाब में उसने भी हमले किए। कुल मिलाकर देखें, तो फिलहाल पूरा परिदृश्य ही अस्थिर दिख रहा है। जहां तक बात ट्रंप के एकाएक सीजफायर की घोषणा की है, तो ऑपरेशन सिंदूर के समय में भी ट्रंप ने भारत और पाकिस्तान के बीच सीजफायर के आधिकारिक एलान से पहले ही दावा कर दिया था कि उन्होंने मध्यस्थता करके दोनों देशों को इसके लिए सहमत कर लिया है, हालांकि, भारत ने तुरंत ही मध्यस्थता का खंडन किया था। जब स्थितियां ईरान-इस्राइल जैसी हो गई हों, तब सीजफायर हर कोई चाहता है, लेकिन ऐसी गंभीर घोषणाएं, ट्रंप जिस सनसनीखेज अंदाज में करते आए हैं, जिनकी जानकारी खुद उनके अधिकारियों को भी नहीं हो पातीं, वह उनकी शैली को ही दर्शाता है। गौरतलब है कि ट्रंप की ताजा ईरान-इस्राइल के बीच सीजफायर की घोषणा ऐसे समय में हुई है, जब नोबेल शांति पुरस्कार के नामांकन की प्रक्रिया जारी है। ट्रंप पहले ही सर्बिया-कोसोवो, मिस्र-इथियोपिया और पश्चिम एशिया में अब्राहम समझौते जैसी कूटनीतिक पहलों को नोबेल पुरस्कार से जोड़ चुके हैं। इससे यह संकेत भी मिलता है कि ट्रंप अपनी ताजा घोषणा को भी नोबेल के लिए मजबूत दावेदारी के रूप में पेश करना चाहते हों। हालांकि, तथ्य यह है कि नोबेल पुरस्कार तात्कालिक उपलब्धियों के लिए नहीं, बल्कि दीर्घकालिक शांति प्रयासों के लिए दिए जाते हैं और फिर ईरान-इस्राइल संघर्ष विराम के तो कसौटी पर खरा उतरने से पहले ही टूटने की खबरें आने लगी हैं। पश्चिम एशिया का अतीत बताता है कि युद्ध विराम अक्सर नाजुक होते हैं, और उनके टिकने के लिए विश्वास निर्माण और कूटनीतिक प्रयासों की भी जरूरत होती है। ट्रंप का सीजफायर का दावा अगर प्रभावी साबित होता, तो यह निस्संदेह पश्चिम एशिया में शांति की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित होता, पर इस क्षेत्र की जटिल भू-राजनीतिक स्थिति और इतिहास को देखते हुए हैरत नहीं कि सुबह हुई घोषणा शाम तक भी नहीं टिक सकी। ट्रंप के सीजफायर के पीछे भले ही उनकी कूटनीतिक महत्वाकांक्षाएं हों, लेकिन अमेरिकी आह्वान के बावजूद जिस तरह से ईरान और इस्राइल, दोनों ने ही इसका उल्लंघन किया है, उसने पूरे क्षेत्र को अनिश्चय के भंवर में ढकेल दिया है।

इस्राइल इतना आक्रामक यों ही नहीं है

इस्लामी क्रांति के सूत्रधारों ने इस्राइल को कैंसरयुक्त ट्यूमर बताया था, तो खामनेई 2040 तक इस्राइल को मिटा देने का एलान कर चुके हैं। दरअसल इस्राइल के विनाश के प्रति ईरान की वैचारिक प्रतिबद्धता, हमास का हमला और ईरान का रहस्यमयी परमाणु कार्यक्रम विनाश की एक ही कहानी की कड़ियां हैं।

अमोस यादलिन

इस्राइली सैन्य इंटेलिजेंस के पूर्व प्रमुख

चालीस वर्ष पहले इसी जून के महीने में मैं इस्राइली वायु सेना अभियान के उस कॉकपिट में बैठा था, जिसने इराक के ओसिराक परमाणु रिएक्टर को नष्ट कर दिया था। एक साहसिक अभियान में हमने सद्दाम हुसैन की परमाणु महत्वाकांक्षाओं को खत्म कर दिया था। वर्ष 2007 में जब मैं इस्राइल की डिफेंस इंटेलिजेंस का प्रमुख था, तब हमने सीरिया द्वारा उत्तर कोरिया की मदद से यूफ्रेट्स नदी के नजदीक बनाए गए परमाणु रिएक्टर को नेस्तनाबूद कर दिया था। लेकिन आज इस्राइल के सामने और भी बड़ा संकट खड़ा हो गया है।

आज उसे पहले से कहीं अधिक उन्नत, विशाल और विविध ईरानी परमाणु कार्यक्रम का सामना करना पड़ रहा है, जो बेहद सुदृढ़ और कई अधिक जटिल चुनौतियों को भी समेटे हुए है। इन सबके बावजूद एक सफल इस्राइली अभियान न केवल एक गंभीर खतरे को बेअसर करने की ताकत रखता है, बल्कि पश्चिम एशिया के रणनीतिक परिदृश्य को नया आकार देने और क्षेत्र को अत्यधिक सुरक्षित बनाने की भी क्षमता रखता है। इस वक्त इस्राइल और अमेरिका के बीच एक दुर्लभ रणनीतिक सहयोग की संभावना है। पश्चिम एशिया में वर्षों से जो बदला लेने या जैसे को तैसा की भावना रही है, उसे कहीं अधिक प्रगतिवादी दृष्टिकोण में बदला जा सकता है : जो ईरान की घातक महत्वाकांक्षाओं और प्रयासों पर लगाम कसे, गाजा को स्थिर करे और सुरक्षा, एकीकरण और शांतिपूर्ण संबंधों पर आधारित एक नई पश्चिम एशियाई व्यवस्था की नींव भी रख सके।

1979 में इस्लामी क्रांति के बाद से ही ईरानी नेतृत्व ने इस्राइल की बर्बादी को अपनी विचारधारा का मुख्य आधार बना लिया है। क्रांति के संस्थापक अयातुल्ला रूहोल्ला खुमैनी ने इस्राइल को एक 'कैंसरयुक्त ट्यूमर' बताया था, जिसे हटाया जाना बहुत जरूरी है। उनके उत्तराधिकारी अयातुल्ला अली खामनेई ने उसी सिद्धांत को आगे बढ़ाते हुए एलान किया है कि 2040 तक इस्राइल का अस्तित्व मिटा देंगे। दशकों से दुनिया भर के विद्वानों और यहां तक कि सरकारी अधिकारियों ने इन धमकियों को खारिज किया है, लेकिन इस्राइल ने कभी भी ईरान की धमकियों को खोखला नहीं माना और इस बात पर जोर दिया कि वह ईरान के हर शब्द को गंभीरता से ले रहा है।

सात अक्तूबर, 2023 को हमास द्वारा इस्राइल पर किए गए हमले से पता चलता है कि ईरान अपने मुखौटों, मुख्य रूप से हमास और हिजबुल्ला के जरिये इस्राइल को नष्ट करने के अपने दीर्घकालिक दृष्टिकोण को वास्तविकता में बदलने की साजिश रच रहा था। गाजा में जब्त दस्तावेजों से पता चलता है कि हमास को भरोसा था कि उसे ईरान और हिजबुल्ला का समर्थन प्राप्त है, जो एक व्यापक योजना का हिस्सा है: इसलिए उसने इस्राइल को दबाने और नष्ट करने के इरादे से एक बहुपक्षीय आक्रमण किया था। हमास नेता याह्या सिनवार ने संभवतः योजना के उजागर हो जाने के डर से और यह भरोसा करते हुए कि ईरान का संपूर्ण प्रतिरोध समूह शीघ्र ही इसमें शामिल हो जाएगा, समय से पहले ही हमला शुरू कर दिया था। पिछले कुछ दशकों में इस्राइल के विनाश के प्रति ईरान की वैचारिक प्रतिबद्धता, इसके तेजी से बढ़ते सैन्य निर्माण, परमाणु कार्यक्रम के विस्तार और क्षेत्रीय मुखौटों को हथियार मुहैया कराने की प्रवृत्ति ने ईरान को इस्राइल के लिए सबसे बड़ा खतरा बना दिया है।

इस्राइल ने दशकों की खुफिया जानकारी जुटाकर और ईरान के मंसूबों को भांपने के बाद ही 13 जून को ईरान के परमाणु कार्यक्रम और वैज्ञानिकों, सैन्य नेतृत्व, बैलिस्टिक मिसाइलों और उन संगठनों के वरिष्ठ अधिकारियों को निशाना बनाकर हमले शुरू किए, जो इस्राइल पर छद्म हमलों को बढ़ावा देने में मदद करते थे। महज कुछ दिनों में इस्राइल ने ईरानी हवाई क्षेत्र के ज्यादातर हिस्से में परिचालनात्मक स्वतंत्रता हासिल कर ली-एक ऐसी उपलब्धि, जो उसे 1973 में योम किप्पुर युद्ध के चरमोत्कर्ष के दौरान भी अपने दुश्मनों के खिलाफ हासिल नहीं हुई थी। ईरान की सघन हवाई सुरक्षा को निष्प्रभावी करने से इस्राइली वायु सेना को विशेषकर तेहरान और प्रमुख परमाणु एवं मिसाइल स्थलों के आसपास और अन्य सैन्य लक्ष्यों पर बार-बार सटीक हमले करने में मदद मिली। राइजिंग लॉयन नामक यह अभियान ठीक उसी वक्त शुरू किया गया, जब ईरान अपनी परमाणु और मिसाइल क्षमताओं को उस स्तर तक बढ़ा रहा था, जहां उन्हें तत्काल रोकना बेहद मुश्किल और खर्चीला हो जाता।

अमेरिकी खुफिया एजेंसियां और अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के निदेशक स्पष्ट रूप से अनुमान नहीं लगा पाए थे कि ईरान परमाणु हथियार बनाने की दिशा में बढ़ रहा है, लेकिन इस्राइली खुफिया एजेंसियों को इसकी पुख्ता जानकारी लग चुकी थी कि ईरान के यूरेनियम भंडार में तेजी से वृद्धि हो रही है और इसके समानांतर ही वह अपने मिसाइल और ड्रोन शस्त्रागार का काफी विस्तार और बैलिस्टिक परिसंपत्तियों को किलेबंद भूमिगत सुविधाओं में स्थानांतरित करने में तेजी ला रहा था।

लेबनान और गाजा में ईरान के छद्म लड़ाकों को बड़े स्तर पर परास्त करने के बाद ईरान में शुरू किया गया यह अभियान यरुशलम और वाशिंगटन में निर्णयकर्ताओं को सैन्य कार्रवाई को एक व्यापक कूटनीतिक पहल में बदलने का आधार प्रदान करता है, जिसका उद्देश्य ईरान के परमाणु कार्यक्रम को वापस लेने और उसके प्रॉक्सी नेटवर्क को कमजोर करने के साथ ही अमेरिका के क्षेत्रीय भागीदारों के लिए खतरों को कम करना है। हालांकि, अमेरिका ने ईरान के तीन प्रमुख परमाणु केंद्रों पर भारी बम गिराकर उसकी परमाणु हथियार बनाने की महत्वाकांक्षा को लगभग नष्ट कर दिया है।

इस्राइल को अब ईरान और हिजबुल्लाह के खिलाफ अपनी उपलब्धियों को व्यापक रणनीतिक ढांचे में रखना होगा। इस्राइली सरकार को गाजा में युद्ध को समाप्त कर सभी बंधकों की रिहाई सुनिश्चित करनी चाहिए और गाजा पट्टी में एक नए शासन ढांचे के लिए मिस्र-अरब पहल का समर्थन करना चाहिए-जो विसैन्यीकरण के साथ क्रमिक पुनर्निर्माण की शर्त रखती है। एक सुधरी और मजबूत फलस्तीनी अथॉरिटी को अंततः गाजा के शासन में भाग लेने के लिए सशक्त बनाया जाना चाहिए। ऐसा करने से इस्राइल सामान्यीकरण समझौतों और व्यापक क्षेत्रीय एकीकरण को मॉडल के लिए आधार तैयार करेगा। यह उभरता हुआ फ्रेमवर्क चरमपंथी ताकतों के खिलाफ एक स्थायी प्रतिसंतुलन पैदा करेगा और एक अधिक स्थिर, सुरक्षित और संभावनापूर्ण क्षेत्रीय व्यवस्था के द्वार खोलेगा।

©The New York Times 2025

जीवन धारा

फ्रेडरिक नीत्शे

युद्ध का अर्थ है अपने भीतर की गहराइयों से टकराना और खुद को फिर से गढ़ना। हमारा युद्ध आलस्य, भय और आत्म-संदेह के साथ भी है। जो व्यक्ति खुद पर विजय प्राप्त करता है, वही सच्चा योद्धा है।

जीवन युद्ध हमें मारता नहीं, मजबूत बनाता है

जीवन एक युद्धक्षेत्र है। यह युद्ध केवल हथियारों का टकराव नहीं, बल्कि आत्मा का संघर्ष है। जीवन का युद्ध हमें मारता नहीं है, बल्कि वह और मजबूत करता है। जीवन की हर चुनौती, हर युद्ध हमें निखारता है। जीवन एक निरंतर संघर्ष है, जहां हमें अपनी इच्छाओं, भय और कमजोरियों से लड़ना पड़ता है। हमें अपने भीतर की अराजकता को गले लगाना होगा, क्योंकि उस अराजकता से ही एक नया तारा जन्म लेता है। हमें सक्रिय रूप से विरोधी दृष्टिकोणों से जुड़ना चाहिए तथा जोश और दृढ़ विश्वास के साथ अपने स्वयं के विश्वासों का बचाव करना चाहिए। जहां ईमानदारी और दृढ़ विश्वास सर्वोपरि हो। हमें अपनी राय के लिए युद्ध लड़ना चाहिए। जब आपकी राय हार जाती है, तब भी हमारी ईमानदारी को उस पर विजय का नारा लगाना चाहिए।

जीवन में युद्ध का अर्थ है अपने भीतर की गहराइयों से टकराना, अपनी सीमाओं को तोड़ना, और खुद को फिर से गढ़ना। हमारा युद्ध आलस्य, भय और आत्म-संदेह के साथ भी है। जो व्यक्ति अपने आप पर विजय प्राप्त करता है, वही सच्चा योद्धा है। हमें अपने मन की कमजोरियों को परास्त करना होगा। यह युद्ध हमें कमजोर नहीं, बल्कि एक उत्कृष्ट मानव बनाता है, जो अपनी मर्जी से जीवन का अर्थ रचता है। मैं बहुत से सैनिकों को देखता हूं और सोचता हूं कि काश बहुत से योद्धाओं को देख पाता।

मानव जीवन नृत्य की तरह है, एक ऐसा नृत्य, जो युद्ध और शांति, दोनों को समेटे हुए है। इसका मतलब है कि जीवन में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, संघर्ष और शांति, दोनों ही जीवन का हिस्सा हैं। युद्ध हमें सिखाता है कि जीवन नाजुक है, लेकिन उस नाजुकता में ही उसकी सुंदरता है। जीवन में पूर्णता और आनंद प्राप्त करने के लिए, हमें जोखिम लेने और चुनौतियों का सामना करने से नहीं डरना चाहिए। डर को त्याग दो और हर पल को पूरी ताकत के साथ जियो, जैसे एक योद्धा हर लड़ाई में अपनी पूरी शक्ति झोंक देता है। समाज कई बार हमारे ऊपर कमजोर बनाने वाली नैतिकताएं थोपता है, जो हमें गुलाम बनाती हैं। इन बेड़ियों को तोड़ना होगा और अपने मूल्यों को खुद गढ़ना होगा। युद्ध का असली अर्थ है अपनी आत्मा को मुक्त करना, ताकि तुम वह बन सको जो तुम वास्तव में हो। युद्ध और जीवन, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इन्सान को अपनी सीमाओं को पार करना होगा। हमें अपने डर, अपनी कमजोरियों और समाज की अपेक्षाओं को पार करना होगा। यह युद्ध आसान नहीं, लेकिन यही तुम्हें जीवन की गहराई तक ले जाता है। हर युद्ध में हारने का डर मत रखो। हार भी तुम्हें सिखाती है। जीवन के प्रति हां कहो। चाहे वह युद्ध हो, दुख हो या सुख, सब कुछ गले लगाओ। जीवन एक युद्ध है, लेकिन यह एक उत्सव भी है। अपने भीतर के योद्धा को जागृत करो, अपने जीवन को एक कला की तरह रचो और हर पल को पूरी शक्ति से जियो। युद्ध करो, जीवन जियो, और अपने आप को सर्थक बनाओ।

योद्धा की तरह जिएं

सूत्र

इस धरातल पर जब तक हम हैं, तब तक संघर्ष भी है। धरती पर कोई भी इन्सान हमेशा के लिए नहीं रहता, लेकिन जब तक हम जीवित हैं, तब तक हमें एक योद्धा की तरह जीना चाहिए। जीवन की हर परिस्थितियों से लड़कर स्वयं को हर बार मजबूत करें। अपने भीतर मौजूद तमाम तरह की कमजोरियों को हर दिन तोड़ें।

दूसरा पहलू

हवाई जहाज किस तरह उड़ते हैं, इस रहस्य को इसे बनाने वाले इंजीनियर भी अब तक पूरी तरह नहीं समझ सके हैं।

आखिर हवाई जहाज उड़ते कैसे हैं

क्रेग मेरेट

हवाई जहाज डिजाइन करते समय एयरोस्पेस इंजीनियर चार बलों पर ध्यान देते हैं-वेट, थ्रस्ट, ड्रैग और लिफ्ट।

हवाई जहाज बीसवीं सदी की महत्वपूर्ण तकनीकी उपलब्धियों में से एक है। इसकी वजह से लोग अब दुनिया के किसी भी कोने तक कुछ ही घंटों में पहुंच सकते हैं, जबकि नाव और ट्रेन से यात्रा हफ्तों में पूरी होती थी। मेरे जैसे इंजीनियर हवाई जहाज, रॉकेट, सैटेलाइट, हेलिकॉप्टर और अंतरिक्ष यान डिजाइन करते हैं, लेकिन हवाई जहाज कैसे उड़ता है, यह समझना हमारे लिए भी चुनौती है। इसके लिए हम विज्ञान और गणित के उपकरणों, जैसे कंप्यूटर सिमुलेशन और प्रयोग का इस्तेमाल करते हैं।

उड़ान के कुछ 'भौतिकी संबंधी पहलुओं' को हम अब भी पूरी तरह नहीं समझ पाए हैं। हवाई जहाज डिजाइन करते समय एयरोस्पेस इंजीनियर चार बलों पर ध्यान देते हैं-वेट, थ्रस्ट, ड्रैग और लिफ्ट। इन बलों की मदद से हम हवाई जहाज व पंखों का आकार और यह तय करते हैं कि वह कितने यात्रियों को ले जा सकता है। जैसे-जब कोई हवाई जहाज उड़ान भरता है, तो जोर खिंचाव से अधिक हो और उठान भार से अधिक होना चाहिए। यदि आप हवाई जहाज को उड़ान भरते देखें, तो पंखों के पीछे फ्लैप्स का आकार बदलता दिखेगा। ये फ्लैप्स विमान को ज्यादा ऊपर उठने में मदद करते हैं, लेकिन साथ में खिंचाव भी बढ़ाते हैं। इसलिए ज्यादा जोर (थ्रस्ट) के लिए एक शक्तिशाली इंजन चाहिए। जब हवाई जहाज ऊंचाई पर पहुंचकर सीधे गंतव्य की तरफ उड़ रहा होता है, तो लिफ्ट (उठान) को वजन को संतुलित करने की जरूरत होती है, और जोर को खिंचाव को संतुलित करने की जरूरत होती है। इसके बाद पायलट फ्लैप्स को अंदर खींच लेता है और इंजन को कम शक्ति पर सेट कर देता है। हवाई जहाज उड़ रहा होता है, तो गुरुत्वाकर्षण उसे नीचे खींचता है, यही बल उसका भार होता है। जब हवा पीछे की ओर जाती है, तो हवाई जहाज को आगे धकेलने वाला बल मिलता है, यही थ्रस्ट है। हवाई जहाज को हवा भी पीछे धकेलती है, जिसे खिंचाव (ड्रैग) कहते हैं। वहीं लिफ्ट को समझना सबसे जटिल है। एयरफॉइल एक खास आकार का पंख है, जिससे लिफ्ट पैदा होता है। अगर हम लिफ्ट को और बेहतर समझ सकें, तो हम ज्यादा ईंधन-कुशल हवाई जहाज डिजाइन कर सकते हैं। हवा एयरफॉइल के ऊपर और नीचे अलग-अलग गति से बहती है, यह क्यों होता है, अब तक रहस्य है। वैज्ञानिक व इंजीनियर इसकी जांच कर रहे हैं। विज्ञान और गणित के जरिये हम सुरक्षित और कुशल हवाई जहाज बना सकते हैं। हम ऐसे विमान बना सकते हैं जो कम ईंधन खर्च करे और पर्यावरण को कम नुकसान पहुंचाए और उड़ान भी सुरक्षित हो।

हवाई जहाज उड़ रहा होता है, तो गुरुत्वाकर्षण उसे नीचे खींचता है, यही बल उसका भार होता है। जब हवा पीछे की ओर जाती है, तो हवाई जहाज को आगे धकेलने वाला बल मिलता है, यही थ्रस्ट है।

-द कन्वर्सेशन से

आंकड़े

वक्फ संपत्ति

भारत में करीब 8.72 लाख अचल वक्फ संपत्तियां हैं। उत्तर प्रदेश में अचल वक्फ संपत्तियां अन्य राज्यों से कई गुना अधिक हैं।

उत्तर प्रदेश	2,32,547
पश्चिम बंगाल	80,922
पंजाब	75,965
तमिलनाडु	66,092
कर्नाटक	62,830

आंकड़े अचल वक्फ संपत्ति वाले शीर्ष राज्यों के | स्रोत : WAMSI

औरंगजेब जंगमबाड़ी का मठ तोड़ने के लिए आया, श्रीमल्लिकार्जुन का उग्र रूप देखकर वह पागल होकर जमीन पर गिर पड़ा और चिल्लाते हुए रोने लगा।

श्रीमल्लिकार्जुन का उग्र रूप

अंतर्यात्रा

संकलित

श्रीमल्लिकार्जुन शिवयोगी काशी में रहते थे। वह हमेशा शिवयोग चिंतन में ही अपना समय व्यतीत करते थे। सभी मतवादियों ने उनकी महिमा स्वीकार की थी। उनके समय में उत्तर भारत में औरंगजेब का बड़ा उपद्रव था।

औरंगजेब ने काशी आकर अनेक मंदिरों को नष्ट किया और इसके बाद वह जंगमबाड़ी का शिव मठ तोड़ने के लिए आया, उस समय श्रीमल्लिकार्जुन जी भगवान शिव की पूजा में लीन थे। पूजा समाप्त होने पर जब उनके शिष्यों ने उन्हें बताया कि औरंगजेब जंगमबाड़ी का शिव मठ तोड़ने के लिए आ रहा है, तब उन्होंने ऐसा उग्र रूप दिखाया कि पहले आगे आ रही औरंगजेब की सेना डरकर इधर-उधर भाग गई। श्रीमल्लिकार्जुन जी का उग्र रूप देखकर औरंगजेब पागल होकर जमीन पर गिर पड़ा तथा चिल्लाने और रोने लगा। उसकी दयनीय दशा देखकर श्रीमल्लिकार्जुन जी ने उसे भगवान से क्षमा मांगने के लिए कहा, तब औरंगजेब ने शरण ग्रहण करके जंगमबाड़ी मठ के नाम पर भूमिदान किया और फारसी भाषा में एक दानपत्र में लिखा कि मेरे जंगमबाड़ी मठ जाते ही उस मठ की मूर्ति मेरे सामने खड़ी हुई। वह मूर्ति एकदम काली थी, आंखें प्रलयाग्नि के समान। आकार छोटा होने पर भी भूमि और आकाश को एक करके वह खड़ी थी। यह देखकर मैं भयभीत होकर शरणागत हुआ और भक्तिपूर्वक भूदान करता हूं।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 25 जून, 1951

कई देशों में तेल का अकाल पड़ने की आशंका

कई देशों में तेल का अकाल पड़ने की संभावना

गोरी कंपनी ने ईरान को लूट लिया

अरबों रुपया कमाकर ले गई

ईरान द्वारा ब्रिटेन के तेल उद्योग को छीन लेने से वहां उदासी छा गई है। इसका असर उसके व्यापार पर पड़ेगा, क्योंकि तेल से वह काफी लाभ कमाता था। यही नहीं, अब कई देशों में तेल का अकाल पड़ने की आशंका भी है।

एक काले अध्याय की स्मृति

झूठे मुकदमों में विपक्षियों को जेल में ठूंसा जा रहा था, मूल अधिकार खत्म हो चुके थे, जेलों में बंदियों की मृत्यु तक हुई और यह सिलसिला 19 महीने तक चला।

केसी त्यागी, पूर्व सांसद

आपातकाल

बारह जून, 1975 के दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पारिवारिक मित्र डीपी धर के निधन का दुखद समाचार उनके लिए भावनात्मक झटके जैसा था। प्रातः से ही गुजरात विधानसभा चुनाव के नतीजे आने शुरू हुए और मतगणना के प्रारंभिक दौर से ही 'जनता मोर्चा' ने कांग्रेस के उम्मीदवारों पर बढ़त बनानी शुरू कर दी। मोर्चे का गठन जेपी, मोरारजी भाई के संयुक्त प्रयासों का नतीजा था, जब चिमनभाई पटेल की भ्रष्ट सरकार के विरुद्ध छात्रों के आंदोलन ने उग्र रूप धारण कर लिया।

बाद में मोरारजी भाई द्वारा विधानसभा भंग करने हेतु आमरण अनशन की घोषणा ने इंदिरा सरकार को विधानसभा भंग करने के लिए मजबूर कर दिया। चुनाव परिणाम में कांग्रेस पार्टी पराजित हुई और विपक्षी गठबंधन गांधीवादी नेता बाबू भाई पटेल के नेतृत्व में सरकार बनाने में सफल रहा। गुजरात के चुनावी नतीजों ने जहां एक ओर बिहार के छात्र-युवा आंदोलन को गति प्रदान की, वहीं दूसरी ओर समूचा विपक्ष सरकार के विरुद्ध एकजुट होने लगा। लेकिन सबसे अधिक चौंकाने वाला फैसला इलाहाबाद हाईकोर्ट के जस्टिस जगमोहन लाल सिन्हा द्वारा सुनाया गया, जब उन्होंने समाजवादी नेता राजनारायण की एक याचिका पर अपना निर्णय दिया कि इंदिरा गांधी ने रायबरेली चुनाव (1971) में चुनाव जीतने के लिए भ्रष्ट तरीके अख्तियार किए और उनका चुनाव रद्द कर छह वर्ष के लिए अयोग्य घोषित किया।

इंदिरा गांधी के आवास के बाहर भीड़ जुटनी शुरू हो गई। यही वह दिन है, जब लोकतंत्र पटरी से उतरा हुआ दिखने लगा था। वफादार मंत्री, पार्टी पदाधिकारी अपने चहेतों के साथ आस्था प्रकट करने पहुंचे। व्याकुल भीड़ कभी-कभी जस्टिस जगमोहन लाल सिन्हा मुर्दाबाद के भी नारे लगाती नजर आ रही थी। इंदिरा गांधी के वकील बीएन खरे की इस दलील को स्वीकार कर लिया गया कि प्रधानमंत्री के तत्काल इस्तीफा देने से पूरे देश में प्रशासन अस्त-व्यस्त हो जाएगा और इसलिए जस्टिस सिन्हा ने फैसले पर 20 दिन तक रोक लगाने का निर्णय लिया।

इसी बीच संजय गांधी, आरके धवन और हरियाणा के मुख्यमंत्री बंसीलाल, तीनों मिलकर भावी योजना के क्रियान्वयन में लग गए। इस मुहिम को कांग्रेस के अध्यक्ष देवकांत बरुआ ने भी बल दिया, जब 'इंदिरा इज इंडिया' का भौंडा नारा लगाया। 13 जून को दिल्ली में उपस्थित विपक्षी नेताओं ने राष्ट्रपति भवन के पास धरना देकर इंदिरा गांधी के इस्तीफे की मांग कर डाली। कांग्रेस की 20 जून की रैली के समकक्ष 22 जून को रामलीला मैदान में भव्य रैली के आयोजन की घोषणा की गई। रैली की तैयारी चल रही थी कि जेपी की कोलकाता से दिल्ली आने वाली सभी फ्लाइट रद्द कर दी गईं। सभी दलों ने पुनः बैठक कर सभा के लिए 25 जून का दिन चुना।

इतिहास अपने आप को कैसे दोहराता है, इसकी एक बानगी उस दिन नारों से प्रफुल्लित हो रही थी, जेपी इसके नायक थे। युवा कवि रामधारी सिंह दिनकर द्वारा उनके सम्मान में तैयार कर गाया गीत इतिहास बन गया *'जयप्रकाश है नाम समय की करवट का, अंगड़ाई का भूचाल, बवंडर के ख्वाबों से भरी हुई तरुणाई का।'* रामलीला मैदान के बाहर तक लंबी कतारें लगी थीं, मानो समूची दिल्ली जेपी के सिंहनाद को सुनने को बेचैन थी। मंच का संचालन जनसंघ के तेज-तर्रार नेता मदनलाल खुराना कर रहे थे। मुझे भी सत्यपाल मलिक के साथ-साथ मंच पर बैठने का सौभाग्य मिला, लोकदल प्रतिनिधि के रूप में हम आमंत्रित थे। दो दर्जन कांग्रेसी सांसद इस भोज में उपस्थित रहे, लेकिन इससे भी अधिक सांसदों ने अपना समर्थन इसके लिए दोहराया।

रैली में उपस्थित सभी विपक्षी नेताओं ने एक स्वर से इंदिरा गांधी के त्यागपत्र की मांग की और उन पर तानाशाही पूर्वक व्यवहार करने का आरोप लगाया। जेपी ने कहा, वह नैतिकता खोकर प्रधानमंत्री बनी हैं, लिहाजा सभी से आग्रह है कि अवैध आदेशों का पालन न करें। इसमें सरकारी कर्मचारी भी शामिल हैं, लेकिन कांग्रेस की संजय ब्रिगेड इसे सेना और पुलिस से जेपी की अपील को मुद्दा बनाकर प्रचारित करती रही।

सभा समाप्त होने के बाद ही आपातकाल घोषित करने के लिए राष्ट्रपति से अनुमति ली गई और सभी दलों के शीर्षस्थ नेताओं समेत लगभग एक लाख 75 हजार कार्यकर्ताओं पर झूठे मुकदमे लगाकर जेल में डाल दिया गया। सभी मूलभूत अधिकार समाप्त किए जा चुके थे। समाचार पत्रों पर सेंसरशिप लगा दी गई। अदालत को भी गुप्त निर्देश दिए गए कि बंदियों की जमानत याचिकाओं को लटकाया जाए। उनकी परिवार वालों से मुलाकात भी न कराई जाए। मानसिक एवं शारीरिक यातनाएं भी दी जाने लगीं। कई जेलों से बंदियो के मृत्यु समाचार भी मिले। यह सिलसिला लगभग 19 महीने चला। आखिरकार विश्व जनमत के विरोध एवं बांग्लादेश में शेख मुजीब की हत्या की वजह से आपातकाल समाप्त करने की घोषणा कर चुनाव कराने का निर्णय लिया गया और चुनाव में इंदिरा गांधी को पराजित होना पड़ा।

edit@amarujala.com

प्रेरणा

प्रेम अधिकार का दावा नहीं करता, बल्कि स्वतंत्रता प्रदान करता है। - रवीन्द्रनाथ टैगोर

संपादकीय

ईरान-इजराइल में हुए इस युद्ध की क्या तुक थी?

12 दिवसीय इजराइल-ईरान जंग फिलहाल तो रुक गई है। शांति सदैव ही स्वागतयोग्य है। चूंकि आज के युद्ध मिसाइलों से लड़े जाते हैं, लिहाजा इनमें धन-जन-अर्थ की क्षति असीमित होती है। इस जंग के पीछे मूल तर्क था- विश्व शांति के हित में ईरान की परमाणु बम बनाने की क्षमता को रोकना। इजराइल तो इसे अपने अस्तित्व का खतरा मानता था। लेकिन क्या युद्ध-विराम से ईरान का वेपन ग्रेड यूरेनियम संवर्धन रुकेगा? क्या ईरान ने ऐसा कोई वादा किया है? यह एक अजीब युद्ध था और उतनी ही नाटकीयता के साथ इस पर विराम भी लगा। ईरान ने कतर-स्थित अमेरिका सैन्य अड्डे पर पहले से आगाह करके 14 मिसाइलें दागीं। पहले से आगाह करने की बात अमेरिका और ईरान, दोनों ने कबूली। सवाल यह है कि फिर दागा क्यों? और 14 क्यों, दो से भी काम चल जाता। अमेरिकी सैन्य टुकड़ी मिसाइल दागे जाने के पहले ही सुरक्षित स्थान पर चली गई थी और 14 में से 13 मिसाइलों को नाकाम कर दिया गया। एक निर्जन क्षेत्र में गिरी। कुछ ही घंटे बाद ट्रम्प ने यह कहते हुए कि दोनों देश मेरे पास आए, और शांति की इच्छा जाहिर की, सीजफायर की घोषणा कर दी। ईरानी सरकारी टीवी ने दावा किया कि ट्रम्प ने युद्ध-विराम की भीख मांगी। यह कैसा युद्ध-विराम है, जिसमें सभी किरदार दूसरे द्वारा झुकने का दावा कर रहे हैं? ट्रम्प ने आदत के अनुरूप इसका श्रेय लिया। लेकिन किसी भी बयान से यह नहीं पता चला कि क्या ईरान ने परमाणु-कार्यक्रम रोकने का वादा किया? अगर नहीं, तो युद्ध हुआ ही क्यों?

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

दोष संवारने व गुण निखारने का अवसर है विवाह

जैसे-जैसे हमारे पारिवारिक जीवन में उपद्रव और अधिक होने लगेंगे, तब हमें पता लगेगा कि हमारी संस्कृति में विवाह संस्था का क्या महत्व है? आज ये संस्था दांव पर लग गई। वेडिंग भारत की चौथी बड़ी इंडस्ट्री तो बन गई, लेकिन लोगों को इसके सात वचन याद नहीं हैं। अब जब बच्चों की शादी हो रही हो तो उनके माता-पिता और बच्चे सप्तपदी के मंत्रों को समझें। जिस तरह वेडिंग इवेंट में रिहर्सल की जाती है, होने वाले दूल्हा-दुल्हन, परिवार के लोग खूब तैयारी करते हैं, उस समय ये मंत्र भी याद किए जाएं। आजकल अपने बच्चों के दोष छिपाकर, गुण बताकर विवाह कर दिया जाता है। और कीमत बच्चे भी चुकाते हैं, माता-पिता भी चुकाते हैं और एक ऐसा परिवार चुकाता है, जहां आपने बेटी दी है या बेटी लाए हैं। कोई कितनी जासूसी करे एक-दूसरे की, कितनी ही जानकारी निकाल लीजिए, पर कुछ दोष तो साथ में रहने पर ही समझ में आते हैं। यदि विवाह को संस्कार मानेंगे तो दोष को संवारने का मौका दिया जाएगा और गुण को निखारने का। इसी का नाम विवाह से बसा हुआ परिवार है।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

पाठकों के पत्र

ज्यादा एसी वंचितों की समस्या बढ़ाएंगे

क्लाइमेट चेंज का असर अमीर और गरीब पर एक सा नहीं है। गर्मी और मौसमी बदलाव से परेशान होकर हम घरों में एयरकंडीशनर्स और अन्य उपकरण लगा रहे हैं। इससे हम तो गर्मी से बच जाते है, लेकिन वंचित समूह को क्लाइमेट चेंज की असुरक्षा में धकेल रहे हैं। एसी के ज्यादा उपयोग से अधिक 'ग्लोबल वार्मिंग' और ज्यादा गर्मी होगी, जो वंचित तबके के लिए और ज्यादा परेशानी का कारण बनेगी।
-निकिता मालवीय, बैतूल, मध्यप्रदेश

तस्करी से निपटने को रणनीति जरूरी

झारखंड से देश के अन्य राज्यों तक अफीम और ब्राउन शुगर की तस्करी गंभीर राष्ट्रीय समस्या है। यह कानून व्यवस्था का ही मुद्दा नहीं, बल्कि इससे युवा पीढ़ी भी बर्बाद हो रही है। इससे निपटने के लिए समग्र रणनीति की आवश्यकता है। अब सख्ती नहीं बरती गई, तो यह समस्या और भयावह रूप लेगी। झारखंड की धरती को इस काले धंधे से बचाना हम सबकी जिम्मेदारी है।
-वरुण कुमार, जमशेदपुर, झारखंड

सभी स्कूलों में लगाएं शुगर बोर्ड

सीबीएसई ने एक अच्छी पहल की है। संबद्ध स्कूलों में शुगर बोर्ड लगाना जरूरी किया है, ताकि बच्चों को डायबिटीज से बचने के प्रति जागरूक किया जा सके। सभी राज्यों के शिक्षा बोर्डों को भी इस पर अमल करना चाहिए। अगर बच्चे तंदुरुस्त होंगे तभी वो अच्छे से पढ़ाई कर सकेंगे। किसी भी बीमारी से बचने के लिए अपने खानपान और जीवनशैली पर ध्यान देना बेहद जरूरी है।
-राजेश कुमार चौहान, जालंधर, पंजाब

महिलाओं के प्रति बदल ना जाए नजरिया

पिछले कुछ दिनों से कुछ ऐसी घटनाएं सामने आ रही हैं, जिनमें कुछ महिलाओं ने पूरी नारी जाति को शर्मसार कर दिया। हमारी नानी-दादी ने जाने कितनी मुश्किलों से, कितने त्याग कर हमें यहां तक पहुंचाया। लेकिन अफसोस कि कुछ महिलाएं अपनी आजादी का गलत फायदा उठा रही हैं। इन घटनाओं के कारण ऐसा ना हो कि हम महिलाओं के प्रति समाज का नजरिया बदल जाए।
-श्वेता साहा, कोटा, राजस्थान

आप अपने पत्र editpage@dbcorp.in पर भेज सकते हैं

क्या आप जानते हैं

नींद में भी जागता रहता है डॉल्फिन का आधा दिमाग

क्या कोई जागते हुए भी सो सकता है? डॉल्फिन ऐसा करती हैं। डॉल्फिन के पास खूबी होती है कि वे सोते हुए तैर लेती हैं। इसे कहते हैं 'यूनिहेमिस्फीयर स्लीप'। इस प्रक्रिया में उनके दिमाग का आधा हिस्सा जाग्रत रहता है, जबकि दूसरा आधा हिस्सा आराम कर लेता है। जब दिमाग का एक हेमिस्फीयर सोता है तो उसके विपरीत दिशा वाली आंख खुली रहती है, जो जाग्रत हेमिस्फीयर से कनेक्टेड होती है। ऐसे बारी-बारी से डॉल्फिन अपने दिमाग को आराम देती हैं।

240 मिनट के लगभग एक दिन में ऐसे ही सोती हैं डॉल्फिन। ऐसे वे अपने आसपास के खतरों के प्रति भी सावचेत रहती हैं।

बामुलाहिज़ा • पाक का तीन सूत्री इलाज : कमजोर करो, खौफ पैदा करो, उससे खुद को मत जोड़ो

पाकिस्तान को इतना महत्व ही क्यों दें?

आस-पड़ोस

शेखर गुप्ता
एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट'
X @ShekharGupta

पिछले तीन दशकों से, पाकिस्तान से खुद को अलग करना हमारी रणनीति का केंद्रीय तत्व था। लेकिन हम पाकिस्तान से खुद को भौगोलिक या रणनीतिक स्तर पर अलग नहीं कर सकते। जैसा कि अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था, आप अपना पड़ोसी नहीं चुन सकते। और भारत को तो परमाणु शक्ति संपन्न दो पड़ोसी हासिल हैं। उन दोनों में ऐसा रणनीतिक गठजोड़ है, जो आज अमेरिका-इजराइल गठजोड़ के बाद दूसरा सबसे मजबूत गठजोड़ है। इसके बावजूद ये दोनों देश अलग किस्म के हैं। उनके हित साझा हैं, प्राथमिकताएं अलग-अलग हैं।

उनसे निबटने के लिए आपके पास जरूरी उपाय होने चाहिए। आदर्श स्थिति तो यही होगी कि उनसे एक-एक करके निबटना पड़े, लेकिन दोनों की मिलीभगत का भी सामना करने के लिए तैयार रहना होगा। उनकी मिलीभगत अप्रत्यक्ष भी हो सकती है, जैसी ऑपरेशन सिंदूर के दौरान थी। या क्या पता, यह मिलीभगत प्रत्यक्ष भी हो सकती है, किसी युद्ध के दौरान। इसलिए भारत की रणनीति का पहला तत्व उन्हें रोकने का ही हो सकता है।

इन दोनों में से पाकिस्तान से निबटने के लिए भारत सैन्य और आर्थिक दृष्टि से बेहतर स्थिति में है। चीन वास्तव में भीषण चुनौती है, जिसकी बराबरी करने या स्थायी शांति की स्थिति में दोनों के पर्याप्त साझा निहित स्वार्थ विकसित करने में कई साल लगेंगे। यहीं पर पाकिस्तान से खुद को अलग करने का विचार उभरता है। यह विवेकपूर्ण विचार है, जिसे 1980 में इंदिरा गांधी की दूसरी बार वापसी के बाद से हर प्रधानमंत्री अपनाता रहा है। पाकिस्तान नीति को लेकर पश्चिमी खेमे (अमेरिका) की ओर से किसी सुझाव को भारत हमेशा जोरदार तरीके से अस्वीकार करता रहा है। इस मामले में प्रगति की रफ्तार बिल क्लिंटन के पहले कार्यकाल तक धीमी रही और इसके बाद तेज हो गई। परमाणु संधि के बाद के दो दशकों से यह रफ्तार और तेज रही है।

भारत इसे इस हद तक ले गया कि जब कोई पश्चिमी नेता भारत के अपने दौरे में पाकिस्तान को भी शामिल करता तो भारत इस पर आपत्ति करता था। इसे अपमान के रूप में देखा जाता था और इसे दोनों देशों को बराबर का दर्जा देना माना जाता था, चाहे यह दौरा करने वाले के लिए कितना भी सुविधाजनक क्यों न होता हो। इस आपत्ति के कारगर होने का पहला संकेत तब मिला, जब करगिल युद्ध के बाद पाकिस्तान में उतरे क्लिंटन चंद घंटों के अंदर हवाई अड्डे से ही उंगली उठाकर पाकिस्तान को यह चेतावनी देते हुए विदा हो गए कि इस उपमहादेश के नक्शे को एक बार फिर खून से नए सिरे से नहीं तैयार किया जा सकता। यह सिद्धांत अब इतना पक्का हो गया है कि गणतंत्र दिवस पर मुख्य अतिथि के रूप में पधारे इंडोनेशियाई राष्ट्रपति प्रबोवो सुबियान्तो को अपने दौरे में पाकिस्तान को भी शामिल करने से रोक दिया गया था।

अमेरिका यह कहते हुए एक अलग व्याख्या प्रस्तुत करता था कि इस उपमहादेश के बारे में उसका विचार 'जीरो-सम गेम' (एक की हानि दूसरे का लाभ वाला खेल) वाला नहीं है। वह भारत और पाकिस्तान के साथ अलग-अलग संबंध बना सकता है। शिमला समझौता इसी सिद्धांत पर आधारित है। तय किया गया कि इसके बाद से भारत-पाकिस्तान अपने मसले खुद ही निबटाएंगे। इसमें किसी तीसरे पक्ष, किसी मध्यस्थ की कोई भूमिका नहीं होगी, और इस तरह संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद के सारे पुराने प्रस्ताव बेमानी बना दिए गए।

यही वजह है कि भारत डॉनल्ड ट्रम्प के बार-बार के इस दावे को लेकर उत्तेजित है कि भारत और पाकिस्तान के बीच शांति उन्होंने कायम करवाई। कांग्रेस पार्टी ने इसे लपक लिया और प्रधानमंत्री पर ट्रम्प के दबाव में आने का आरोप लगाने लगी। उन्होंने इसका जवाब भी दिया।

अपनी राजनीति का केंद्रीय मुद्दा बनाने की जरूरत नहीं...

पाकिस्तान को अपनी राजनीति का केंद्रीय मुद्दा बनाकर हमने अपने लिए दुविधा खड़ी कर ली है। पाकिस्तान के हित हमारी भू-राजनीतिक प्राथमिकताओं से टकरा रहे हैं। पाक नामक समस्या का तीन सूत्री इलाज है : कमजोर करो, खौफ पैदा करो, और उससे खुद को जोड़ो मत।

हम आशावादी होकर यह उम्मीद करें कि ट्रम्प इस उपमहादेश के मामले में शांत हो जाएंगे और यह समझ लेंगे कि अगर वे नोबेल शांति पुरस्कार का तमगा हासिल करना चाहते हैं तो इसकी खोज करने के लिए यह भू-रणनीतिक क्षेत्र सही स्थान नहीं है। अगर भारत और पाकिस्तान सचमुच में स्थायी शांति कायम करने का फैसला कर लेते हैं तो वे इसका श्रेय किसी और को क्यों देना चाहेंगे? नोबेल के आकांक्षी यहां भी तो मौजूद हैं।

जरा गौर कीजिए कि हमारे, मुख्यतः भाजपा के राजनीतिक विमर्शों में पाकिस्तान का नाम कितनी बार उभरता है, और यह जरूरी नहीं कि ऐसा ऑपरेशन सिंदूर के बाद हो रहा है। यह एक कड़वी सच्चाई है लेकिन इसे जरूर कहा जाना चाहिए कि भाजपा सरकार ने इतने वर्षों में अपनी घरेलू राजनीति पाकिस्तान के प्रति स्थायी नफरत की बुनियाद पर खड़ी की है। अगर आप प्रधानमंत्री के भाषणों में इस्तेमाल किए गए शब्दों का विश्लेषण करें तो पाएंगे कि वे चीन का नाम एक बार लेते हैं तो पाकिस्तान का सौ बार, शायद इससे भी ज्यादा। जबकि हमें बताया जाता है कि भारत को असली दीर्घकालिक खतरा चीन से है? पाकिस्तान खास महत्व नहीं रखता, हम उसे बहुत पीछे छोड़ चुके हैं।

जिससे हम चलते-चलते निबट सकते थे वह केंद्रीय मंच पर कैसे लौट आया? इसका जवाब यह है कि हमने ही उसे वहां पहुंचाया है। सरकार ने पाकिस्तान को हमारी घरेलू राजनीति का जरूरी हिस्सा बनाकर यह काम किया है। यह राजनीतिक फॉर्मूला सीधा-सा है : पाकिस्तान यानी आतंकवाद, जिसका अर्थ है इस्लामी आतंकवाद, और यह हिंदू-मुस्लिम ध्रुवीकरण का मूल तत्व है।

पिछले तीन दशकों में भारत की व्यापक रणनीतिक योजना मजबूत और विवेकसम्मत रही है। चीन के साथ स्थिरता का संबंध रखो और जब बहुत ज्यादा उकसावे की कार्रवाई हो तभी जवाब दो। इस बीच भारत की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाओ। और दुनिया को यह सलाह देते रहो कि वह आपको पाकिस्तान के साथ न जोड़े क्योंकि आप अलग श्रेणी में पहुंच गए हैं, और उससे भी ऊपर छलांग लगा सकते हैं। लेकिन क्या हम खुद इस सलाह पर अमल कर रहे हैं?

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नजरिया • सॉफ्ट पावर का मिथक भी टूट रहा है

जिसकी लाठी उसकी भैंस के सिद्धांत से चल रही है दुनिया

विश्व-स्थिति

चेतन भगत
अंग्रेजी के उपन्यासकार
chetan.bhagat@gmail.com

हम सभी ने स्कूल में भूगोल और इतिहास पढ़े हैं। कुछ लोग अंतरराष्ट्रीय संबंधों में उन्नत डिग्री हासिल करते हैं। इस विषय पर अनुभवी राजनयिक और अनगिनत थिंक टैंक हैं। संयुक्त राष्ट्र, जी7 और इन जैसी अन्य वैश्विक संस्थाओं का काम ही विश्व-व्यवस्था को बनाए रखना है। लेकिन इनमें से कोई भी आपको अंतरराष्ट्रीय संबंधों की हकीकत के लिए तैयार नहीं करता। वास्तविक दुनिया की कूटनीति पाठ्यपुस्तक के नियमों का पालन नहीं करती। यह विनम्र या निष्पक्ष या सुसंगत भी नहीं है। और इसके बावजूद उसके नियम आज की दुनिया को आकार देते हैं। वैश्विक शक्ति कैसे काम करती है, इसके बारे में कुछ अनकही सच्चाइयां इस प्रकार हैं।

1. जिसकी लाठी उसकी भैंस : वैश्विक मंच पर ऐसा कोई संविधान या सर्वोच्च न्यायालय नहीं है, जो राष्ट्रों को नियंत्रित करता हो। शक्तिशाली राष्ट्रों को जवाबदेह ठहराने वाला कोई अंतरराष्ट्रीय पुलिस-बल नहीं है। दुनिया ऐसे जंगल की तरह है- जहां सबसे शक्तिशाली वही करते हैं जो वे चाहते हैं, और बाकी को उनकी इच्छाओं का पालन करना होता है। आज अमेरिका दुनिया का सबसे शक्तिशाली देश है। इससे फर्क नहीं पड़ता कि कोई दूसरा देश कितना स्वाभिमानी, ऐतिहासिक या दृढ़ निश्चयी है। अमेरिका के समर्थन से इजराइल ने ईरान पर हवाई हमले किए और खुद अमेरिका ने भी उस पर सीधे हमला बोला। ईरान के पास ऐसा कोई वास्तविक मंच नहीं है, जहां वह विरोध दर्ज करा सके। जब तक किसी देश के पास सैन्य, आर्थिक या तकनीकी शक्ति न हो, वह वैश्विक मंच पर महत्वपूर्ण भूमिका की उम्मीद नहीं कर सकता।

2. दोस्ती मायने रखती है, लेकिन सिर्फ आपसी हितों के चलते : इजराइल एक छोटा-सा देश है, लेकिन उसके पास अपने आकार से कहीं अधिक ताकत है। क्यों? क्योंकि अमेरिका उसके साथ मजबूती से खड़ा है। अमेरिका में यहूदी समुदाय का कितना प्रभाव है, यह जगजाहिर है, लेकिन बात इससे भी आगे बढ़कर है। अमेरिका के मध्य-पूर्व में रणनीतिक हित हैं- तेल, गैस और शत्रुतापूर्ण कट्टरपंथी शासनों के उदय को रोकना। इजराइल को उसका समर्थन इन हितों के अनुरूप है। यह रिश्ता सिर्फ भावनात्मक ही नहीं है- इसमें आपसी लेन-देन और रणनीतिक सोच भी शामिल है।

3. यूएन कमजोर देशों के लिए है : हमें सिखाया गया था कि यूएन विश्व-व्यवस्था को नियंत्रित करता है। जबकि हकीकत यह है कि यह वित्त-पोषित एनजीओ की तरह काम करता है। यकीनन, यह मानवीय सहायता प्रदान करता है, संघर्षों में मध्यस्थता करता है, और शांति स्थापित करता है- लेकिन आमतौर पर छोटे या कम शक्तिशाली देशों के लिए। जब बड़े खिलाड़ी आगे बढ़ते हैं, तो यूएन मूकदर्शक बन जाता है।

4. विज्ञान, टेक्नोलॉजी, पूंजी और इनोवेशन जीतते हैं, कट्टरवाद नहीं : अमेरिका सिर्फ इसलिए शक्तिशाली नहीं है क्योंकि वह अमीर है, बल्कि इसलिए भी क्योंकि उसने सैन्य-तकनीक सहित दूसरी

जब तक किसी देश के पास सैन्य, आर्थिक या तकनीकी शक्ति न हो, वह वैश्विक मंच पर महत्वपूर्ण भूमिका की उम्मीद नहीं कर सकता। ईरान-इजराइल-यूएस संघर्ष ने हमें दुनिया की हकीकत के बारे में बहुत सबक सिखाए हैं।

टेक्नोलॉजी में लगातार निवेश किया है। एयर डिफेंस, सटीक मिसाइलें, ड्रोन, एआई- इन सबमें कोई भी उसके करीब नहीं आता। मनुष्यजाति के इतिहास में हमेशा से ही बेहतर तकनीक वाले राष्ट्रों का दबदबा रहा है- बारूद के आविष्कार से लेकर अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइलों तक। जो सरकारें केवल आस्था, जुनून या अतीत के महिमामंडन पर निर्भर रहती हैं, वे अकसर अपने ही लोगों को मूर्ख बनाती हैं।

5. सॉफ्ट पावर एक मिथक है : फारसी कालीन बहुत बढ़िया हैं। ईरानी व्यंजन विश्व स्तरीय हैं। ईरानी सिनेमा ने अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार जीते हैं। लेकिन युद्ध में कोई मायने नहीं रखता। सॉफ्ट पावर शब्द ही विरोधाभासी है। शक्ति कठोर होती है। और यह आर्थिक ताकत, सैन्य क्षमता और अत्याधुनिक तकनीक से आती है। ईरान-इजराइल-अमेरिका संघर्ष ने हमें बहुत सबक सिखाए हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

विमर्श • असहमति के लिए अनुग्रह को बहाल करें

एक समाज के रूप में सभ्य संवाद हमारा दायित्व है

देश-समाज

प्रो. मनोज कुमार झा
राजद से राज्यसभा सांसद

जामिया मिलिया इस्लामिया में मेरी पहली नौकरी के दौरान मेरे एक सहकर्मी अक्सर कहा करते थे कि जिन लोगों के तर्कों में ताकत की कमी होती है, वे अक्सर आक्रामकता का सहारा लेते हैं। या जब तर्क विफल हो जाता है तो लोग डराने-धमकाने का सहारा लेते हैं। आज भी यह बात मेरे दिमाग में बनी हुई है। जब भी मैं लोगों को बातचीत में अपने डेसिबल लेबल को बढ़ाते हुए देखता हूं, तो मेरे पूर्व सहकर्मी के वो शब्द प्रतिध्वनित होने लगते हैं।

हम जाने कैसे भूल गए हैं कि एक सभ्य समाज और विचारशील लोकतंत्र में- तर्क, साक्ष्य और विचारों के संवेदनशील आदान-प्रदान के माध्यम से ही अनुनय जीता जाता है। हम एक चिंताजनक प्रवृत्ति के मूक गवाह बनते जा रहे हैं- जहां बातों में तर्क की अनुपस्थिति की भरपाई बल और धमकी की जुबान से की जाती है। जिन लोगों के पास विचारों की ताकत की कमी है, वे लोगों को चिल्लाकर चुप करा रहे हैं।

राजनीतिक समुदाय में भी विपक्ष को चुप कराने का कमोबेश यही तरीका अपनाया जाता है, बजाय इसके कि उन्हें समझाया जाए कि वे किस दृष्टिकोण से बहस कर रहे हैं। यह बदलाव- तर्कपूर्ण बहस से टकरावपूर्ण बयानबाजी तक- न केवल सभ्यता की विफलता है, बल्कि बौद्धिक क्षरण को भी दर्शाता है। जब तर्क तथ्यों या नैतिक तर्क पर आधारित नहीं रह जाते, बल्कि व्यक्तिगत हमलों पर टिके होते हैं, तो लोकतांत्रिक बातचीत का ताना-बाना बिखरने लगता है।

यह शहर के पार्कों में सुबह टहलने के दौरान की चर्चा से लेकर गांव-मोहल्लों की चौपालों पर विचार-विमर्श और संसदीय बहसों पर भी लागू होता है। किसी भी सार्वजनिक स्थान पर बातचीत की प्रकृति को देखते हुए यह चौंकाने वाली सच्चाई दृष्टिगोचर होती है कि बल का तर्क उन लोगों की शरणस्थली बन गया है, जो विचारों के आधार पर जीत नहीं सकते और परिणामस्वरूप लोकतंत्र और सार्वजनिक विमर्श दोनों ही हार जाते हैं। इस तरह की बातचीत की उत्पत्ति को देखते हुए महसूस होता है कि जब आम नागरिक और राजनेता सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म की अस्थिर और अस्थायी सामग्री पर अधिक से अधिक निर्भर होते हैं, तो वे सूक्ष्म और विचारशील लोकतंत्र और सभ्य समाज के विचार के मूल तत्व को कमजोर करते हैं।

त्वरित प्रतिक्रियाएं, आक्रोश से प्रेरित रुझान और ध्रुवीकरण करने वाले साउंडबाइट्स विचारशील बहस और तर्कपूर्ण संवाद की जगह ले लेते हैं। इस प्रक्रिया में, लोकतांत्रिक विमर्श वायरल सामग्री तक सीमित हो जाता है, जिससे जटिलता, समझौते और आलोचनात्मक सोच के लिए जगह खत्म हो जाती है। एक स्वस्थ लोकतंत्र और सभ्य समाज में, राजनीतिक नेतृत्व से विचार-विमर्श, आलोचनात्मक जुड़ाव और जटिलता के प्रति खुलेपन की उम्मीद की जाती है। हालांकि, नेताओं की बयानबाजी, रणनीति और यहां तक कि नीतिगत स्थिति को सोशल मीडिया

सोशल मीडिया एल्गोरिदम को ध्रुवीकरण वाली सामग्री को बढ़ाने के लिए डिजाइन किया गया है। जब राजनेता ऐसी सामग्री के साथ जुड़ते हैं, तो वे सामाजिक विभाजन को और गहरा और पीड़ादायक बनाने में प्रतिभागी बन जाते हैं।

के अस्थिर पारिस्थितिकी तंत्र से निकालने की बढ़ती प्रवृत्ति लोकतांत्रिक शासन और सभ्यतागत मूल्यों के मूलभूत आदर्शों के लिए खतरा है।

ट्विटर, फेसबुक और इंस्टाग्राम जैसे प्लेटफॉर्म विचारशील विश्लेषण या साक्ष्य-आधारित तर्क के बजाय तात्कालिकता, सनसनीखेज और भावनात्मक प्रतिध्वनि को पुरस्कृत करने के लिए संरचित हैं। जब किसी सार्वजनिक मंच पर होने वाले विमर्श इन गतिशीलताओं से आकार लेते हैं, तो यह चिंतनशील होने के बजाय प्रतिक्रियात्मक हो जाता है। नेता जो ट्रेंडिंग हैशटैग, मीम्स या आक्रोश पैदा करने वाले पोस्ट चुनते हैं, वे अक्सर परामर्श, बहस और जांच के संस्थागत तंत्र को दरकिनार कर देते हैं। यह न केवल गंभीर सार्वजनिक मुद्दों को महत्वहीन बनाने में तेजी लाता है, बल्कि सार्थक नीति निर्माण पर लोकलुभावन मुद्रा को भी बढ़ावा देता है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नजरिया • कांग्रेस के आपातकाल के जख्म को भाजपा ने एक दशक में विकासकाल लाकर दूर कर दिया है

लोकतंत्र की व्यवस्था को हर पीढ़ी को पोषित करना होगा

आपातकाल

डॉ. संजय मयूख
भाजपा के मीडिया सह-प्रमुख और विधान परिषद सदस्य

आपातकाल केवल एक राजनीतिक घटना नहीं थी, बल्कि लोकतंत्र पर हमला था। यह वह दौर था जब कांग्रेस ने लोकतंत्र को जेल में डाल दिया था। अपनी नाकामियों को छिपाने के उद्देश्य से नागरिकों के मौलिक अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, संगठन बनाने की स्वतंत्रता और प्रेस की स्वतंत्रता को निलंबित कर दिया गया था। जनता डर के साये में जीने के लिए मजबूर हो गई थी। आपातकाल ने देश को बताया था कि सत्ता का दुरुपयोग कितना खतरनाक हो सकता है।

आपातकाल का दौर हमें सिखाता है कि एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में, जहां जनता सर्वोपरि होती है, वहां सत्ता का केंद्रीकरण और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएं देश को गहरे संकट में डाल सकती हैं। साल 1975 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने व्यक्तिगत राजनीतिक संकट को राष्ट्र का संकट बना दिया था। देश में 21 महीनों तक संविधान निलंबित हो चुका था। लोकतंत्र के चौथे स्तंभ प्रेस की स्वतंत्रता खत्म कर दी गई थी और संविधान के प्रावधान का दुरुपयोग किया गया था। अनुच्छेद 19 का हनन किया गया। संपादकों को जेल में डाल दिया गया, रेडियो पर सिर्फ सरकार की आवाज चलती थी। किशोर कुमार के गानों को विविध भारती में सिर्फ इसलिए प्रतिबंधित कर दिया गया था, क्योंकि उन्होंने कांग्रेस के लिए गाना गाने से मना कर दिया था।

विरोध-प्रदर्शनों को दबाने के लिए अनुच्छेद 352 के प्रावधान का गलत इस्तेमाल किया गया। संविधान में 38, 39, 40, 41 व 42वें संशोधन के जरिए संविधान के मूल ढांचे को कमजोर कर सरकार के तीनों अंगों का बैलेंस बिगाड़ने का प्रयास किया गया। अनुच्छेद 14, 19, 21 और 22 को निलंबित कर दिया गया। देश में जबरन नसबंदी अभियान लागू किया गया, जिसने मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन किया था। न्यायपालिका को डराया गया, संसद को कठपुतली बना दिया गया। मीसा कानून के तहत 1 लाख से अधिक गिरफ्तारियां की गईं, जो बगैर मुकदमे एवं सुनवाई के तहत अंजाम दी गई थीं।

भाजपा सरकार देश में लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए कृत-संकल्पित है। सरकार ने प्रण लिया है कि 25 जून 1975 की त्रासदी से सबक लेकर लोकतंत्र को मजबूत कैसे बनाना है। यह भाजपा का लोकतांत्रिक वचन है कि देश को फिर कभी आपातकाल जैसे अंधकार-युग में नहीं जाने दिया जाएगा। आपातकाल ने सिद्ध किया था कि जब सत्ता एक व्यक्ति या एक दल के हाथों में केंद्रित हो जाती है, तो वह लोकतंत्र के लिए खतरा बन सकती है। भाजपा ने इस सबक को अपने मूल में आत्मसात किया है। भाजपा सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास मंत्र के माध्यम से समावेशी और जवाबदेह शासन व्यवस्था में विश्वास रखती है।

आपातकाल लागू करने के प्रमुख कारणों में एक कारण कांग्रेस शासन में हुए भ्रष्टाचार का पुरजोर विरोध भी था। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 'भ्रष्टाचार मुक्त भारत' का संकल्प लिया है। एक दशक से अधिक के कार्यकाल में भ्रष्टाचार विरोधी मिशन पर काम करते हुए देश हित में बेहतर परिणाम दिए गए हैं। आज जब हम मोदी के नेतृत्व में भारत को एक वैश्विक शक्ति के रूप में देख रहे हैं, तो यह स्पष्ट है कि भाजपा ने आपातकाल के सबकों को अपने शासन के मूल में रखा है। आपातकाल के दौरान मोदी ने भी अज्ञातवास में रहते हुए जन-आंदोलनों का नेतृत्व किया था। कांग्रेस के आपातकाल के जख्म को भाजपा ने एक दशक में विकासकाल लाकर दूर कर दिया है।

भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में एनडीए सरकार ने एक दशक के अपने कार्यकाल में पारदर्शिता और जवाबदेही को प्राथमिकता दी है। डिजिटल इंडिया, आधार और डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर जैसी योजनाओं ने सुनिश्चित किया है कि बिना किसी भ्रष्टाचार के सरकारी योजनाओं का लाभ सीधे जनता तक पहुंचे। यह भी सुनिश्चित किया है कि भारत का संविधान और उसकी संस्थाएं मजबूत रहें। चाहे वह स्वतंत्र न्यायपालिका हो, स्वायत्त चुनाव आयोग हो या प्रेस की स्वतंत्रता हो, भाजपा सरकार ने इन संस्थाओं को न केवल संरक्षित किया, बल्कि इन्हें और सशक्त बनाने का प्रयास किया है। यह भाजपा की उस प्रतिबद्धता का हिस्सा है कि भारत में आपातकाल जैसी स्थिति दोबारा कभी न आए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

Machine Translated by Google

परमाणु भूत

ईरान के खिलाफ इजरायल और अमेरिका की कार्रवाई परमाणु खतरे की कगार पर पहुंचने जैसी है

एक ईरान पर इजरायल के अवैध हवाई हमलों के बाद 12 दिनों तक चली मिसाइलों की बौछार और हवाई हमलों के बाद आखिरकार मंगलवार को दोनों देशों ने संघर्ष विराम की घोषणा की। जाहिर तौर पर ईरान की परमाणु सुविधाओं पर "पूर्व-प्रतिरोधी" हमले के रूप में किए गए इजरायली हमले एक पूर्ण युद्ध में बदल गए, जिसमें ईरानी परमाणु प्रतिष्ठानों पर अमेरिकी हमले भी शामिल थे। रेडियोधर्मी रिसाव के खतरों और उनके बाद की प्रतिक्रियाओं को नजरअंदाज करते हुए ये हमले एक नाजुक अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की स्पष्ट प्रकृति की ओर इशारा करते हैं, जो अब पश्चिम एशिया से यूक्रेन और यहां तक कि भारतीय उपमहाद्वीप तक बढ़ते परमाणु जोखिमों से खतरे में है। ईरान पर हमलों से उसके परमाणु प्रतिष्ठानों और विशेष रूप से उसकी यूरेनियम संवर्धन क्षमताओं को नुकसान पहुंच सकता था। फिर भी, यह खुला आक्रमण परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) के हस्ताक्षरकर्ता और एक ऐसे देश के खिलाफ था, जिसने स्वेच्छा से अपनी सुविधाओं को अंतरराष्ट्रीय जांच के अधीन किया था। ईरान ने अपनी परमाणु क्षमता को शांतिपूर्ण बनाए रखने के लिए P5+1 (परमाणु-सशस्त्र राष्ट्र और जर्मनी) के साथ संयुक्त व्यापक कार्य योजना पर भी हस्ताक्षर किए थे, लेकिन राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के पहले कार्यकाल के दौरान अमेरिका द्वारा इससे पीछे हटने के बाद यह निरर्थक हो गया। ये हमले अब एक नई गतिशीलता पैदा करते हैं, जिसमें ईरान अपनी प्रतिबद्धताओं से पीछे हटकर परमाणु हथियार हासिल करने के लिए मजबूर है - इसकी संसद अब एनपीटी से बाहर निकलने के लिए एक विधेयक पर विचार कर रही है - और उन्हें एक निवारक के रूप में उपयोग कर रही है।

इस बीच, ईरान द्वारा उठाया गया कोई भी कदम इजरायल और अमेरिका की और अधिक आक्रामकता को उचित ठहराने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, जिससे अंतर्राष्ट्रीय कानून और एनपीटी के अप्रसार मानदंड को खारिज किया जा सकेगा।

इजरायल का पाखंड साफ है। वह एनपीटी पर हस्ताक्षर नहीं करता है और अपने अघोषित, लेकिन ज्ञात शस्त्रागार की किसी भी निगरानी से इनकार करता है। इससे यह संभावना बढ़ जाती है कि वह परमाणु हथियारों को निरोध के लिए नहीं बल्कि उनकी विनाशकारी क्षमता के लिए महत्व देता है।

अमेरिकी संरक्षण उसे गाजा में विनाशकारी नीतियों और पश्चिम एशिया में अवैध युद्धों को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करता है।
यूक्रेन पर आक्रमण के बाद NA-TO द्वारा पारंपरिक आक्रमण को रोकने के लिए परमाणु हथियारों का उपयोग करने की रूसी धमकी के साथ, ये कार्य यह दर्शाते हैं कि कैसे "महाशक्तियों के बीच नए सिरे से प्रतिस्पर्धा" और निवारण की उनकी सनकी समझ वैश्विक स्थिरता को नष्ट कर रही है। परमाणु निरस्त्रीकरण का विचार बिखरा हुआ है क्योंकि परमाणु-हथियार वाले देश अपने शस्त्रागार का विस्तार और आधुनिकीकरण जारी रखते हैं, जबकि अप्रसार खतरे में है क्योंकि अन्य देश खुद को बचाने के लिए परमाणु हथियारों का सहारा ले रहे हैं। संघर्ष पर अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों को फिर से स्थापित करने के लिए नए सिरे से कूटनीतिक प्रोत्साहन के बिना, सभी परमाणु-सशस्त्र राज्यों के बीच निरस्त्रीकरण के लिए एक मजबूत धक्का और एनपीटी को बनाए रखने के लिए एक दृढ़ प्रतिबद्धता के बिना, दुनिया परमाणु युद्ध के एक नए युग में फिसलने का जोखिम उठा रही है जो शीत युद्ध के सबसे काले क्षणों से भी अधिक खतरनाक साबित हो सकता है।

पश्चिम एशिया में पुनःस्थापन, विश्व के लिए 'तनाव में कमी'

टीएस तिरुमूर्ति

पूर्व सचिव हैं,
विदेश मंत्रालय
एयर्स के पश्चिम एशिया प्रभारी तथा
संयुक्त राष्ट्र में भारत के पूर्व प्रतिनिधि

गाजा में फिलिस्तीनी प्राधिकरण

में एशिया के सबसे बड़े शहर को फिर से स्थापित किया गया है
इजराइल और अमेरिका द्वारा ईरान पर बमबारी की गई है।

मौन या खुले अनुमोदन के साथ
इस क्षेत्र और उससे बाहर के लगभग सभी देशों में।
यूरोपीय देशों ने हमेशा की तरह ही विरोधाभासी और शोरगुल मचाया, लेकिन पश्चिम एशिया में जो कुछ भी हो रहा है, उससे कोई फर्क नहीं पड़ा। यहां तक कि रूस और चीन, जिन्होंने जनवरी 2025 और मार्च 2021 में क्रमशः ईरान के साथ व्यापक रणनीतिक साझेदारी समझौतों पर बहुत धूमधाम से हस्ताक्षर किए, वे भी मूक दर्शक बने रहे। ऐसा नहीं है कि ये सभी देश असहाय थे। उन्होंने जानबूझकर यह निर्णय लिया कि जब ईरान और उसके सहयोगियों को क्षेत्र में खत्म किया जा रहा है, तो वे हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

अब वास्तविकता यह है कि अब
तथाकथित ईरानी परमाणु खतरे के अप्रभावी हो जाने के बाद, पश्चिम एशिया को एकमात्र प्रमुख परमाणु शक्ति - इज़राइल का सामना करना पड़ रहा है। इस क्षेत्र में 40,000 अमेरिकी सैनिक तैनात हैं, इसके अलावा कई हवाई और समुद्री संपत्तियाँ भी हैं।

वे यह सुनिश्चित करेंगे कि इजरायल के लिए कोई सैन्य चुनौती न रहे। पश्चिम एशिया अब इस वास्तविकता के साथ जीएगा।

शुरुआत में, खाड़ी और पश्चिम एशिया के अन्य देश, शायद सही भी थे, ईरान और उसके समर्थकों से उतना ही डरते थे जितना कि इजरायल से। इस क्षेत्र में ईरान की रणनीतिक और सैन्य गहराई, जब इसकी राजनीतिक विचारधारा के चश्मे से देखी जाती है, तो यह इस क्षेत्र में सबसे बड़ा खतरा बन जाता है। कुछ मायनों में, एक आक्रामक ईरान की उपस्थिति ने खाड़ी देशों को नरम रुख अपनाने पर मजबूर कर दिया, और यहां तक कि कई अन्य मुद्दों पर समझौता भी करना पड़ा, जिनसे यह क्षेत्र त्रस्त है, जिसमें फिलिस्तीन भी शामिल है। उन्हें ईरान के प्रति अपनी कमज़ोरी को संतुलित करने के लिए इजरायल और अमेरिका की ज़रूरत थी, जिसने इजरायल को लेबनान, सीरिया और गाजा में ईरानी समर्थकों, राज्य और गैर-राज्य अभिनेताओं, दोनों को खत्म करने के लिए हर संभव प्रयास करने के लिए प्रोत्साहित किया। यमन में हूथियों और इराक में मिलिशिया को छोड़कर शायद यह खतरा कम हो गया है। इस बीच, खाड़ी देश अमेरिकी प्रशासन के साथ पुल बनाने में व्यस्त रहे हैं और अब्राहम समझौते को लागू करने की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जिसने इजरायल के साथ उनके संबंधों को सामान्य बना दिया है। उन्होंने उपहार देकर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प को खुश कर दिया है। लेकिन, पश्चिम एशिया में ईरान के आकार में कटौती के बाद, क्या वे बिना किसी नियंत्रण के इजरायल की संभावना को पसंद करते हैं?

शायद नहीं। क्या वे कम से कम अब तो कुछ कर सकते हैं?

ईरान ने जवाबी हमला किया है। उसकी मिसाइलों ने कतर में अमेरिकी सैन्य ठिकानों को निशाना बनाया है - पश्चिम एशिया में 10,000 कर्मियों वाला सबसे बड़ा अमेरिकी बेस, और इराक में।
ईरान ने आनुपातिक प्रतिशोध का दावा किया कि इस्तेमाल की गई मिसाइलों की संख्या अमेरिका द्वारा ईरान की परमाणु सुविधाओं पर हमला करने के लिए इस्तेमाल किए गए बमों की संख्या के बराबर थी। यह एक खतरनाक स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है

यह अपने ही एक "भाई" देश, कतर, की क्षेत्रीय अखंडता का उल्लंघन है, तथा स्थिति नियंत्रण से बाहर होने का खतरा पैदा कर रही है।

यह जवाबी कार्रवाई पूरी तरह अप्रत्याशित नहीं थी।
ईरान के नेतृत्व के लिए यह अस्तित्व का संकट है।
सर्वोच्च नेता अयातुल्ला अली खामेनेई और नेतृत्व के लिए, यदि उन्हें राजनीतिक रूप से जीवित रहना है तो इन हमलों के सामने आत्मसमर्पण करना या चुप रहना कोई विकल्प नहीं है।

वे जानते हैं कि अंतिम खेल सत्ता परिवर्तन ही है
उनके धार्मिक आधार और राजनीतिक विचारधारा को नष्ट करने के लिए — एक विचारधारा जो इस क्षेत्र में सभी को धमकी देती है। इस हद तक, ईरान के साथ युद्ध अभी भी इजरायल और अमेरिका के लिए एक काम-काज है। वे तब तक नहीं रुकेंगे जब तक वे ईरान पर "सीरिया" नहीं बना देते। लेकिन उनकी जगह लेने के लिए कोई वैकल्पिक "शासन" इंतज़ार नहीं कर रहा है। नतीजतन, अपने स्वयं के भले के लिए, खाड़ी देशों को इराक या लीबिया जैसे पतन को रोकने के लिए अब कदम उठाने की जरूरत है, जो इस क्षेत्र में सभी को अस्थिर कर देगा।

क्षेत्र में शासन व्यवस्था को अस्थिर करने से इस्लामी कट्टरवाद तथा इस्लामिक स्टेट और अल-कायदा जैसे आतंकवादी संगठनों को बढ़ावा ही मिला है।

एक विवाद समाप्त होते ही दूसरा संकट शुरू हो जाता है। इजरायल और ईरान के बीच तत्काल युद्ध विराम की अमेरिका द्वारा की गई नाटकीय घोषणा, तर्क की एक आश्चर्यजनक आवाज है, वह भी ऐसे समय में जब पश्चिम एशिया में तर्क सबसे अधिक क्षतिग्रस्त हो गया है।

अमेरिकी बमबारी का बदला लेने और दुनिया को - और उससे भी महत्वपूर्ण बात अपने लोगों को - यह साबित करने के बाद कि वह डरने वाला नहीं है, संघर्ष विराम का आह्वान ईरान को पीछे हटने का रास्ता देता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इजरायल को भी कड़ी चोट लगी है, हालांकि पश्चिमी मीडिया ने इसे कमतर करके दिखाया है। यह तथ्य कि ईरान खाड़ी में अमेरिकी ठिकानों पर हमला करने के लिए तैयार था, अमेरिका पर इजरायल पर दबाव डालने का दबाव डालता।

यह खाड़ी देशों के नेतृत्व के लिए भी एक चेतावनी है कि वे इससे अछूते नहीं हैं। उम्मीद है कि इससे ईरान को होर्मुज जलडमरूमध्य को बंद करने या परमाणु अप्रसार संधि से बाहर निकलने जैसी अन्य धमकियों से बचना चाहिए। ध्यान फिर से परमाणु समझौते पर आ जाता है, जहाँ अमेरिका और ईरान दोनों ही समाधान खोजने के मूड में हो सकते हैं। खाड़ी देशों के लिए इस प्रक्रिया का समर्थन करने का समय आ गया है, भले ही इसमें देर हो, ताकि क्षेत्र को और अधिक विवाद से बचाया जा सके।

जबकि अमेरिका के
इजरायल और ईरान के बीच युद्ध विराम की घोषणा आश्चर्यजनक है, बाकी दुनिया के लिए केवल 'तनाव कम करना' ही मायने रखता है।

जबकि यह विवाद समाप्त होने की ओर बढ़ रहा है, पश्चिम एशिया में अगला संकट बनने की ओर है। श्री ट्रम्प के नेतृत्व में इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के लंबे समय से संजोए गए सपने - ईरान के परमाणु कार्यक्रम को खत्म करना - के साकार होने के साथ ही उनके घरेलू राजनीतिक भाग्य में नाटकीय रूप से सुधार हुआ है। अब उनके लिए अपने "इरेट्ज़ इजरायल" सपने - जॉर्डन नदी से भूमध्य सागर तक वादा किए गए देश को साकार करने में कोई बाधा नहीं है। यह नया मध्य पूर्व है

श्री नेतन्याहू ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में 193 सदस्य देशों के समक्ष जो नक्शा पेश किया था, वह गाजा या वेस्ट बैंक के बिना था। इजरायल की योजना बहुत जल्द और निश्चित रूप से 2026 में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनावों से पहले उन्हें अपने में मिलाने की है। अगर उनके मुख्य अल्ट्रा-राइट गठबंधन के मंत्री सहयोगियों इटमार बेन-ग्वीर और बेजल स्मोट्रिच की बात पर विश्वास किया जाए, और ऐसा कोई कारण नहीं है कि उन्हें ऐसा न माना जाए, तो यह विलय इस साल हो जाएगा। सभी राज्य और गैर-राज्य अभिनेता, जो संभावित रूप से इस कदम का विरोध कर सकते हैं, पराजित हो चुके हैं या दंडित हो चुके हैं। अमेरिका भी श्री नेतन्याहू के साथ तालमेल बिठा रहा है।

नेतन्याहू अपनी महत्वाकांक्षाओं में सफल नहीं हो पाए। फिर सवाल यह है कि क्या इजरायल फिलिस्तीनी इलाकों पर कब्जा करने के बाद भी अपनी यहूदी पहचान को बनाए रखने के लिए अपनी मर्जी से रंगभेदी राज्य बना रहेगा, जहां फिलिस्तीनियों को समान नागरिकता नहीं मिलेगी और वे दूसरे दर्जे के नागरिक बने रहेंगे? या फिर यह फिलिस्तीनियों को अपने यहूदी नागरिकों के बराबर अधिकार देकर एक वास्तविक लोकतंत्र बन जाएगा। इतिहास बताता है कि यह पहला लोकतंत्र होगा।

जबकि इस विलय का विरोध क्षेत्र के देशों से आना चाहिए, खाड़ी नेतृत्व ने इजरायल को फिलिस्तीनी राज्य बनाने के लिए प्रेरित करना या यहां तक कि गाजा युद्ध को रोकना भी लगभग छोड़ दिया है, क्योंकि क्षेत्रीय स्थिरता और इजरायल और बाहरी दुनिया के साथ एकीकरण के लिए कीमत चुकानी होगी, भले ही संयुक्त राष्ट्र के भीतर और बाहर उनके जोरदार विरोध प्रदर्शन हों। हालांकि, अगर उन्हें लगता है कि फिलिस्तीनी क्षेत्रों को विलय करके या कब्जे की यथास्थिति बनाए रखने से शांति और सुरक्षा बहाल हो जाएगी (गाजा में 56,000 फिलिस्तीनी मारे गए हैं, जो विस्थापित हुए हैं, उन्हें रोजाना धमकियों, भुखमरी और विस्थापन का सामना करना पड़ रहा है, जबकि पश्चिमी तट में लोगों को यहूदी बसने वालों के लिए रास्ता बनाने के लिए उनके घरों से निकाल दिया गया है), तो उन्हें अपनी रणनीति पर फिर से विचार करने के लिए मजबूर होना पड़ सकता है।

भारत का रुख जैसा कि
अपेक्षित था, भारत ने ईरान पर इजरायल के अग्रिम हमलों पर न तो कोई घोषणा की है और न ही कोई सक्रिय भूमिका निभाई है - ठीक वैसे ही जैसे उसने अन्य जगहों पर अन्य युद्धों में नहीं की है। इजरायल उन कुछ देशों में से एक था जो ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भारत के साथ खड़ा था। हालांकि, चाबहार बंदरगाह संपर्क सहित ईरान के साथ भारत की संयुक्त पहल समान रूप से महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में भारत का दांव ऊंचा है और वह प्रभाव को कम करने के लिए वह सब कुछ कर रहा है जो वह कर सकता है। भारत ने मजाकिया अंदाज में "तनाव कम करने" का आह्वान किया है और युद्धरत पक्षों को वही सलाह दी है जो उसे ऑपरेशन सिंदूर के दौरान दुनिया के कई हिस्सों से मिली थी। भारत और पाकिस्तान से तनाव कम करने को कहा गया। यह आक्रामक और आक्रांत को समान मानने का मामला था।

दुनिया के लिए इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई सही है या गलत, या अंतर्राष्ट्रीय कानून या क्षेत्रीय अखंडता का उल्लंघन हुआ है या नहीं, जब तक कि युद्धरत पक्ष "तनाव कम" न कर दें।

शहरी नौकरशाही में लैंगिक समानता की आवश्यकता

Karthik Seshan

वरिष्ठ प्रबंधक हैं,
नीति और अंतर्दृष्टि,
Janaagraha

मैं भारत एक गहन शहरी परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। 2050 तक, 800 मिलियन से अधिक लोग, यानी आधी से ज़्यादा आबादी, शहरी क्षेत्रों में रह रही होगी।
शहरों में वृद्धि के कारण भारत वैश्विक शहरी विकास का सबसे बड़ा वाहक बन गया है। जैसे-जैसे शहर स्थानिक, आर्थिक और जनसांख्यिकीय रूप से फैल रहे हैं, वे आधुनिक भारत के सामाजिक अनुबंध को फिर से लिख रहे हैं और इसके लोकतंत्र और विकास के भविष्य को आकार दे रहे हैं।

पिछले तीन दशकों में प्रगतिशील संवैधानिक सुधारों ने लैंगिक समानता को बढ़ावा दिया है। 73वें और 74वें संशोधन में पंचायती राज संस्थाओं (पीआरआई) और शहरी स्थानीय सरकारों (यूएलजी) में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण का प्रावधान है, जिसे 17 राज्यों और एक केंद्र शासित प्रदेश ने और मजबूत करके 50% कर दिया है। आज, स्थानीय निर्वाचित प्रतिनिधियों में महिलाओं की हिस्सेदारी 46% से ज़्यादा है (पंचायती राज मंत्रालय, 2024), मेयर और पार्षदों की बढ़ती मौजूदगी के साथ।

हालाँकि, नौकरशाही तंत्र जो
उनके निर्णयों को लागू करने वाले पदों पर अभी भी पुरुषों का ही दबदबा है। जबकि जमीनी स्तर की राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा है, प्रशासनिक कैडर (शहर प्रबंधक, योजनाकार, इंजीनियर, पुलिस) में भारी असंतुलन देखने को मिलता है, जिससे शहरों की सभी नागरिकों के प्रति समान रूप से प्रतिक्रिया करने की क्षमता सीमित हो जाती है। जब हम राजमार्गों, मेट्रो और स्मार्ट शहरों में निवेश करते हैं, तो हम समावेशी विकास के एक बुनियादी पहलू को अनदेखा कर देते हैं - नौकरशाही में लैंगिक समानता।

नौकरशाही में लैंगिक अंतर सिविल सेवाओं में अधिक
महिलाओं के प्रवेश के बावजूद, शहरी प्रशासनिक वास्तुकला पुरुष-प्रधान बनी हुई है। 2022 तक, भारतीय प्रशासनिक सेवा (इंडियास्पेंड-2022) में महिलाओं की संख्या केवल 20% थी, शहरी नियोजन, नगरपालिका इंजीनियरिंग और परिवहन प्राधिकरणों में उनका प्रतिनिधित्व और भी कम था। पुलिसिंग में, राष्ट्रीय बल में केवल 11.7% महिलाएँ हैं (ब्यूरो ऑफ़ पुलिस रिसर्च एंड डेवलपमेंट-2023), और अक्सर उन्हें डेस्क भूमिकाओं के लिए रखा जाता है।

भारत में, जबकि जमीनी स्तर की राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा है, प्रशासनिक कैडर एक अलग कहानी बताते हैं

यह अंतर चिंता का विषय है। शहरों में महिलाओं की भागीदारी अलग-अलग है। वे सार्वजनिक परिवहन पर अधिक निर्भर हैं, काम और देखभाल के लिए कई स्टॉप की यात्राएं करती हैं, और पड़ोस स्तर के बुनियादी ढांचे पर निर्भर हैं। एक संस्थान

परिवहन एवं विकास नीति और सुरक्षा अध्ययन में पाया गया कि दिल्ली और मुंबई में 84% महिलाएँ सार्वजनिक या साझा परिवहन का उपयोग करती हैं; पुरुषों के लिए यह 63% था। फिर भी, शहरी नियोजन सुरक्षित, सुलभ, पड़ोस-स्तरीय गतिशीलता पर मेगा-प्रोजेक्ट्स को प्राथमिकता देता है। 50 शहरों में 2019 के सुरक्षा ऑडिट में पाया गया कि 60% से अधिक सार्वजनिक स्थान खराब रोशनी वाले थे। पुलिस में महिलाओं की कम संख्या के कारण, सामुदायिक सुरक्षा पहल अक्सर महिलाओं के साथ तालमेल बिठाने में विफल हो जाती है।

यह अल्प प्रतिनिधित्व कोई दिखावटी बात नहीं है; यह परिणामों को प्रभावित करता है। महिला अधिकारी जीवित वास्तविकताओं द्वारा आकारित दृष्टिकोण लाते हैं। भारतीय अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंध अनुसंधान परिषद और संयुक्त राष्ट्र महिला द्वारा किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि वे पानी, स्वास्थ्य और सुरक्षा को प्राथमिकता देते हैं, और सहानुभूतिपूर्ण प्रवर्तन के माध्यम से कानून प्रवर्तन में जनता के विश्वास को बेहतर बनाते हैं। लिंग-संवेदनशील डिजाइन के लिए लिंग-विविध संस्थानों की आवश्यकता होती है।

जेंडर बजटिंग में छूटा अवसर जेंडर-रिस्पॉन्सिव बजटिंग (जीआरबी), जो सार्वजनिक बजट में जेंडर संबंधी विचारों को एकीकृत करता है, भारत के शहरी शासन में एक आशाजनक लेकिन कम इस्तेमाल किया जाने वाला उपकरण है। 1990 के दशक में वैश्विक स्तर पर शुरू किया गया जीआरबी मानता है कि बजट तटस्थ नहीं होते हैं और अगर उन्हें अनियंत्रित छोड़ दिया जाए तो असमानताओं को और बढ़ा सकते हैं।

भारत ने वर्ष 2014 में जेंडर बजट वक्तव्य को अपनाया।
2005-06 में दिल्ली, तमिलनाडु और केरल ने इस दिशा में सबसे ज़्यादा प्रयास किए। दिल्ली ने सिर्फ़ महिलाओं के लिए बनी बसों और सार्वजनिक प्रकाश व्यवस्था के लिए धन मुहैया कराया है; तमिलनाडु ने 2022-23 में 64 विभागों में जीआरबी लागू किया है और केरल ने अपने पीपुल्स प्लान अभियान के ज़रिए लैंगिक लक्ष्यों को शामिल किया है। फिर भी, यूएन-वुमेन और नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ पब्लिक फ़ाइनेंस एंड पॉलिसी के अध्ययनों से पता चलता है कि इस तरह के ज़्यादातर प्रयास कमज़ोर निगरानी और सीमित संस्थागत क्षमताओं के कारण होते हैं, ख़ास तौर पर छोटे शहरों में। कई यूएलजी के लिए, जीआरबी सिर्फ़ दिखावटी ही है, जो शहरी नियोजन में पैदल यात्रियों की सुरक्षा या बच्चों की देखभाल जैसी ज़रूरी चीज़ों को नज़रअंदाज़ करता है।

इसके विपरीत, फिलीपींस जैसे देश
लिंग आधारित कार्यक्रमों के लिए स्थानीय बजट का 5% अनिवार्य किया गया; रवांडा ने निरीक्षण निकायों के साथ राष्ट्रीय योजना में जीआरबी को एकीकृत किया; युगांडा ने निधि अनुमोदन के लिए लिंग समानता प्रमाणपत्र को अनिवार्य किया; मेक्सिको ने जीआरबी को परिणाम-आधारित से जोड़ा

बजट बनाना; और दक्षिण अफ्रीका ने जीआरबी को वास्तविक वास्तविकताओं में शामिल करने के लिए भागीदारी योजना का संचालन किया। ये न केवल पैमाने के सुधार हैं, बल्कि शहरों में नागरिक-केंद्रित शासन की पुनर्कल्पना भी है।

समावेशी शहरों के निर्माण के लिए नौकरशाही में महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक कोटा से आगे बढ़ना होगा। इसके लिए प्रशासनिक और तकनीकी भूमिकाओं में भर्ती, प्रतिधारण और पदोन्नति में व्यवस्थित सुधार की आवश्यकता है।

नियोजन और इंजीनियरिंग में कोटा और छात्रवृत्ति के माध्यम से सशस्त्र कार्रवाई, संरचनात्मक बाधाओं को खत्म करने की कुंजी है।

वैश्विक स्तर पर, रवांडा, ब्राजील और दक्षिण कोरिया जैसे विभिन्न देश प्रतिनिधित्व के प्रभाव को दर्शाते हैं। रवांडा ने मातृ स्वास्थ्य और शिक्षा व्यय को बढ़ाया; ब्राजील ने स्वच्छता और प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल को प्राथमिकता दी; दक्षिण कोरिया के लिंग प्रभाव आकलन ने पारगमन और सार्वजनिक स्थानों को नया रूप दिया और ट्यूनीशिया के समानता कानूनों ने महिलाओं को अधिक तकनीकी भूमिकाएँ दीं, जिससे सुरक्षा और स्वास्थ्य पर ध्यान केंद्रित किया गया। फिलीपींस लिंग-आधारित हिंसा आश्रयों और चाइल्डकैअर को निधि देने के लिए लिंग-टैग किए गए बजट का उपयोग करता है। लिंग-संतुलित नौकरशाही केवल निष्पक्षता के बारे में नहीं है। वे सुरक्षित, न्यायसंगत, उत्तरदायी शहरों के निर्माण के लिए आवश्यक हैं।

हमारे लायक शहर भारत 5 ट्रिलियन डॉलर
की अर्थव्यवस्था बनने की आकांक्षा रखता है, इसलिए इसके शहरों को आर्थिक विकास इंजन से भी बढ़कर बनने की आकांक्षा रखनी चाहिए। उन्हें समावेश और समानता के स्थान बनना चाहिए। अनिवार्य ऑडिट, सहभागी बजट और जुड़े हुए मूल्यांकन के माध्यम से लिंग को नियोजन और कार्यान्वयन में मुख्यधारा में लाया जाना चाहिए। लक्षित क्षमता निर्माण द्वारा समर्थित, यूएलजी में जीआरबी को संस्थागत बनाया जाना चाहिए।

प्रतिनिधित्व को एजेंसी में भी तब्दील होना चाहिए,
और कांच की छतों को तोड़ने में मदद करें। स्थानीय लैंगिक समानता परिषदें और कुदुम्बश्री जैसे मॉडल, विशेष रूप से छोटे और परिवर्तनशील शहरों के लिए टेम्पलेट प्रदान करते हैं। महिलाएं पहले से ही निर्वाचित नेताओं के रूप में शासन को नया रूप दे रही हैं। उन्हें अब यह आकार देना होगा कि शहरों की योजना कैसे बनाई जाए, उनकी सेवा कैसे की जाए और उनका शासन कैसे किया जाए। जब शहर महिलाओं के जीवन के अनुभवों को दर्शाते हैं, तो वे सभी के लिए बेहतर काम करते हैं। महिलाओं के लिए शहर बनाने के लिए, हमें महिलाओं के साथ शहर बनाने से शुरुआत करनी होगी।

शीर्ष पर महिला

नए आईओसी अध्यक्ष को विश्व खेलों की भूलभुलैया से निपटना होगा

टी वह पहली अफ़्रीकी और पहली महिला प्रमुख दुनिया के सबसे बड़े और सबसे शक्तिशाली खेल संगठन की अध्यक्ष, 41 वर्षीय क्रिस्टी कोवेंट्री ने सोमवार को औपचारिक रूप से अंतर्राष्ट्रीय ओलंपिक समिति (IOC) का कार्यभार संभालते ही कई मायनों में नई राह खोली। आधुनिक ओलंपिक खेलों के संस्थापक जनक पियरे डी कुबर्टिन के बाद सबसे कम उम्र की अध्यक्ष और निवर्तमान IOC अध्यक्ष थॉमस बाख द्वारा चुनी गई क्रिस्टी को बड़े पैमाने पर निरंतरता के प्रतीक के रूप में देखा जाता था, जबकि बाख, जो अब आजीवन IOC मानद अध्यक्ष हैं, सत्ता के केंद्र में बने हुए हैं। लेकिन उनके चुनाव के बाद के पिछले तीन महीनों में, हस्तांतरण अवधि में, लॉज़ेन में IOC मुख्यालय में उनके साथ काम करने वाले लोगों ने यह विश्वास साझा किया कि वह अपनी खुद की शख्सियत हैं।

जबकि कुछ क्षेत्रों में निरंतरता की संभावना है, रॉबर्ट मुगाबे के नेतृत्व में नस्लीय रूप से तनावपूर्ण जिम्बाब्वे में एक श्वेत महिला एथलीट के रूप में और एमर्सन मनंगाग-वा के मंत्रिमंडल में मंत्री के रूप में क्रिस्टी के अनुभव बताते हैं कि सख्त बाख की तुलना में वह बहुत अधिक सहमतिपूर्ण और मानवीय होने की संभावना है। इसका मतलब है कि वह जटिल मुद्दों पर निर्णय लेने में जल्दबाजी नहीं करेंगी, चाहे वह महिला एथलीटों की सुरक्षा हो, महिला खेलों में ट्रांसजेंडर, डोपिंग का संकट, ओलंपिक आंदोलन की प्रासंगिकता, नए प्रायोजकों को आकर्षित करना और पारंपरिक प्रतिस्पर्धी खेलों के बीच संतुलन बनाए रखना और नए दर्शकों को लाने के लिए प्रयोग करना, कुछ ऐसा जो हमेशा काम नहीं करता है, जैसा कि पेरिस में ब्रेकडांसिंग से स्पष्ट है।

मैदान पर, अफ्रीका के सबसे प्रतिष्ठित ओलम्पिक खिलाड़ियों में से एक के लिए यह आठ वर्ष बहुत घटनापूर्ण होंगे।
रूस को ओलंपिक में वापस लाने सहित कई बड़े फैसले लिए जाने हैं। लॉस एंजिल्स में 2028 ओलंपिक की तैयारी के दौरान, उन्हें अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प से बहुत अधिक निपटना होगा। राजनीतिक अनिश्चितताएं और वैश्विक संघर्ष उन्हें केवल विश्व खेलों को संचालित करने से कहीं अधिक करने के लिए मजबूर करेंगे। रूस-यूक्रेन युद्ध और पश्चिम एशिया में बढ़ती शत्रुता 2036 ओलंपिक की मेजबानी के अधिकारों पर असर डाल सकती है, जो कि भारतीय हितों को भी समीकरण में लाती है। सोमवार को, आईओसी सदस्य नीता अंबानी औपचारिक समारोह के दौरान और उसके बाद क्रिस्टी की सबसे करीबी सहयोगियों में से एक थीं। विचारों और राय का आदान-प्रदान करने के लिए आईओसी सदस्यों के साथ दो दिवसीय बंद कमरे का सत्र प्रारंभिक छापों को मापने के लिए महत्वपूर्ण होगा।

तात्कालिक संदर्भ में राजनीतिक स्थिति कतर और सऊदी अरब की संभावित बोलियों पर भी असर डाल सकती है, ये दोनों देश किसी भी देश से ज़्यादा अमीर हैं और खेलों की मेज़बानी के लिए उनकी दिलचस्पी बढ़ रही है। विश्व खेलों की जटिल प्रशासनिक भूलभुलैया में काम करने का कम अनुभव होने के कारण, क्रिस्टी को उम्मीद होगी कि वे इस क्षेत्र में अपनी गहरी पैठ बनाकर धूम मचा देंगी।

द टेटर्सटूदएडिटर

रुकें और विचार करें पश्चिम एशिया में संघर्ष विनाशकारी युद्ध की तुलना में वैश्विक कूटनीति की तत्काल आवश्यकता को उजागर करता है। युद्ध विराम से अस्थायी राहत मिलती है, लेकिन मानवीय और भू-राजनीतिक दोनों तरह की क्षति गहरी होती है। विश्व नेताओं को विनाश के बजाय संवाद को प्राथमिकता देनी चाहिए और युद्ध से बचना चाहिए। परमाणु खतरों का उपयोग करना। संयुक्त राष्ट्र और शक्तिशाली देशों को भविष्य में तनाव बढ़ने से रोकने के लिए मजबूत और तटस्थ कदम उठाने चाहिए।

Arpita Uplana,
Ujjain, Madhya Pradesh

जूनियर कॉलेज

इसकी तत्काल आवश्यकता है तमिलनाडु में शैक्षिक सुधारों के एक हिस्से के रूप में चेन्नई में जूनियर कॉलेजों (कक्षा 11 और 12) की पुनः शुरूआत। JEE और NEET जैसी प्रतियोगी परीक्षाओं में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने के लिए छात्रों पर बढ़ते दबाव के साथ, वर्तमान उच्चतर माध्यमिक विद्यालय प्रणाली छात्रों को बेहतर शिक्षा प्रदान करने में विफल हो जाती है। छात्रों को अपने-अपने क्षेत्रों में आगे बढ़ने के लिए विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

महाराष्ट्र और तेलंगाना में जूनियर कॉलेज प्रणाली छात्रों को उनके चुने हुए स्ट्रीम में जल्दी विशेषज्ञता हासिल करने की अनुमति देने में सफल साबित हुई है। तमिल में वर्तमान मॉडल नाडु, जो दोनों को एकीकृत करता है सामान्य स्कूली शिक्षा और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा को एक ही प्रणाली में रखने से छात्रों की अपने शैक्षणिक करियर के लिए सर्वाधिक प्रासंगिक विषयों पर ध्यान केंद्रित करने की क्षमता सीमित हो जाती है।

तमिलनाडु सरकार के पास पहले से ही एक मजबूत शैक्षिक आधार और एक मजबूत स्कूली शिक्षा प्रणाली है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने के लिए, छात्रों को सफलता के लिए सही उपकरणों से सशक्त बनाना आवश्यक है।

विवेक एम. जैन, चेन्नई

letters@thehindu.co.in
पर ईमेल किए गए पत्रों में डाक पता और पूरा नाम अवश्य लिखा होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । बुधवार, 25 जून 2025

स्थायी शांति चाहिए

इस्राइल और ईरान के बीच 12 दिनों बाद हुआ युद्धविराम बड़ी सफलता है, लेकिन अभी भी इसे लेकर अनिश्चितता बनी हुई है। सीजफायर की घोषणा के तुरंत बाद ही दोनों देशों ने एक-दूसरे पर मिसाइल्स दागीं और ट्रंप को नाराजगी जतानी पड़ी। जाहिर है कि भरोसे का ताना-बाना बहुत कमजोर है और युद्धविराम को स्थायी बनाने के लिए और प्रयास करने की जरूरत है।

युद्धविराम पर अनिश्चितता

बातचीत का रास्ता । यह संघर्ष जिस तरह से फैल रहा था, खासकर अमेरिकी दखल के बाद, उससे पूरे पश्चिम एशिया के युद्ध की चपेट में आने की आशंका बढ़ गई थी। इस मायने में सोमवार-मंगलवार की रात बेहद अहम रही, जब ईरान ने कतर में मौजूद अमेरिकी बेस को निशाना बनाया। हालांकि ईरान ने हमले से पहले कतर को सूचित कर दिया था, ताकि नुकसान को सीमित किया जा सके। यह इस बात का संकेत था कि स्थितियां बिगड़ने के बावजूद तेहरान ने बातचीत का विकल्प खुला रखा था।

मौके का फायदा उठाएं । अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने इस संकेत को समझा और संघर्षविराम का ऐलान किया। निश्चित रूप से बैकग्राउंड में भी इसे लेकर प्रयास चल रहे होंगे। तीनों देशों ने युद्ध के नफा-नुकसान का अंदाजा लगाया होगा। युद्धविराम से पता चलता है कि उन्होंने तनाव बढ़ाने की जगह कूटनीति को प्राथमिकता दी।

राहत भरी खबरें । युद्धविराम का कुछ असर तो तुरंत ही नजर आया। सबसे महत्वपूर्ण ऑयल रूट Strait of Hormuz को लेकर तमाम आशंकाओं से सहमी दुनिया को राहत मिली, तो लगातार चढ़ रहे क्रूड ऑयल के दाम में गिरावट दर्ज की गई। इसी तरह अमेरिका, यूरोप और एशिया - तीनों जगह शेयर मार्केट में तेजी आई। अब सभी पक्षों को मिलकर सुनिश्चित करना होगा कि यह राहत बनी रहे।

भविष्य के सवाल । युद्धविराम स्थायी है या अस्थायी, इसे लेकर उलझन बनी हुई है। भविष्य को लेकर भी कई सवाल बने हुए हैं। ईरान ने कहा है कि उसका परमाणु कार्यक्रम जारी रहेगा। वहीं, इस्राइल और अमेरिका की ईरानी परमाणु कार्यक्रम के प्रति सख्ती सबके सामने है और लगता नहीं कि इस मामले में वे कोई भी समझौता करने को तैयार होंगे। ऐसे में संवाद किस दिशा में और किस तरह से आगे बढ़ेगा? शांति बनाए रखने की शर्तें क्या होंगी और उनकी निगरानी कौन करेगा? लेबनान, फलस्तीन या सीरिया में जो ईरान समर्थित सशस्त्र ताकतें हैं, क्या वे भी शांत बैठेंगी? युद्धविराम का भविष्य इन सवालों के जवाब पर निर्भर करता है।

कभी-कभी

कैसे-कैसे सपने

ललित वर्मा

कुछ सामान लेकर बिल्डिंग में घुसा तो पीछे वाला गेट खुला देखा। घर जाने के बजाय उधर निकल गया। पहले वहां पार्क था। अब पीछे की सारी बिल्डिंग्स की जगह मैदान दिख रहा था। मलबा और कुछ कंस्ट्रक्शन का काम भी। तभी लघुशंका महसूस हुई। सोचा दूर-दूर तक कोई है नहीं, यहीं हल्का हो लूं। जैसे ही प्रेशर घटना शुरू हुआ, तीन-चार लड़के तेजी से दौड़ते हुए मेरे सामने से निकले। मैं समझ गया कि कोई खतरा है। कुछ समझता इतने में दो लड़के चिल्लाए, इससे पैसे छीनो, नहीं तो मार दो। मैं भागा। उनकी स्पीड मुझसे तेज थी और एक मेरे पास पहुंच गया। उसके हाथ में ईंट थी। उसने कहा, पैसे दे या ना दे, तुझे मारना तो है। तब तक दूसरा लड़का भी पहुंच चुका था। मेरे दिमाग में एक ही बात आई, या तो इससे भिड़ो, नहीं तो गए समझो। और इतने में आंख खुल गई। तड़के 4 बजे थे। मैं उठा। वॉशरूम चला गया।

ऐसे सपने कोई खास बात नहीं है। आपको भी आते होंगे। मुझे बहुत अरसे बाद आया था। बचपन में कई बार आते थे। एक बार तो सपने में किसी को लात मारी और मैं खुद चारपाई से गिर गया। ऐसे में अहम सवाल ये कि नींद में भी क्या दिमाग और शरीर का तालमेल बना रहता है? दरअसल, इसे स्लीप ड्रीम बॉडी इंट्रैक्शन कहा जाता है और इसके पीछे न्यूरोलॉजिकल और शारीरिक गतिविधियों का बड़ा जटिल संबंध होता है।

इसे आसान भाषा में समझें तो नींद के कई चरणों में से एक रेम स्लीप (रेपिड आई मूवमेंट) में सबसे ज़्यादा सपने आते हैं। इसमें हमारा दिमाग एक्टिव होता है, मानो हम जाग रहे हों, लेकिन हमारी मांसपेशियां लगभग लकवाग्रस्त होती हैं ताकि हम सपने में किए एक्शन को असल में दोहराएं नहीं। कई बार यह प्रक्रिया पूरी तरह काम नहीं करती और तब नींद में बोलने, चलने, बेड से गिरने जैसी कई क्रियाएं हो जाती हैं।

विज्ञान कहता है कि यह नैचरल प्रक्रिया है, लेकिन तनाव, नर्वस सिस्टम की कमजोरी या कुछ स्लीप डिसऑर्डर्स में ऐसा ज्यादा भी हो सकता है। इसे ज्यादा सही और गहराई से तो डॉक्टर्स ही समझा सकते हैं, लेकिन अनुभवों से यह बात जानी है कि सोते में आपके शरीर के साथ कुछ गलत हो रहा हो तो सपने आपको अलर्ट करने का एक तरीका होते हैं। ज्यादा पानी पीकर सोएंगे, सीने पर हाथ रखकर सोएंगे या एक हाथ शरीर तले दबा रह जाएगा तो डरावने सपने आएंगे और नींद खुल जाएगी। आपको क्या लगता है? बताइएगा।

एकदा

चट्टान हैं ये किसान

साल 1928 में गुजरात के सूरत जिले के बारडोली कस्बे में जब सूखा पड़ा और फसलें खराब हो गईं, तब अंग्रेज सरकार ने लैंड रेवेन्यू में 22% बढ़ोतरी कर दी। किसानों ने टैक्स कम करने की सरकार से गुहार लगाई। लेकिन, बदले में टैक्स नहीं देने पर जमीनें नीलाम करने की धमकी मिली। यह खबर पाकर सरदार वल्लभभाई पटेल बारडोली पहुंचे और उन्होंने किसानों को संगठित किया। अब किसान एकजुट थे। उन्होंने टैक्स देना बंद कर दिया और अनुशासित, अहिंसात्मक आंदोलन शुरू हुआ। सरकार ने घरों की कुर्की की, खेत नीलाम करने की कोशिश की, लेकिन किसान अडिग रहे। सरदार पटेल हर दिन गांव-गांव जाकर उनका मनोबल बढ़ाते। आखिरकार अंग्रेज अफसरों ने सरदार पटेल को एक बैठक में बुलाया। अंग्रेज अधिकारी ने गुस्से में कहा, 'सरदार, यह सब आपकी वजह से हो रहा है। यह विद्रोह है, यह कानून तोड़ना है।' सरदार पटेल बोले, 'अगर अन्याय के खिलाफ खड़े होना कानून तोड़ना है, तो हां, मैं कानून तोड़ रहा हूं। लेकिन याद रखिए कि ये किसान मिट्टी के नहीं, चट्टान के बने हैं। आप इन्हें नहीं झुका पाएंगे।' अंत में अंग्रेजी सरकार को झुकना पड़ा।

Subrata Dhar

संकलन : **रिंकल शर्मा**

आपातकाल में राष्ट्रपति सहित कई संस्थाओं ने सरकार के सामने घुटने टेक दिए थे

इमरजेंसी विरोधी बन गए इंदिरा के प्रशंसक

सुधांशु रंजन

देश में आपातकाल की घोषणा के आज पचास साल पूरे हो रहे हैं। 25-26 जून 1975 की मध्य रात्रि को आपातकाल लागू किया गया था। लोकनायक जयप्रकाश नारायण सहित तमाम विपक्षी नेताओं को जेल की सलाखों के पीछे भेज दिया गया और लगभग सभी नागरिक अधिकार निलंबित कर दिए गए थे।

मुश्किल है मूल्यांकन । आज आपातकाल का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन मुश्किल है। उस समय जो नेता और राजनीतिक दल इंदिरा शासन को तानाशाही बताते थे, उनमें से अधिकतर अब BJP विरोध में इंदिरा गांधी के प्रशंसक हो गए हैं।

फैसले की पृष्ठभूमि । साल 1969 में कांग्रेस दो धड़ों में बंट गई थी - कांग्रेस (संगठन) और कांग्रेस (आर)। 1971 के चुनाव ने इंदिरा गांधी को कांग्रेस की निर्विवाद लीडर बना दिया। उसके ठीक बाद हुए भारत-पाक युद्ध में पाकिस्तान की करारी हार और बांग्लादेश के निर्माण से उनकी लोकप्रियता सातवें आसमान पर पहुंच गई। लेकिन जल्द ही इंदिरा गांधी के अभेद्य किले में दरारें भी पड़ने लगीं।

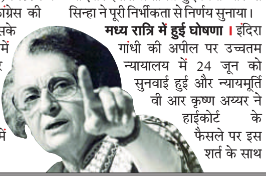

मनहूस दिन । जेपी ने 5 जून 1974 को पटना के गांधी मैदान में इंदिरा सरकार के विरुद्ध संपूर्ण क्रांति का आह्वान किया। 12 जून 1975 का दिन इंदिरा गांधी के लिए बड़ा मनहूस साबित हुआ। उस दिन तीन बुरी खबरें आईं। गुजरात विधानसभा चुनाव में कांग्रेस की हार हुई और इंदिरा गांधी के विश्वासपात्र डी पी धर का निधन हो गया। सबसे बुरी खबर यह थी कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने रायबरेली लोकसभा चुनाव क्षेत्र में मिली इंदिरा गांधी की जीत को निरस्त करते हुए छह साल तक उनके चुनाव लड़ने पर रोक लगा दी।

प्रलोभन से परे । न्यायमूर्ति जगमोहन लाल सिन्हा को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश सी एस माथुर से प्रलोभन दिलाया गया था कि अगर वह प्रधानमंत्री के पक्ष में फैसला देते हैं तो उन्हें प्रोन्नत कर उच्चतम न्यायालय ले जाया जाएगा। इससे प्रभावित हुए बिना जस्टिस सिन्हा ने पूरी निर्भीकता से निर्णय सुनाया।

मध्य रात्रि में हुई घोषणा । इंदिरा गांधी की अपील पर उच्चतम न्यायालय में 24 जून को सुनवाई हुई और न्यायमूर्ति वी आर कृष्ण अय्यर ने हाईकोर्ट के फैसले पर इस शर्त के साथ स्थगन दिया कि इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री तो बनी रहेंगी, लेकिन एक सांसद के रूप में न तो सदन में मतदान करेंगी और न ही वेतन लेंगी। अगले दिन मध्य रात्रि में आपातकाल की घोषणा कर दी गई।

क्या हुआ था

- जयप्रकाश नारायण सहित सभी विपक्षी नेता गिरफ्तार
- सरकारी आदेश के सामने संवैधानिक संस्थाएं पस्त
- नागरिक अधिकार भी केंद्र ने निलंबित कर दिए थे

संवैधानिक संस्थाओं का समर्पण । आपातकाल के दरम्यान कई संवैधानिक संस्थाओं ने घुटने टेक दिए। पहला आत्म-समर्पण राष्ट्रपति का हुआ। उनके पास जो प्रस्ताव भेजा गया वह केवल प्रधानमंत्री का प्रस्ताव था। इसके लिए मंत्रिमंडल की संस्तुति अनिवार्य है। लेकिन ऐसा नहीं किया गया था। आत्मसमर्पण करने वाली दूसरी संस्था थी विधायिका।

असाधारण जल्दबाजी । 7 अगस्त 1975 को संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में पेश किया गया और उसी दिन पारित हो गया। 8 अगस्त को यह राज्यसभा में पारित हुआ। 9 अगस्त को 20 राज्यों की विधानसभाओं द्वारा पारित कर दिया गया। 10 अगस्त को राष्ट्रपति ने उस पर हस्ताक्षर किए और गजट अधिसूचना भी जारी कर दी गई। इसमें प्रावधान था कि राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं लोकसभा अध्यक्ष के चुनाव को उच्च या उच्चतम न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है।

चुनाव वैध घोषित । ध्यान रहे, 11 अगस्त को न्यायालय में इंदिरा गांधी की अपील पर सुनवाई थी। वहां अटॉर्नी जनरल ने दलील दी कि कानून बदल गया है और उच्चतम न्यायालय को इस पर विचार करने का अधिकार नहीं रह गया है और अदालत ने इंदिरा गांधी के चुनाव को वैध ठहरा दिया।

42वां संशोधन । विधायिका का अगला आत्म-समर्पण 42वें संविधान संशोधन में देखने को मिला। ये संशोधन इतने व्यापक और दूरगामी परिणाम वाले थे कि इसे मिनी संविधान कहा गया। इसमें संसद को संविधान में संशोधन का असीमित अधिकार दिया गया। उच्च न्यायपालिका की न्यायिक समीक्षा की शक्ति को कम किया गया और सातवीं अनुसूची में संशोधन कर बहुत सारे विषयों को राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में डाल दिया गया।

काला अध्याय । वैसे, आपातकाल के दौरान कुछ अच्छी बातें भी हुईं। इस अवधि में अनुशासन अच्छा दिखा,, ट्रेनें समय से चलने लगीं...। परंतु नागरिकों की स्वतंत्रता पूरी तरह छिन गई। इसलिए इसे भारतीय लोकतंत्र के एक काले अध्याय के रूप में ही याद किया जाता है।

(लेखक कानून और संवैधानिक मामलों के जानकार हैं)

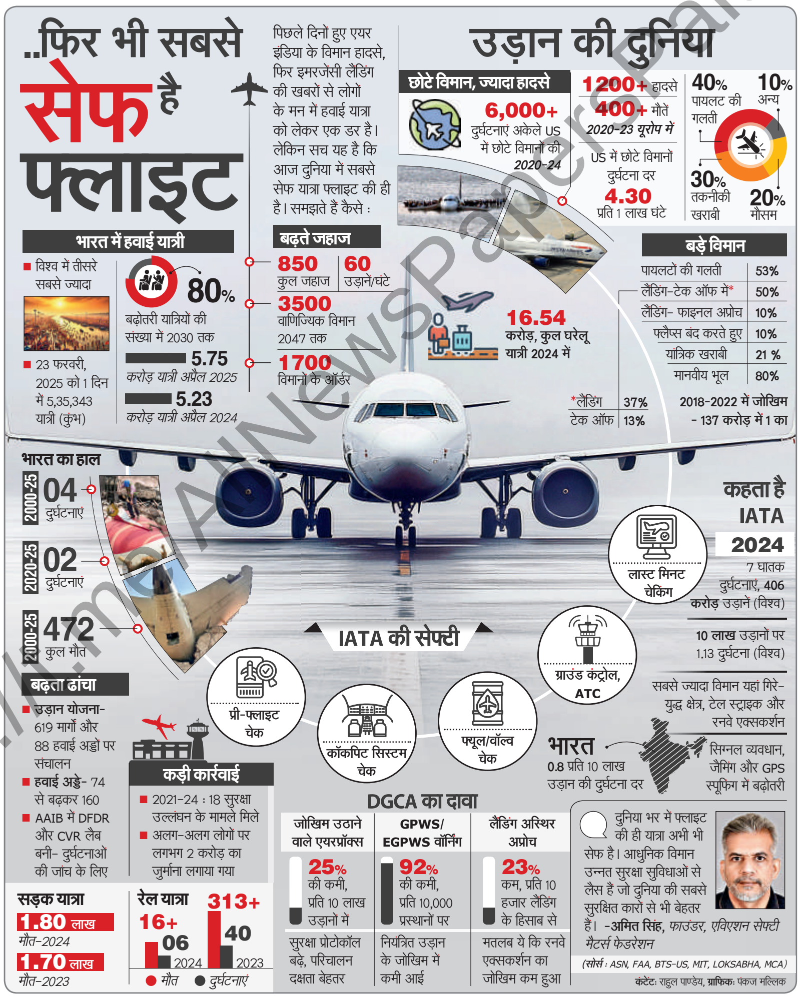

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें www.speakingtree.nbt.in

परमात्मा से प्रेम करना सिखाता है आध्यात्मिक चिंतन

ब्रह्मा कुमारी शुक्ला

परमात्मा का प्यार निस्वार्थ होता है, क्योंकि वह निराकार, निरहंकार और निर्विकार हैं। मनुष्यों की आत्मा का वास शरीर में होता है, इसलिए उसमें कोई न कोई स्वार्थ रह ही जाता है। केवल परमात्मा ऐसा प्यार दे सकते हैं, जिसमें सच्चाई, स्थिरता और शक्ति हो।

परमात्मा का प्यार ही सुखद और सुरक्षित जीवन की असली नींव है। इस प्यार के बिना जीवन बेजान, सूखा और अधूरा लगता है। यह प्यार हमेशा हमारे साथ रहता है, हमें सहारा देता है और जीवन को सरल बना देता है। जहां परमात्मा का साथ और प्यार हो, वहां जीवन कठिन नहीं लगता। हर काम सहजता से होता है। जो व्यक्ति परमात्मा के सच्चे प्यार का अनुभव करता है, वह दुनिया की किसी चीज के आकर्षण में नहीं आता, क्योंकि उसे रूहानी प्यार की मिठास और शांति में ही आनंद मिलता है।

लोग कहते हैं कि वे परमात्मा को मानते हैं, लेकिन वास्तव में परमात्मा को जानना और उनकी बातों को मानना बहुत कम लोग करते हैं। सच्चा प्रेम वही है, जब हम उनकी हर बात को मानें, देह-अभिमान छोड़कर आत्मा के रूप में जिएं और पवित्र जीवन अपनाएं। अगर हमें परमात्मा से सच्चा प्रेम है, तो उनके आदेशों को मानना कठिन नहीं लगेगा। जहां प्रेम होता है, वहां त्याग भी आसान हो जाता है। अगर कोई आदेश या मार्गदर्शन मुश्किल लगता है, तो समझिए कि प्रेम में कोई कमी या कहीं कोई बाधा है।

ये बाधाएं आमतौर पर दो वजहों से आती हैं - बुरी संगति और पुराने गलत संस्कारों का प्रभाव। जब हमारी संगति और सोच शुद्ध नहीं होती, तो रूहानी भाव और परमात्म प्यार में कमी आ जाती है। लेकिन, यदि हमारे मन में सच्चा प्रेम है, तो हम सभी के प्रति दयालु, सहयोगी और सम्मानपूर्ण व्यवहार करेंगे। हम अपने जीवन में संघर्ष और टकराव से ऊपर उठकर एक सुंदर स्वभाव वाले व्यक्ति बनेंगे।

हमें हमेशा परमात्म स्नेह में डूबे रहना चाहिए। जब हम अपने कर्तव्यों को निभाते हुए भी परमात्मा की याद में रहते हैं, तो सारी भौतिक चीजें खुद-ब-खुद हमारे जीवन में आती हैं, लेकिन हमें बांधती नहीं। हम किसी भी चीज से आसक्त नहीं होते, क्योंकि आसक्ति हमें कमजोर बना देती है। हमें किसी की भी कमजोरी को देखकर निराश नहीं होना चाहिए, बल्कि अपनी शुभ भावना और रूहानी दृष्टि से उसकी मदद करनी चाहिए। केवल उपदेश से नहीं, बल्कि सच्चे प्रेम, सहानुभूति और सहयोग से बदलाव लाना चाहिए।

हमें गिरते हुए को सहारा देना है, न कि और नीचे धकेलना है। हमें यह भाव रखना है कि हर आत्मा ईश्वर का प्यारा बच्चा है और उसमें परिवर्तन संभव है। यह सब तभी हो सकता है, जब हम रोज आध्यात्मिक चिंतन करें और परमात्मा की याद में रहते हुए अपने जीवन को आगे बढ़ाएं। यही स्मृति हमें शांत, स्थिर, सकारात्मक और समर्थ बनाएगी।

क़ानूनी मामलों में AI को लेकर हैं कई उलझनें

करण कुमार

टेक्नॉलजी में तेजी से बदलाव के कारण अब इसकी खास समझ रखने वाले विशेषज्ञों की जरूरत बढ़ गई है। इन तकनीकों में सबसे बड़ा बदलाव है आर्टिफिशल इंटेलिजेंस।

पूर्वाग्रह का संकट । AI पर भरोसा बढ़ता जा रहा है, लेकिन इससे जुड़ी सबसे बड़ी परेशानी है कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस के परिणाम में भेदभाव हो सकता है। AI को उस डेटा के आधार पर प्रशिक्षित किया जाता है, जिसका उपयोग उसमें किया गया हो। अगर उस डेटा में पहले से ही सामाजिक पूर्वाग्रह मौजूद हैं तो AI भी उन्हीं पूर्वाग्रहों के साथ निर्णय देगा। कई मामलों में उन्हें और बढ़ा भी सकता है।

पारदर्शिता की कमी । इसके अलावा, कई AI मॉडल अपारदर्शी होते हैं। इसे ही तकनीकी भाषा में Black Box समस्या कहा जाता है। इसी वजह से AI-generated evidence की कानूनी विश्वसनीयता पर सवाल हैं। अगर हमें AI पर भरोसा करना है, तो यह जरूरी है कि उसे सही और साफ डेटा मिले। साथ ही, यह पता लगाया जा सके कि उसने कोई खास नतीजा क्यों और कैसे निकाला।

सबूतों पर उलझन । AI से जुड़े साक्ष्य यानी सबूतों को कानून में पूरी तरह स्वीकार करना आसान नहीं है। अदालतें पहले भी इलेक्ट्रॉनिक सबूतों को लेकर उलझन में रही हैं, लेकिन AI के मामले में परेशानी और भी बढ़ जाती है। इसकी वजह है Black Box समस्या और पक्षपातपूर्ण एल्गोरिदम। देश का नया कानून 'भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (BSA)' डिजिटल सबूतों के लिए एक नया और आधुनिक ढांचा लाता है।

नए कानून । BSA 2023 आर्टिफिशल इंटेलिजेंस आधारित सबूतों के मामले में समझ बढ़ाता है। धारा 2(1)(d) में 'दस्तावेज' की परिभाषा को व्यापक बनाया गया है। इसमें इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रेकॉर्ड भी शामिल हैं यानी AI आउटपुट भी। धारा 61 कहती है कि किसी भी इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रेकॉर्ड को सिर्फ इसलिए साक्ष्य से बाहर नहीं किया जा सकता क्योंकि वह इलेक्ट्रॉनिक रूप में बनाया या भेजा गया था। वहीं, धारा 63 बेहद महत्वपूर्ण अधिनियम है, जिसमें इलेक्ट्रॉनिक रेकॉर्ड की स्वीकार्यता के बारे में बात की गई है। इस नए ढांचे का लक्ष्य तकनीक और विश्वसनीयता के बीच संतुलन बनाना है।

AI Image

कॉमन रूम

असली-नकली का अंतर । कानूनी मामलों में AI से उत्पन्न नतीजों और इलेक्ट्रॉनिक रेकॉर्ड्स के साथ काम करते समय वकीलों और Digital Forensic Experts को कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। डिजिटल डेटा इतना विशाल और इतने सारे सोर्स से आता है कि उसे जुटाना व उसका विश्लेषण करना जटिल है। डीपफेक और Digital Manipulation की वजह से यह और भी जरूरी है कि नकली व असली सबूतों के बीच फर्क को स्पष्ट किया जाए। एक्सपर्ट कुछ फॉरेंसिक सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल करते भी हैं।

काम चल रहा । वॉशिंगटन का एक चर्चित केस है, जिसमें अदालत ने AI से edited विडियो सबूत को नकार दिया। कोर्ट ने माना कि विडियो में कुछ नई चीजें जोड़ी गई थीं। यही AI की चुनौती है। भारत में गृह मंत्रालय के अधीन राष्ट्रीय फरेंसिक विज्ञान विश्वविद्यालय जैसी संस्थाएं साइबर अपराध, AI से जुड़ी चुनौतियों पर काम कर रही हैं।

(लेखक गांधीनगर स्थित राष्ट्रीय फॉरेंसिक विज्ञान विश्वविद्यालय के छात्र हैं)

आर.एन.आई. नं. 510/57 © सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन: 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु.; रविवार : नेपाली 6 रु. संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

https://t.me/AllNewsPaperPaid

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • बुधवार • 25 जून • 2025
www.rashtriyasahara.com

सेमीफाइल न मानें

चार राज्यों की पांच विधानसभा सीटों पर हुए उपचुनाव के नतीजों को लेकर आम आदमी पार्टी (आप) काफी उत्साहित नजर आई। गुजरात की विसावदर सीट से गोपाल इटालिया व पंजाब की लुधियाना पश्चिम सीट पर जीते संजीव अरोड़ा, दोनों आप के उम्मीदवार हैं। केरल में नीलांबुर सीट कांग्रेसनीत यूडीएफ ने सत्तारूढ़ वाम लोकतांत्रिक मोर्चा को पछाड़ कर जीत हासिल की। सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी से गुजरात की कड़ी सीट बरकरार रखते हुए राजेंद्र चावड़ा को जीत दिलाई। तृणमूल कांग्रेस ने पश्चिम बंगाल के नदिया जिले की कालीगंज विधानसभा सीट पर पुनः कब्जा किया। भाजपा के आशीष घोष को यहां अलीफा अहमद ने हराया। सभी पांचों सीटों पर इसी माह की 19 तारीख को मतदान हुए थे। इनमें लुधियाना के चुनाव पर विशेषज्ञों की कड़ी नजर थी। क्योंकि अरोड़ा राज्य सभा सांसद हैं। जहां से वे इस्तीफा देंगे। विपक्ष का दावा था कि इस खाली हुई सीट से अरविंद केजरीवाल उच्च सदन जा सकते हैं। बहरहाल उन्होंने इस सवाल को टालते हुए कहा कि यह फैसला आप की राजनीतिक मामलों की कमेटी लेगी। इसके बाद कयास मनीष सिसोदिया को भेजने का है। हालांकि लंबी जेल भुगतने वाले सत्येंद्र जैन को भी दावेदार माना जा रहा है। मतगणना के वक्त कालीगंज के बाराचंदगर इलाके में हुए विस्फोट में नौ साल की बच्ची की मौत से उपजा मसला अभी शांत नहीं हुआ है। हालांकि मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने दोषियों के खिलाफ कार्रवाई का आश्वासन फौरन ही दिया। हालांकि उपचुनाव को लेकर राजनीतिक दलों ने काफी उदासीनता बरती। मगर भाजपा शीर्ष को गंभीरता से विचार करने की जरूरत है। क्योंकि प. बंगाल को लेकर वे ममता सरकार पर जिस तरह की तोहमतें लगाते रहे हैं। उसका नतीजा सबक लेने वाला है। जिसमें भाजपा को भारी मतों से मात मिली है। गुजरात और पंजाब में 2027 में विधानसभा होने हैं, यहां दोगुने अंतर से मिली जीत को केजरीवाल सेमीफाइनल के तौर पर देख रहे हैं। दोनों जगह मिली हार की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष ने पद से इस्तीफा देते हुए इसे पार्टी की हार की बजाए अपनी विफलता बताकर दांव चलने कोशिश की। इस पर कांग्रेस कौन सी करवट लेती है, यह भी स्पष्ट होना जरूरी है। फिलवक्त कहा जाना चाहिए कि जनता आम से लेकर विधानसभा चुनाव के दरम्यान चौंकाने वाले निर्णय ले सकती है। जो उपचुनावों को सेमी फाइनल नहीं मानती।

खतरे का संकेत

जलवायु परिवर्तन पर एक हालिया रिपोर्ट ने मानव जाति के लिए अत्यंत चिंतित कर देने वाले संकेत दिए हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि एशिया महाद्वीप का भूभाग वैश्विक औसत तापमान के मुकाबले दोगुनी गति से गर्म हो रहा है। एशिया दुनिया का सबसे बड़ा महाद्वीप है और विश्व की 60 प्रतिशत आबादी यहां बसती है। इस क्षेत्र में वातावरण ही नहीं समुद्र की सतह भी बाकी दुनिया की तुलना में दोगुनी गति से गर्म हो रही है। यह रिपोर्ट विश्व मौसमविज्ञान संगठन (डब्ल्यूएमओ) ने जारी की है। रिपोर्ट के मुताबिक, 1961-1990 और 1991-2024 की अवधि में आर्कटिक तक फैला एशिया भूभाग चिंतित कर देने वाली तेजी से गर्म हुआ है। 2024 में तो एशिया में औसत तापमान 1991-2020 के औसत तापमान से लगभग 1.04 डिग्री सेल्सियस ज्यादा रहा। क्षेत्र में गर्मी हर साल नये नये रिकार्ड बना देती है। हर नया साल पिछले साल से ज्यादा गर्म दर्ज हो रहा है। इस वर्ष भी एशिया के कई हिस्सों में भीषण गर्मी दर्ज की गई। पूर्वी एशिया में इस साल काफी महीने तक गर्म हवाएं चलती रहीं हैं। जापान, दक्षिण कोरिया और चीन में बार-बार मासिक औसत तापमान के रिकॉर्ड टूटे हैं। भारत भी इससे अछूता नहीं रहा। भीषण गर्मी के कारण लू लगने के हजारों मामलों में 159 लोगों की मौत हुई है। डब्ल्यूएमओ के मुताबिक बढ़ती गर्मी के कारण एशिया के प्रशांत और हिंद महासागर, दोनों ओर समुद्र का स्तर वैश्विक औसत की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ रहा है, जिससे निचले तटीय क्षेत्रों के लिए अस्तित्व का खतरा पैदा हो गया है। सर्दियों में बर्फबारी में कमी आने और गर्मियों में उच्च तापमान के कारण हिमनद बुरी तरह प्रभावित हुए हैं और तेजी से सिमटते जा रहे हैं। मध्य हिमालय और चीन के तियान शान में 24 में से 23 हिमनदों में बर्फ बढ़ने की बजाए बुरी तरह से घट रही है। हिमनदों की कगार टूटने, बाढ़ और भूस्खलन जैसी घटनाओं में तेजी से वृद्धि हो रही है। कुल मिलाकर देखें तो जल सुरक्षा के लिए ही खतरा पैदा हो गया है। मौसम चक्र बुरी तरह बिगड़ गया है। कई देशों में अत्यधिक वर्षा के कारण भारी क्षति हुई है और चक्रवातों के कारण तबाही बढ़ी है। बाढ़, भूस्खलन और सूखा क्षेत्र की नियति बनते जा रहे हैं। क्षेत्र में समाज, अर्थव्यवस्थाएं और पारिस्थितिकी तंत्रों पर असर पड़ रहा है। यही तो जीवन की जरूरी आवश्यकताएं हैं। कुल मिलाकर मानवजाति पर ही खतरा मंडराने लगा है।

विमर्श/अमित बैजनाथ गर्ग

लोकमंगल की संकल्पना

हाल ही में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने एक बार फिर लोकमंगल की भावना से काम करने पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि समस्त हिन्दू समाज एकजुट होकर काम करेगा, तो राष्ट्रहित के साथ लोकमंगल की भावना भी प्रबल होगी। इसके लिए हम सभी को मिलकर काम करना होगा।

आखिर यह लोकमंगल है क्या? कैसे इसके साथ काम किया जा सकता है? सबसे पहले लोकमंगल को समझने की कोशिश करते हैं। लोकमंगल की भावना का अर्थ है कि समाज के कल्याण और सभी के हित के प्रति प्रेम और समर्पण। लोकमंगल की भावना साहित्य, कला और जीवन के सभी क्षेत्रों में एक महत्त्वपूर्ण आदर्श है। यह समाज के विकास और सभी के लिए एक बेहतर जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। लोकमंगल की भावना के कुछ अहम पहलू भी हैं। इनमें लोक कल्याण, प्रेम और सहिष्णुता, सत्य और न्याय, साहित्य और कला तथा व्यक्तिगत विकास भी शामिल है।

लोकमंगल की भावना का मूल लक्ष्य समाज के कल्याण और सभी के लिए सुख और समृद्धि को सुनिश्चित करना है। लोकमंगल की भावना में प्रेम, करुणा और सहिष्णुता की भावनाएं शामिल हैं। यह सभी के साथ अच्छे संबंध स्थापित करने और किसी भी प्रकार के भेदभाव से बचने की बात करती है। लोकमंगल की भावना सत्य और न्याय के प्रति प्रतिबद्ध है। यह अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने और समाज में न्याय स्थापित करने की बात करती है।

लोकमंगल की भावना साहित्य और कला में भी महत्त्वपूर्ण है। संघ हमेशा कहता आया है कि कार्यकर्ता का काम करो, संगठन का काम स्वतः ही हो जाएगा। संघ तो यह भी कहता है कि भले ही नया कार्यकर्ता ना बने, लेकिन पुराना कार्यकर्ता टूटना नहीं चाहिए। जरूरत है कि संघ और संघ प्रमुख की बातों पर अमल किया जाए और लोकमंगल की भावना के साथ काम किया जाए। कार्यकर्ता के साथ खड़ा हुआ जाए, ताकि कार्यकर्ता को सम्मान और अपनापन मिल सके। बाकी दल का काम स्वतः ही हो जाएगा और बहुत अच्छे ढंग से हो जाएगा।

अस्थिर सोच ने बिगाड़ी छवि

सामयिक

डॉ. एस.के. मिश्र

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप लगातार अपनी विश्वसीयता को कमतर कर रहे हैं। कभी अनाप-शनाप निर्णय के कारण तो कभी भारत और पाकिस्तान के बीच सीजफायर का श्रेय लेने के कारण। ताजा मामला ईरान और इस्राइल के बीच युद्धविराम के एकतरफा ऐलान का है। इस कदम के फलस्वरूप न केवल उनके देश के नागरिकों में गुस्सा है बल्कि उनके सहयोगी देश भी सकते में हैं। यही नहीं ट्रंप ने दवा किया कि दोनों देश शांति के लिए उनके हस्तक्षेप की मांग कर रहे हैं। उन्होंने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से विस्तृत युद्ध विराम की घोषणा की। आपने दावा किया कि ईरान और इस्राइल लगभग एक साथ मेरे पास आए और कहां 'शांति', मुझे पता था कि अब समय आ गया है। विश्व और मध्य पूर्व ही असली विजेता है।' आगे कहा कि 'इस्राइल और ईरान का भविष्य असीमित है और महान आशाओं से भरा है दोनों देश अपने भविष्य में जबरदस्त स्नेह, शांति और समृद्धि देखेंगे।

विचारणीय विषय यह है कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के युद्धविराम योजना को स्वीकार कर लिया ताकि मध्य पूर्व में चल रहे 12 दिनी युद्ध को अलविदा किया जा सके। कहा गया तब तेहरान ने ईरान में अमेरिकी सैन्य अड्डे पर जवाबी सीमित प्रक्षेपास्त्र द्वारा प्रहार किया था। वास्तव में यह अमेरिका द्वारा ईरान के परमाणु स्थलों पर की गई बमबारी का बदला था। यह भी ध्यान रहे कि इस्राइल ने भी अभी तक ट्रंप के युद्ध विराम की घोषणा को स्वीकार नहीं किया है। आखिरकार ट्रंप की इस प्रकार की खोखली घोषणाएं देश एवं दुनिया को क्या जाहिर कराना चाहती है। इस तरह ट्रंप अपने मुंह मियां मिट्ठू बनकर अमेरिका की प्रतिष्ठा को भी धूल धूसरित करने में लगे हैं।

दूसरी तरफ, इस्राइल ने ईरान पर युद्धविराम का उल्लंघन करने का आरोप लगाते हुए बलपूर्वक जवाब देने की कसम खाई है। ईरान तथा इस्राइल के बीच युद्धविराम की बात जिसने 12 दिनों के संघर्ष को रोक कर राहत भले दे दी हो, किंतु अभी भी असमंजस की स्थिति स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। ट्रंप अमेरिका के ही नहीं बल्कि दुनिया के ऐसे पहले राष्ट्र प्रमुख होंगे जिन पर विश्वास करना खतरे से खाली नहीं है। दुनिया के हर मामले में हस्तक्षेप करके अपनी साख खोते जा रहे हैं। स्मरण रहे कि ट्रंप ने स्पष्ट रूप से ईरान इस्राइल युद्ध में शामिल होने के संदर्भ में कहा था 'अमेरिका दो हफ्तों के भीतर इस संघर्ष में शामिल होने का फैसला करेगा, किंतु दो दिन बाद ही अमेरिका के बी-2 बमवर्षकों द्वारा ईरान के तीन प्रमुख परमाणु स्थलों पर हमला किया, जिसके परिणामस्वरूप भू राजनीतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में बड़े पैमाने पर तनाव बढ़ने की आशंकाएं बढ़ गई। ट्रंप की घोषणा के बाद तेल अवीव

और तेहरान संघर्षविराम पर सहमत हो गए हैं। बड़ी असमंजस की स्थिति बन चुकी है। एक ओर अमेरिका कह रहा है कि उसने ईरान की परमाणु क्षमता को सीमित कर दिया है वहीं ईरान का कहना है कि वह दुनिया के सबसे शक्तिशाली देश के सामने खड़े होकर मुकाबला करने का जज्बा, जोश और जुनून रखता है और किसी भी हालत में पीछे ने हटने की बात भी करता है। इस्राइल बहुत हद तक ईरान को कमजोर एवं खंड-विखंड की बात कहता है।

इस युद्ध में हर देश अपने को एक दूसरे से बड़ा विजेता बनने की बात करता है, किंतु इसकी सत्यता तो समय पर पता लगेगी कि वास्तविक जीत किसकी हुई है? ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्लाह अली खामेनेई ने कतर में अमेरिकी सैन्य अड्डे पर किए गए अपने आक्रमण को लेकर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा है कि इस हमले में किसी को नुकसान नहीं पहुंचा है। ईरान किसी के द्वारा की गई ज्यादती को किसी भी हाल में स्वीकार नहीं करेगा। हम किसी के आगे नहीं झुकेंगे। यही ईरानी राष्ट्र की सोच है। स्पष्ट कर दूं कि एक दिन पूर्व अमेरिका ने ईरान के तीन प्रमुख परमाणु प्लांट्स पर हमला किया था, जिसमें फोर्डो परमाणु सुविधा संपन्न केंद्र भी शामिल था। इसमें अमेरिका ने बी-2 स्पिरिट स्टील्थ बॉम्बर्स के द्वारा 14 जीबीयू-57 में सिर्फ ऑर्डिनेंस पेनिट्रेटर गिराए थे। इससे ईरान के परमाणु सुविधा को बड़ी हानि उठानी पड़ी। ट्रंप अपने देश के ही नहीं बल्कि दुनिया के पहले राष्ट्राध्यक्ष होंगे जो अपनी अस्थिर सोच, विचार, क्रियाकलाप एवं व्यवहार के रूप में जाने जाएंगे। नोबेल शांति पुरस्कार की लालसा रखने वाले अपने पद, प्रतिष्ठा एवं प्रतिबद्धता को भी दांव में लगाकर दोहरी, दोमुखी एवं दुधारू तलवार से दुनिया को चलाने का जो प्रयास कर रहे हैं, वह बेहद विरोधाभास से भरा हुआ है। जिस स्थिति एवं व्यवहार को अपनाकर वे 'ट्रंप चाल' चल रहे हैं, उससे उनकी जीत कभी भी बड़ी हार में बदल सकती है। बड़ा बनने के लिए एक बड़ी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है और स्वयं की बजाय लोगों को साबित करना होता है।

एक ओर आतंकी पाकिस्तान के साथ दोस्ती का डिनर दूसरी ओर ईरान पर हमला तीसरी और जी-7 की बैठक को बीच में छोड़ना, 'ऑपरेशन सिंदूर' के समय भारत-पाकिस्तान युद्ध में युद्ध विराम का श्रेय खुद लेना और स्वयं पीछे हट जाना कि इसमें मेरी कोई भूमिका नहीं थी; आखिर कितना छिछलापन है? यह सर्वविदित सत्य है कि जहां अस्तित्व हेतु संघर्ष बेहद जरूरी है वहां शांति के बिना जीवन का आधार नहीं है। संघर्ष की अवधारणा अत्यंत व्यापक है, जो शांति की इच्छा को प्रोत्साहित करती है। वर्तमान दौर में संघर्ष एवं शांति बेहद महत्त्वपूर्ण समसामयिक चिंता एवं चिंतन का विषय है।

हम सभी शांति, सुरक्षा, सद्भाव, सदाचार, सहयोग, समर्थन, स्नेह, सहानुभूति एवं सार्थक शिक्षा की बात करते हैं, किंतु उन्हें जीवन व्यवहार में अपनाने की बात पर अमल नहीं करते। देशों एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं को अपना पिट्ठू बनाए रखने की ललक स्वयं एवं विश्व हित में नहीं होती है। अतः ट्रंप द्वारा स्वयं की शेखी बघारना या डींग हांकना बंद करके मानवीय मूल्यों की सुरक्षा के प्रति गंभीर रूप से चिंता व चिंतन करें तो इतिहास उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार से बड़ा मानवीय हित संरक्षक पुरस्कार से सम्मानित करेगा। जिस तरह की दोहरी सोच वह प्रकट करते हैं, इससे उनके व्यक्तित्व पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वहीं अमेरिका की छवि भी धूल धूसरित होती है। उन्हें जो अभी अपने बेहद खास नजर आ रहे हैं, वो भी कुछ दिनों में पराए हो जाएंगे। काश! उन्हें सद्बुद्धि आए और विश्व का कल्याण हो।

(लेख में विचार निजी है)

> देशों एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं को अपना पिट्ठू बनाए रखने की ललक स्वयं एवं विश्व हित में नहीं होती है। अतः ट्रंप द्वारा स्वयं की शेखी बघारना या डींग हांकना बंद करके मानवीय मूल्यों की सुरक्षा के प्रति गंभीर रूप से चिंता व चिंतन करें तो इतिहास उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार से बड़ा मानवीय हित संरक्षक पुरस्कार से सम्मानित करेगा। जिस तरह की दोहरी सोच वह प्रकट करते हैं, इससे उनके व्यक्तित्व पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है

सकल घरेलू उत्पाद में पर्यटन क्षेत्र का बढ़ता योगदान

- भारत के तेजी से बढ़ते पर्यटन उद्योग का विदेशी मुद्रा आय में योगदान 2030 तक 4.5 लाख करोड़ को पार कर सकता है, और सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में इसका हिस्सा 7 प्रतिशत से अधिक हो सकता है
- इंडियन एसोसिएशन ऑफ द टूर ऑपरेटर (आईएटीओ) के अध्यक्ष राजीव गोसेन ने कहा है कि भारत में अब भी यह क्षेत्र अपने उच्चतम स्तर पर नहीं पहुंचा है
- 'वेलनेस टूरिज्म', 'एडवेंचर ट्रैवल', 'हेरिटेज सर्किट', 'लक्जरी एक्सपीरियंस' जैसे नये यात्रा रूझान उभरने से 'इनोवेटिव ट्रैवल बिजनेस' के लिए नये अवसर खुल रहे हैं

(मीडिया इनपुट्स)

बाहर के चैनल देखें। कोई उत्तेजना नहीं। खबर को खबर की तरह दे रहे हैं। हमारे चैनलों पर आइए। वे कूद रहे हैं। ऊंची और नाटकीय आवाज में कोरी उत्तेजना। दर्शक मिल जाते होंगे, जैसे झगड़ा देख भीड़ जमा हो जाती है। पर इस उछलकूद में खबरों का मर्म मारा जाता है। न मूर्खता उजागर होती है, न वेदना।

ओम थानवी, पत्रकार
@omthanvi

युवा हाथों में है प्रगति की पटकथा

अर्थव्यवस्था **प्रह्लाद सबनानी**

विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं की अपनी अपनी विशेषताएं हैं, जिसके आधार पर यह अर्थव्यवस्थाएं विश्व में उच्च स्थान पर पहुंची हैं एवं इस स्थान पर बनी हुई हैं। प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के मामले में आज भी कई विकसित देश भारत से आगे हैं। इन समस्त देशों के बीच चूंकि भारत की आबादी सबसे अधिक अर्थात 140 करोड़ नागरिकों से अधिक है, इसलिए भारत में प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद बहुत कम है।

भारत के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 4.19 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर है तथा प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद केवल 2,880 अमेरिकी डॉलर है। भारत के पीछे आने वाले देशों में हालांकि सकल घरेलू उत्पाद का आकार कम जरूर है परंतु प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के मामले में यह देश भारत से बहुत आगे हैं। जैसे जापान के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 4.18 लाख करोड़ है और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 33,960 अमेरिकी डॉलर है। ब्रिटेन के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 3.84 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 54,950 अमेरिकी डॉलर है। फ्रांस के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 3.21 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर है और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 46,390 अमेरिकी डॉलर है। इटली के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 2.42 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर है और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 41,090 अमेरिकी डॉलर है। कनाडा के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 2.23 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर है और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 53,560 अमेरिकी डॉलर है। ब्राजील के सकल घरेलू उत्पाद का आकार 2.13 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद 9,960 अमेरिकी डॉलर है। सकल घरेलू उत्पाद के आकार के मामले में विश्व की सबसे बड़ी 10 अर्थव्यवस्थाओं में भारत शामिल होकर चौथे स्थान पहुंच जरूर गया है परंतु प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के मामले में भारत इन सभी अर्थव्यवस्थाओं से अभी भी बहुत पीछे है। इस सबके पीछे सबसे बड़े कारणों में

शामिल है भारत द्वारा वर्ष 1947 में राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात, आर्थिक विकास की दौड़ में बहुत अधिक देर के बाद शामिल होना। भारत में आर्थिक सुधार कार्यक्रमों की शुरुआत वर्ष 1991 में प्रारम्भ जरूर हुई परंतु इसमें इस क्षेत्र में तेजी से कार्य वर्ष 2014 के बाद ही प्रारम्भ हो सका है। इसके बाद, पिछले 11 वर्षों में परिणाम हमारे सामने है और भारत विश्व की 11वीं अर्थव्यवस्था से छलांग लगते हुए आज 4थी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। दूसरे, इन देशों की तुलना में भारत की जनसंख्या का बहुत अधिक होना, जिसके चलते सकल घरेलू उत्पाद का आकार तो लगातार बढ़ रहा है परंतु प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद अभी भी अत्यधिक दबाव में है। अमेरिका में तो आर्थिक क्षेत्र में सुधार कार्यक्रम 1940 में ही प्रारम्भ हो गए थे एवं चीन में वर्ष 1960 से प्रारम्भ हुए। आज भारत सकल घरेलू उत्पाद के आकार के मामले में विश्व में चौथे पर पहुंच गया है परंतु भारत को प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के मामले में जबरदस्त सुधार करने की आवश्यकता है। भारत पूरे विश्व में आध्यात्म के मामले में सबसे आगे है अतः भारत को धार्मिक पर्यटन को सबसे तेज गति से आगे बढ़ाते हुए युवाओं के लिए रोजगार के नये अवसर निर्मित करने चाहिए जिससे नागरिकों की आय में वृद्धि करना आसान हो। दूसरे, भारत में 80 करोड़ आबादी का युवा (35 वर्ष से कम आयु) होना भी विकास के इंजिन के रूप में कार्य कर सकता है।

भारत की विशाल आबादी ने भारत को विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनाने में अपना योगदान दिया है। भारत की अर्थव्यवस्था में विविधता झलकती है और यह केवल कुछ क्षेत्रों पर निर्भर नहीं है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का योगदान 16 प्रतिशत है तथा रोजगार के अधिकतम अवसर भी कृषि क्षेत्र से ही निकलते हैं, जिसके चलते प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद विपरीत रूप से प्रभावित होता है। सेवा क्षेत्र का योगदान 60 प्रतिशत से अधिक है, परंतु विनिर्माण क्षेत्र का योगदान बढ़ाने की आवश्यकता है। वाणिज्य मंत्रालय द्वारा प्रदान की गई जानकारी के अनुसार वित्तीय वर्ष 2024-25 में भारत में 81 अरब अमेरिकी डॉलर से अधिक का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हुआ है अर्थात विदेशी निवेशक भारत में अपनी विनिर्माण इकाईयों की स्थापना करते हुए दिखाई दे रहे हैं। आज विदेशी निवेशकों का भारतीय अर्थव्यवस्था में विश्वास बढ़ा है। आज भारत का विदेशी मुद्रा भंडार भी 694 अरब अमेरिकी डॉलर की आंकड़े को पार कर गया है। आगे आने वाले समय में अब विश्वास किया जा सकता है कि भारत में भी प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद में तेज गति से वृद्धि होती हुई दिखाई देगी।

पाप और पुण्य **श्रीराम शर्मा आचार्य**

श्रेष्ठ कार्य वह है, जो श्रेष्ठ उद्देश्य के लिए किया जाता है। उत्तम कार्यों की कार्य प्रणाली भी प्रायः उत्तम ही होती है। दूसरों की सेवा या सहायता करनी है, तो प्रायः उसके लिए मधुर भाषण, नम्रता, दान, उपहार आदि द्वारा ही उसे संतुष्ट किया जाता है, परंतु कई बार इसके विपरीत स्थिति सामने आती है कि सद्देश्य होते हुए भी, भावनाएं उच्च, श्रेष्ठ, सात्विक होते हुए भी क्रिया-प्रणाली ऐसी कठोर, तीक्ष्ण एवं कटु बनानी पड़ती है जिससे लोगों को यह भ्रम हो जाता है कि कहीं यह सब दुर्भाव से प्रेरित होकर तो नहीं किया गया। ऐसे अवसरों पर वास्तविकता का निर्णय करने में बहुत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। सीधे-सादे अवसरों पर सीधी-सादी प्रणाली से भली प्रकार काम चल जाता है। किसी भूखे, प्यासे की सहायता करनी है, तो वह कार्य अन्न-जल देने के सीधे-सादे तरीके से चल जाता है। इसी प्रकार किसी दुःखी या अभावग्रस्त को अभीष्ट वस्तुएं देकर उसकी सेवा की जा सकती है। धर्मशाला, कुआं, पाठशाला, अनाथालय, औषधालय आदि के द्वारा लोकसेवा की जा सकती है। ऐसे कार्य निश्चय ही श्रेष्ठ हैं और उनकी आवश्यकताएं एवं उपयोगिता सर्वत्र स्वीकार की जा सकती है, परंतु कई बार इस प्रकार की सेवा की भी बड़ी आवश्यकता होती है, जो प्रत्यक्ष में बुराई मालूम पड़ती है और उसके करने वाले को अपयश ओढ़ना पड़ता है। इस मार्ग को अपनाने का साहस हर किसी में नहीं होता। बिरले बहादुर ही इस प्रकार की दुस्साहसभरी सेवा करने को तैयार रहते हैं। दुष्ट और अज्ञानियों को उस मार्ग से छुड़ाना, जिस पर कि वे बड़ी ममता और अहंकार के साथ प्रवृत्त हो रहे हैं, कोई साधारण काम नहीं है। सीधे आदमी सीधे तरीके से मान जाते हैं। उनकी भूल ज्ञान से, तर्क से, समझाने से सुधर जाती है, पर जिनकी मनोभूमि अज्ञानान्धकार से कलुषित हो रही है और साथ ही जिनके पास कुछ शक्ति भी है, वे ऐसे मदान्ध हो जाते हैं कि सीधी-सादी क्रिया-प्रणाली का उन पर कुछ भी असर नहीं होता। मनुष्य शरीर धारण करने पर भी जिनमें पशुत्व की प्रबलता है, ऐसे प्राणियों की कमी नहीं है। ऐसे प्राणी सज्जनता, साधुता और सात्विकता का कुछ भी मूल्यांकन नहीं करते।

रीडर्स मेल

लोकतंत्र का काला दिन

50 वर्ष पूर्व 25 जून को 1975 में देश ने उस आपातकाल का स्वरूप देखा जब दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश आपातकाल के झंझावतों में उलझ कर रह गया। जिस तरह इंदिरा गांधी ने तानाशाही रवैये से आपातकाल लगाया और विरोधी नेताओं को जेल में डालना शुरू कर दिया था, यह लोकतांत्रिक विघटन का सूचक रहा। हालांकि यह अलग बात रहा कि उसके बाद के सभी राजनीतिक दल-चाहे वह कांग्रेस के हो या गैर कांग्रेसी दल-किसी ने भी आपातकाल की उस विरासत को आगे बढ़ाने में कभी रुचि नहीं ली। यह देश के लिए बहुत बड़ा सौभाग्य है क्योंकि सत्ता का हस्तांतरण हर एक पार्टी अथवा संयुक्त मोर्चा सुलभता से करती रही है। हालांकि आपातकाल इस बात का परिचायक बना कि सहमति पर आधारित शासन व्यवस्था होने के बावजूद लोकतंत्र में तानाशाही किस कदर लोकतंत्र का गला घोंट सकती है। वहीं बाद के किसी भी राजनेताओं ने अपनी उस छवि को तो आत्मासात नहीं किया जिससे उस पर तानाशाह होने का आरोप लगाया जाए।

मिथिलेश कुमार, भागलपुर

भारत की विदेश नीति की परीक्षा

ईरान और इस्राइल के संबंध में भारत के लिए वर्तमान परिस्थितियों में सबसे बड़ी कूटनीतिक जटिलता यही है कि राष्ट्रीय हितों की पूर्ति में ईरान और इस्राइल दोनों ही प्राथमिक हैं। किसी को भी द्वितीयक विकल्प के रूप में नहीं रखा जा सकता। क्योंकि भारत के लिए दोनों देशों के साथ संबंध ऊर्जा पूर्ति के लिए आवश्यक है। अर्थव्यवस्था को गति देने के लिए ईंधन रूपी ईरानी 'पेट्रोलियम उत्पादों' (ऊर्जा) के आयात की भारत को भारी मात्रा में आवश्यकता है, जबकि सुरक्षा एवं सैन्य ऊर्जा के लिए इस्राइल का अपना महत्त्व है। भारतीय विदेश नीति की यही असली परीक्षा है।

मनोज श्रीवास्तव, अमेठी

युद्ध के नतीजे खतरनाक

ईरान इस्राइल के युद्ध के बीच अमेरिका ने चौधरी बनकर ईरान के परमाणु ठिकानों पर किया। हमला दुनिया के लिए किसी आफत से कम नहीं है। अमेरिका के इस हमले से विश्व में युद्ध और इसके कारण होने वाली दुश्वारियों के बादल मंडराने लगे हैं। इस हमले के पीछे निश्चित रूप से इस्राइल का दबाव था क्योंकि ईरान के मिसाइल हमले में इस्राइल को काफी बड़ा नुकसान हो चुका था जिसकी कल्पना उसने नहीं की थी। रक्षा विशेषज्ञों का कहना है कि ईरान के परमाणु ठिकानों पर हमले की ताकत इस्राइल में नहीं थी। इसलिए यह कार्रवाई अमेरिका के द्वारा की गई और अब अमेरिका अपने कदम को सही ठहरा रहा है। यहां से ईरान इस्राइल का युद्ध एक नये मोड़ पर आ चुका है। विश्व के सभी देश से सकते में हैं। अमेरिका के इस तरह दो देशों के बीच संघर्ष में कूदने से यह खतरा बहुत तेजी से बढ़ गया है कि अब विश्व युद्ध आसन्न है। स्वाभाविक तौर पर चारों तरफ डर का माहौल है। लोग इस बात को लेकर बेहद परेशान और सकते में हैं। उन्हें डर है कि अगर लड़ाई लंबी खिंच गई तो रोजमर्रा की चीजें काफी महंगी हो जाएंगी। देखना है, युद्ध रोकने की समझदारी इस्राइल दिखाता, ईरान दिखाता है या फिर अंकल सैम।

वीरेन्द्र कुमार जाटव, दिल्ली

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा
• राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष-34, अंक 307

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3, 4 सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा तथा 1209-1210, बारहवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय -011-23352369, 011-23352372, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

पंजाब केसरी संपादकीय

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

युद्धविराम पर संशय

हर युद्ध का विकल्प और उत्तर केवल शान्ति ही होता है। पिछले 12 दिनों से मध्य एशिया में ईरान व इजराइल के बीच जो घातक युद्ध चल रहा था, वह अब युद्धविराम की शक्ल लेने में सांसें गिनता नजर आ रहा है मगर केवल युद्धविराम से ही शान्ति का मार्ग प्रशस्त होगा। दोनों देशों के बीच युद्धविराम कराने में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प प्रमुख भूमिका निभा रहे थे। यद्यपि ईरान और इजराइल ने युद्धविराम का ऐलान होने के बाद भी एक-दूसरे पर हमले जारी रखे। डोनाल्ड ट्रम्प ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल करते हुए इजराइल को हमले करने से रोका। हालांकि दो दिन पहले उन्होंने खुद ही ईरान के परमाणु ठिकानों पर ताबड़तोड़ हमला बोला था। इसके बावजूद उनके युद्धविराम के प्रयास को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए। युद्धविराम से पहले जिस तरह ईरान ने मध्य एशिया के दूसरे देश कतर में स्थित अमेरिकी सैनिक अड्डे पर हमला किया था, उससे लग रहा था कि युद्ध और ज्यादा भड़केगा मगर राष्ट्रपति ट्रम्प ने इस हमले का कोई जवाब न दिये जाने की घोषणा कर दी थी। कतर में अमेरिका का मध्य एशियाई देशों में सबसे बड़ा सैनिक अड्डा है जहां इसके दस हजार सैनिक तैनात हैं। ईरानी हमले में कतर में किसी प्रकार की जान-माल की हानि भी नहीं हुई।

यह बेस इराक में अमेरिकी सैन्य अभियान के लिए मुख्यालय और लॉजिस्टिक केंद्र के तौर पर भी काम करता है। इसमें खाड़ी क्षेत्र की सबसे लंबी एयर लैंडिंग स्ट्रिप भी है। ब्रिटिश सेना भी समय-समय पर इस बेस का इस्तेमाल करती है। अल उदैद को अबू नक्ला एयरपोर्ट भी कहा जाता है। कतर ने साल 2000 में अमेरिका को इस बेस के इस्तेमाल की अनुमति दी थी। साल 2001 में अमेरिका ने इसका संचालन पूरी तरह से अपने हाथ में लिया। इसके बाद दिसंबर 2002 में कतर और अमेरिका के बीच एक समझौता हुआ, जिसमें अमेरिका की सैन्य मौजूदगी को औपचारिक मान्यता दी गई। ईरान ने शनिवार को अपने परमाणु ठिकानों पर हुए अमेरिकी हमले का जवाब देने का वादा किया था और अब उसने ऐसा कर दिया है। कतर में मौजूद अमेरिकी ठिकाने पर दागी गई सभी ईरानी मिसाइलों को नष्ट कर दिया गया और इसमें कोई अमेरिकी हताहत नहीं हुआ है। ट्रम्प ने महसूस किया कि युद्ध लम्बा खिंचा तो अमेरिका को भी नुक्सान हो सकता है।

> **अल उदैद को अबू नक्ला एयरपोर्ट भी कहा जाता है। कतर ने साल 2000 में अमेरिका को इस बेस के इस्तेमाल की अनुमति दी थी। साल 2001 में अमेरिका ने इसका संचालन पूरी तरह से अपने हाथ में लिया। इसके बाद दिसंबर 2002 में कतर और अमेरिका के बीच एक समझौता हुआ, जिसमें अमेरिका की सैन्य मौजूदगी को औपचारिक मान्यता दी गई। ईरान ने शनिवार को अपने परमाणु ठिकानों पर हुए अमेरिकी हमले का जवाब देने का वादा किया था और अब उसने ऐसा कर दिया है। कतर में मौजूद अमेरिकी ठिकाने पर दागी गई सभी ईरानी मिसाइलों को नष्ट कर दिया गया और इसमें कोई अमेरिकी हताहत नहीं हुआ है।**

अब डोनाल्ड ट्रम्प ने दावा किया है कि सभी पक्ष युद्धविराम पर सहमत हो गए हैं और उन्हें उम्मीद है कि इससे संघर्ष का आधिकारिक अंत हो जाएगा लेकिन कई सवाल बरकरार हैं। खासतौर से अमेरिका और इजराइल के सामने ये प्रश्न है कि उन्होंने इस युद्ध से क्या हासिल किया है। इजराइल ने लड़ाई शुरू होने के एक दिन बाद ही अपने युद्ध के टारगेट में तेहरान में सत्ता परिवर्तन की बात जोड़ दी थी। इजराइली पीएम नेतन्याहू ने ईरानी लोगों से अपनी सरकार के खिलाफ सड़कों पर आने की बात कही तो डोनाल्ड ट्रम्प ने भी ये संकेत दिए कि अमेरिका तेहरान से अली खामेनेई की सत्ता को उखाड़ना चाहता है। तेहरान में जमीन पर इजराइल और अमेरिका की अपीलों के उलट दिखा। तेहरान में लोगों ने सड़कों पर उतरकर युद्ध के मुश्किल समय में अली खामेनेई के साथ अपनी एकजुटता दर्शाई। इस दौरान कई लोगों के हाथों में खामेनेई और इजराइली हमलों में मारे गए सैन्य अफसरों की तस्वीरें देखी गईं। साफ है कि तेहरान में इस युद्ध ने खामेनेई की पकड़ कमजोर के बजाय मजबूत ही की है। 12 दिन के युद्ध के बाद ये बहुत साफ है कि अमेरिका और इजराइल मिलकर सिर्फ ईरान के परमाणु कार्यक्रम को कुछ पीछे धकेल सके हैं। ईरान के परमाणु कार्यक्रम को पूरी तरह तबाह करने और खामेनेई को सत्ता से हटाने में अमेरिका और इजराइल मिलकर भी कामयाब नहीं हो सके हैं। यानी अपने दोनों प्रमुख लक्ष्यों को पाने में अमेरिका और इजराइल कामयाब नहीं हो सके है। अमेरिका की ईरान के साथ चल रही परमाणु वार्ता इस युद्ध की वजह से खटास में पड़ गई है। अब फिर से इस पर ईरान को राजी करना आसान नहीं होगा। दूसरी ओर दुनिया के बड़े हिस्से में इजराइल और अमेरिका को पहले हमला करते हुए युद्ध शुरू करने के लिए आलोचना का शिकार होना पड़ा है। खासतौर से ट्रम्प की छवि को धक्का लगा है क्योंकि वह लगातार युद्ध के खिलाफ बात करते आ रहे थे और शांति का नोबेल तक अपने लिए चाहते हैं।

दिलचस्प यह भी है कि ईरान 1968 से ही परमाणु अप्रसार संधि या एनपीटी का सदस्य है। अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी उसकी परमाणु गतिविधियों पर नजर रख सकती है। जबकि इजराइल परमाणु शक्ति होते हुए भी एनपीटी का सदस्य नहीं है। यानी एक तरह से एक 'चोर' जज और सिपाही बना बैठा है। यद्यपि 12 दिन के युद्ध में न किसी की जीत हुई और न किसी की हार। तीनों ही इस लड़ाई में लक्ष्य प्राप्त करने के दावे कर रहे हैं। युद्धविराम तभी माना जाएगा जब ईरान और इजराइल ईमानदारी से समझौते का पालन करें और एक-दूसरे पर हमले करने बंद कर दें। युद्ध में उलझी पूरी दुनिया के युद्ध ग्रस्त इलाकों में नवसृजन की जरूरत है। कहराती मानवता को राहत पहुंचने की जरूरत है। बेहतर होगा कि इजराइल और ईरान स्थायी युद्ध विराम लागू करें।

दागी हैं जो तुमने अंधाधुंध मिसाइलें...

बम और बारूद के बीच खौफनाक मंजर नजर आते हैं,
वो सिसकिते, रोते-बिलखते चेहरे हम सभी से सवाल यही दोहराते हैं,
दागी हैं जो तुमने अंधाधुंध मिसाइलें,
उसके परिणाम वर्तमान और भविष्य को अंधकारमय बनाते हैं,
राष्ट्र के प्रति सभी देश के नागरिकों को समर्पित पाते हैं,
पर ''समस्त पृथ्वी हमारा परिवार'' इस मूल मंत्र से सभी
मुल्क दूरी क्यों बनाते हैं...!!

गीता पाढा

दुनिया को शांतिदूत चाहिए, सौदेबाज नहीं

प्रभु चावला
एडिटोरियल डायरेक्टर
द न्यू इंडियन एक्सप्रेस
newindianexpress.com

मध्यस्थता संदेश है। जब भी कोई विवाद खड़ा होता है राजनेता खुद को दूरदर्शी राजनीतिज्ञ के रूप में साबित करने के लिए सक्रिय होते हैं और विवाद खत्म करने का श्रेय लेते हैं। इस महीने डोनाल्ड ट्रंप जब भारत-पाकिस्तान के बीच संघर्षविराम का दावा करते हुए सुर्खियों में थे, तब उनके दावे से ज्यादा वजनी भारत की चुप्पी थी जो एक फोन कॉल से टूटी। ट्रंप के कथित दावे के बारे में पहले से सुन चुके प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पैंतीस मिनट तक टेलीफोन पर बात कर ट्रंप का दावा ध्वस्त कर दिया।

प्रधानमंत्री ने स्पष्ट किया कि संघर्ष विराम दोनों देशों की सेना द्वारा सीधे संपर्क से संभव हुआ, जिसकी जड़ 1972 के शिमला समझौते में है। प्रधानमंत्री मोदी ने ट्रंप से कहा, 'भारत ने कभी तीसरे पक्ष की मध्यस्थता स्वीकार नहीं की, न ही भविष्य में करेगा।' मोदी-ट्रंप के बीच की यह बातचीत एक बड़े संकट के बारे में बताती है। संकट यह है कि ईरान-इजराइल, इजराइल-हमास, रूस-यूक्रेन और भारत-पाक संघर्षों से विध्वस्त दुनिया में विश्वसनीय और वैश्विक स्तर पर स्वीकार्य मध्यस्थों का अभाव है। इससे कूटनीति प्रभावित हुई है और हिंसा को रोका नहीं जा सका है।

अगर 1970 के दशक की बात करें तो शीतयुद्ध के दौरान तत्कालीन सोवियत संघ को अंकुश में लाने के लिए हेनरी किसिंजर की माओ त्से तुंग से गोपनीय कूटनीति की याद आती है। आज के दौर में वैसी कूटनीतिक मध्यस्थता नहीं दिखती। आज के प्रचारवादी सौदेबाजों के विपरीत किसिंजर ने दुनिया को नया आकार देने के लिए वैश्विक दिग्गजों से पूरे सम्मान के साथ गोपनीय बातचीत की थी। मध्यस्थता की आज की अवसरवादी कोशिशों से उसकी तुलना ही नहीं हो सकती। अगर ट्रंप खुद को किसिंजर के अवतार के रूप में देख रहे थे, तो मोदी ने उसे खारिज कर दिया। इसके पीछे एक क्षुब्ध करने वाली सच्चाई है कि हमारे दौर में विश्वसनीय मध्यस्थ नहीं है।

जून, 2025 का वैश्विक भू-दृश्य विविध संघर्षों से भरा है और भरोसेमंद मध्यस्थ के अभाव में वे थमते हुए भी नहीं दिखते। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद शांति स्थापित करने वाले फ्रेंकलिन रूजवेल्ट या 1978 में कैंपडेविड समझौता लागू करवाने वाले जिमी कार्टर जैसे दिग्गज कूटनीतिज्ञों की याद भी अब धूमिल हो चली है। साल के मध्य में दुनिया विस्फोटकों के पीपे की तरह है, जहां इजराइल और ईरान एक-दूसरे पर मिसाइल हमले कर रहे हैं, यूक्रेन और रूस जमीनी युद्ध में उलझे हैं, इजराइल और हमास के बीच खून-खराबा जारी है और ऑपरेशन सिंदूर के उत्तरकाल में भारत-पाक तनाव बना हुआ है। इस सबके बीच संकल्प ही नहीं, भरोसा भी गायब है। किसिंजर की शटल डिप्लोमेसी या शत्रु रहे अनवर सादात व मेनाकेम बेगिन के हाथ मिलाने के दिन अब अतीत की स्मृतियां भर हैं।

आज के तथाकथित मध्यस्थ बदले हुए भेष में सौदेबाज हैं। ट्रंप की मध्यस्थता का रिकॉर्ड ही भ्रामक है। सर्बिया-कोसोवो विवाद में उनकी मध्यस्थता कुछ सप्ताह बाद फिर विवाद में बदली, उत्तर कोरिया शिखर सम्मेलन बेनतीजा रहा और दक्षिण एशिया में संघर्षविराम के उनके दावे को भारत स्वाभाविक ही खारिज कर रहा है। ऐसे

वर्ष 2015 में ईरान के साथ हुए जिस परमाणु समझौते को यूरोपीय कूटनीति की विराट उपलब्धि कहा गया, ट्रंप ने अपने पहले ही राष्ट्रपति काल में उसे इस तरह खारिज किया कि दोबारा उसकी बात तक नहीं उठी। वैश्विक विवादों को निपटाने के लिए जिस संयुक्त राष्ट्र का जन्म हुआ, उसे वीटो की राजनीति के जरिये अपंग बना दिया गया। वर्ष 2023

ही तेहरान से संधि के जरिये खुद को पश्चिम एशिया में मध्यस्थ के रूप में स्थापित करने वाले पुतिन फिलहाल ईरान को ड्रोन और रणनीतिक सलाहकार मुहैया कराने में व्यस्त हैं। चीन तभी सक्रिय होता है जब उसकी 'बेल्ट एंड रोड' परियोजना दांव पर होती है। कश्मीर पर चीन की चुप्पी तथा पाकिस्तान को उसके ऑपरेशन बुनयान अल मरसूस के लिए सैन्य मदद देने की रणनीति बताती है कि उसका लक्ष्य शांति नहीं, मुनाफा है। इस बीच यूरोप अपने शानदार कूटनीतिक अतीत की छाया भर रह गया है। ब्रिटेन के डेविड लैमी या यूरोपीय संघ के जोसेप बॉरेल संघर्ष रोकने की बात तो करते हैं, पर उनके पास कोनराड एडेनॉयर या चार्ल्स डी गॉल जैसी अपील नहीं है।

की उसकी गाजा घोषणा अमेरिकी और रूसी विरोधों के कारण अप्रासंगिक हो गयी। तुर्किये और कतर ने भी शटल डिप्लोमेसी में हाथ आजमाये। विगत जनवरी में कतर के नेतृत्व में इजराइल और हमास के बीच हुआ संघर्षविराम महज ग्यारह दिन चला।

इजराइल और ईरान में से कोई एक-दूसरे पर भरोसा नहीं करता। इजराइल का आत्मरक्षा का दावा और ईरान का पश्चिम विरोधी रवैया एक-दूसरे का इतना विरोधी है कि तीसरा पक्ष ही सुलह करा सकता है, पर इजराइल समर्थक होने और ईरान को धमकी देने के कारण ट्रंप निष्पक्ष मध्यस्थ नहीं हैं। तेहरान के साथ रूस का गठबंधन पुतिन को भी निष्पक्ष नहीं रहने देता। नतीजा यह है कि दुनिया एक बाजार बन गयी है, जहां मध्यस्थता के बजाय हथियार, तेल और नजरिया ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है।

वर्ष 2024 में वैश्विक रक्षा खर्च रिकॉर्ड 2.2 ट्रिलियन डॉलर पर पहुंच गया। लॉकहीड मार्टिन तथा रेथिअन जैसी सैन्य आपूर्तिकर्ता कंपनियों के शेयर बढ़ रहे हैं। चीन और रूस जैसे देश पाकिस्तान तथा ईरान की सैन्य जरूरतें पूरी कर रहे हैं। शांति बहाली के लिए मध्यस्थता आज सिर्फ फोटो खींचने का अवसर बन कर रह गयी है। भारत-पाक संघर्ष के बीच ट्रंप का घुस आना कश्मीर के लिए नहीं था, उसके पीछे सौदेबाज की अपनी छवि निर्मित करने का उनका एकमेव उद्देश्य था। ऐसे में मोदी के दो-टूक जवाब ने बताया कि हमें आपकी नौटंकी नहीं चाहिए।

भारत की जिस विदेश नीति को कभी अप्रभावी समझा जाता था, वह आज मजबूत हुई है। मोदी द्वारा अपने ताकतवर सहयोगी को दो-टूक कहना कि उन्हें तीसरे पक्ष की मध्यस्थता नहीं चाहिए, उभरती ताकत की विदेश नीति में एक बड़े बदलाव का सूचक है। वे दिन बीत गये जब साउथ ब्लॉक समझौते के लिए वाशिंगटन या लंदन का इंतजार करता था। आज भारत अपनी शर्तों पर समझौता करता है। हालांकि शून्य फिर भी बना हुआ है। दुनिया को सत्ता के भूखे अवसरवादियों की नहीं, शांतिदूत की जरूरत है। ऐसे शांतिदूत की, जिनकी नैतिक शक्ति जिमी कार्टर जैसी हो और जो भू-राजनीति में किसिंजर जैसे कुशल हों। जब तक ऐसे व्यक्तित्व का आगमन नहीं होता तब तक लाखों लोगों का विस्थापन होता रहेगा और युद्ध से जर्जर दुनिया विध्वंस के जरिये हथियार उद्योग का पेट भरती रहेगी।

अब कसता जा रहा है नक्सलियों पर शिकंजा

फिरोज बख्त अहमद

नक्सलवाद यदि एक विचार है तो इसे बदलने के लिए काम काम करना चाहिए और यदि विद्रोह है तो इसे कुचलने के लिए काम करना चाहिए। यह सिद्धांत प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का है, जिन्होंने पिछले 11 वर्षों में विचार और संघर्ष दोनों मोर्चों पर अल्ट्रा वाम आंदोलन को खत्म करने में दिन-रात एक कर रखा है। 2014 में जब नरेंद्र मोदी को देश का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी भारतवासियों ने दी तो अपनी दूसरी ही रैली में बस्तर जाकर माओवादियों को ललकारते हुए कहा था, "लोकतंत्र को स्वीकार करिए। सभी समस्याओं का सबसे अच्छा समाधान यही है। बम, बंदूक और पिस्तौल खून-खराबा तो कर सकते हैं लेकिन नया जीवन नहीं दे सकते। हमें खून नहीं, पसीना बहाना है। हमें इस धरती को हरा-भरा बनाना है, लाल नहीं।"

आज 11 साल बाद जब गृहमंत्री यह घोषणा करते हैं कि 2026 तक देश से नक्सलवाद का सफाया हो जाएगा तो इसमें प्रधानमंत्री मोदी की दृढ़ता दिख रही है। यह सही है कि पूर्वी भारत में नक्सल आंदोलन की शुरुआत मुख्य रूप से गरीबी के कारण हुई। तब की भारत सरकार ने राज्यों के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया। उन्हीं दिनों देश में जंगल माफिया, पत्थर माफिया, लकड़ी माफिया, खनिज माफिया पैदा होने लगे। धीरे-धीरे समस्या गहराई तक पहुंचने लगी। फिर यही माफिया अंतर्राज्यीय सीमाओं पर खुलेआम अपनी गैरकानूनी गतिविधियों का संचालन करने लगे। खुफिया अड्डे बनाकर भारी मात्रा में असलहा जमा करने लगे और फिर सीधे सरकार को चुनौती देने लगे। हथियारों के बल पर अपने-अपने क्षेत्र में साम्यवादी शासन भी चलाने लगे। कहने की आवश्यकता नहीं कि नक्सली नेताओं ने राजनीतिक नेताओं को भी कहने में कोई हिचक नहीं दिखाई कि कांग्रेस इन शहरी नक्सलियों को संरक्षण देती रही है। बीजेपी नेतृत्व ने इन शहरी नक्सलियों के खतरनाक एजेंडे का पर्दाफाश पूरी दुनिया के सामने किया। प्रधानमंत्री मोदी ने भी कहा कि हर कोई देख सकता है कि कांग्रेस उन लोगों के साथ कितनी निकटता से खड़ी है जो भारत के लिए अच्छे इरादे नहीं रखते हैं।" बीजेपी नेतृत्व ने वाम विचारधारा को ध्वस्त करने के लिए लोकतांत्रिक तरीकों का बखूबी इस्तेमाल किया।

अपने प्रभाव में ले लिया और अपने लिए एक बौद्धिक गैंग की आड़ भी तैयार कर ली। यह बौद्धिक गैंग उनके हर खून-खराबे को जमीनी संघर्ष का स्वरूप प्रदान करने लगा, जहां हत्या और लूटमार को किसानों और गरीबों के प्रति शोषण के खिलाफ प्रतिक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ऐसे कथित बुद्धिजीवियों को ही शहरी नक्सली का नाम दिया। गृहमंत्री अमित शाह ने यह उनके गढ़ में जाकर उनकी ही विचारधारा को चुनौती दी।

राष्ट्रवाद के आगे दक्षिणपंथी विचारधारा धराशायी होने लगी। सीपीआई, सीपीआई-मार्क्सवादी और सीपीआई-मार्क्सवादी-लेनिनवादी की राजनीति को देश ने एक तरह से खारिज करना शुरू कर दिया। एक समय वह भी था जब 2004 के आम चुनाव में वामपंथियों ने लोकसभा की 61 सीटें जीती थी। अब केरल के अलावा वाम मोर्चा कहीं भी खड़ा होने की स्थिति में नहीं है। बीजेपी नेतृत्व ने वाम मोर्चे के अहंकार, आत्मसंतुष्टि, भ्रष्टाचार और उनकी राजनीतिक हिंसा को मुद्दा बनाया और उन्हें राजनीतिक रूप से अप्रासंगिक बना दिया। माओवादी विद्रोह का मुकाबला करने के लिए स्थानीय लोगों को सशक्त बनाया गया। मोदी सरकार ने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि नक्सलवाद के प्रति ज़ीरो टोलेरेन्स रखेंगे।

यह प्रण किया गया कि 31 मार्च, 2026 तक वामपंथी उग्रवाद को पूरी तरह से खत्म कर देंगे। फिर गृह मंत्री अमित शाह के नेतृत्व में सुरक्षा अभियान, विकास और पुनर्वास एक एकीकृत योजना लागू की गई। ऑपरेशन कगार चला कर सैकड़ों नक्सलियों का खात्मा किया गया और हजारों को आत्मसमर्पण के लिए तैयार किया गया। परिणाम भी सामने आया। 2014 में जहां 126 जिले नक्सलवाद से प्रभावित थे वहीं 2025 में केवल 6 सबसे अधिक प्रभावित जिले ही बच गए हैं। नक्सल प्रभावित जनजातीय क्षेत्रों में स्कूलों और स्वास्थ्य सेवा केंद्रों का व्यापक विस्तार किया गया। हथियार डाल चुके नक्सलियों के लिए पुनर्वास नीति अपनाकर माओवादियों को मुख्यधारा में फिर से शामिल होने का मार्ग प्रशस्त किया गया।

गृह मंत्री अमित शाह ने बल, सुशासन और समावेशी आउटरीच का एक त्रिस्तरीय फार्मूला अपनाकर नक्सलवाद को खत्म करने का समयबद्ध कार्यक्रम तैयार कर लिया है। जो हथियार डालने के लिए तैयार नहीं हो रहे, उन्हें खत्म करने का अभियान चलाया जा रहा है। केवल इसी साल 200 से अधिक हथियारबंद नक्सलियों का सफाया किया जा चुका है। इसके अलावा 600 नक्सलियों ने आत्मसमर्पण भी किया है। आकड़े बताते हैं कि 30 मई 2025 तक 2824 नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया है। आज मोदी सरकार के इस दौर में नक्सली खतरे पर नियंत्रण को महसूस किया जा सकता है। जो आदिवासी नक्सलियों के समर्थन में होने के लिए मजबूर किये गए थे वे ही अब नक्सल के खिलाफ आवाज बुलंद कर रहे हैं। आदिवासी अधिकारों के लिए काम जिस गति से हो रहा है उससे नक्सल समस्या को एक तय समय सीमा में हल करने के प्रति विश्वास पैदा होने लगा है केवल हथियारों से समाजवाद आ सकता है, इस धारणा को बदलने में सफलता मिल रही है। पीएम मोदी की यह अपील की कि 'पृथ्वी को लाल नहीं हरा बनाओ'..परवान चढ़ रही है।

आपातकाल का सच- जैसा मैंने देखा

मनु शर्मा कटारिया

सन् 1975 मेरी आयु लगभग 7 वर्ष की रही होगी। सदैव की भांति सुबह उठने पर देखा माता जी, श्रीमती आशा शर्मा किसी काम में व्यस्त हैं किंतु प्रतिदिन के ठीक विपरीत उनके चेहरे पर कुछ तनाव भी अनुभव किया। पिताजी, स्वर्गीय श्रीमान रमेश प्रकाश शर्मा का घर पर ना होना हमारे लिए सामान्य सी बात थी। विद्यालय से घर आते समय अपनी गली में पहुंचते ही इस्त्री करने वाली की बेटी जो मेरी हम उम्र ही थी, जिसके साथ मैं पार्क में अक्सर इकट्ठे खेलती थी, कहने लगी कि तुम्हारे पिता जी को तो कल रात पुलिस पकड़ कर ले गई। यह बात सुनकर मुझे क्रोध आया तथा अपमानित भी अनुभव किया। घर आकर माता जी से पूछा तो वे बोली ऐसा कुछ नहीं है, पिताजी तो करनाल गए हैं।

पिताजी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ता के रूप में दिल्ली प्रांत के सह-कार्यवाह का दायित्व संभाल रहे थे एवं एक स्कूल में अर्थशास्त्र के अध्यापक थे, जो कि आपातकाल में बंद कर दिया गया था। आपातकाल के दौरान पुलिस ढूंढ-ढूंढ कर संघ के स्वयंसेवकों को पकड़ रही थी, उन्हें जेल में डाल रही थी और उन पर कई तरह के अत्याचार कर रही थी। समाज के ऐसे लोग जो तत्कालीन कांग्रेस सरकार के इस लोकतंत्र विरोधी एवं अत्याचारी आपातकाल के विरुद्ध खड़े हो सकते थे इंदिरा गांधी की सरकार उन सभी की आवाज को कुचलने के लिए जेलों में बंद कर रही थी। यही कारण था कि पिताजी को भी बंदी बना लिया गया था किंतु कुछ समय पश्चात ही, पूरी तरह उनकी जानकारी पुलिस को न मिल पाने के कारण तथा जो मैजिस्ट्रेट उनका केस देख रहा था उसके सुझाव के कारण उन्हें बेल मिल गई। बाद में पता चला कि वह मैजिस्ट्रेट विद्यार्थी परिषद का पूर्व कार्यकर्ता था।

इसके बाद हम सभी दिल्ली के शक्ति नगर एक्सटेंशन के एक घर में भूमिगत होकर रहने लगे। पिताजी और विश्वनाथ जी दोनों के नाम भी बदल दिए थे ताकि पुलिस उन तक न पहुंच सके। पिताजी और संघ के वरिष्ठ प्रचारक विश्वनाथ जी इन दोनों को ही शुगर की बीमारी पता चली थी इसलिए उनका ठीक से भोजन इत्यादि समय पर हो सके तो विश्वनाथ जी भी हमारे साथ ही रहने लगे। उन वर्षों में विश्वनाथ जी और इंद्रेश जी जिनका घर में आना-जाना होता था, हम इन्हें ही अपने चाचा जी मानते थे क्योंकि अन्य कोई रिश्तेदार हमारे घर पर आ नहीं सकते थे। इन वर्षों में हम भी किसी रिश्तेदार से न मिल पाए, न उनके घर जा पाए और ना वह हमारे घर आ पाए। उन दिनों गली में खेलने का बहुत प्रचलन रहता था लेकिन अपनी सारी मित्र मंडली के बीच से मैं और मेरी बहन अचानक गायब हो गए थे।

विश्वनाथ जी के साथ बचपन के वो पल बहुत ही सुंदर थे। वे हमें बहुत अच्छी-अच्छी कहानी सुनाते थे, हमसे बातें करते थे और हमारी शैतानियों पर रोक भी लगाते थे। एक बार माताजी सुबह अपने स्कूल के लिए निकल गई और मैं और मेरी बहन तैयार होकर निकले किन्तु देरी के कारण हमारे स्कूल की बस छूट गई तो हम घर आ गए और हमने कहा कि बस निकल गई है इसलिए अब हम स्कूल नहीं

जाएंगे तो विश्वनाथ जी ने कहा कि स्कूल की छुट्टी तो नहीं कर सकते और दंड स्वरूप वह हमें उस दिन पैदल स्कूल तक छोड़ कर आए और हमें छुट्टी नहीं करने दी। यह अनुशासन की सीख हमें उनसे मिली।

मेरी और मेरी छोटी बहन दोनों की पढ़ाई झंडेवालान स्थित सरस्वती शिशु मंदिर से चल रही थी। जब आपातकाल लगा और आपातकाल में इन शिशु मंदिरों को भी बंद कर दिया गया जिस कारण हमें किसी अन्य विद्यालय में दाखिला लेना पड़ा। अचानक इस तरह अपने सभी मित्रों, सहपाठियों को छोड़ देना, उनसे बिना बातचीत किए कहीं चले जाना बहुत अजीब था।

माताजी दिल्ली सरकार के स्कूल में पढ़ाती थीं। पिताजी भी दिल्ली के एक स्कूल में शिक्षक थे लेकिन वह अब अपने काम पर नहीं जा सकते थे तो वह घर पर ही रहते थे। तो उसका असर यह हुआ कि जब मुझे अपने विद्यालय में अपने परिवार पर एक निबंध लिखने के लिए कहा गया तो मैंने लिखा कि माय मदर इज ए वर्किंग लेडी एंड माय फादर इज ए होममेकर। इस तरह की बहुत सारी घटनाएं उस समय घट रही थी। फिर अचानक हमने अपना वह घर भी बदला और हमें किसी दूसरे घर गुजरांवाला टाउन जाकर रहना पड़ा।

आपातकाल मेरे लिए एक अलग तरह का अनुभव था क्योंकि मैंने बहुत कुछ सीखा, मुझे विश्वनाथ जी जैसे महान व्यक्तित्व का समय मिल सका। हमारी माताजी विद्यालय में काम कर रही थी इसलिए हमारे परिवार को बहुत अधिक आर्थिक समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ा किंतु ऐसे बहुत सारे परिवार थे जिनमें सिर्फ एक ही व्यक्ति की आय थी और वह जेल चले गए थे,उनसे जुड़ी संस्थाओं को बंद कर दिया गया था एवं उनके परिवार पर अत्याचार हो रहे थे। कांग्रेस की सरकार ने नर पिशाचों की भांति नसबंदी जैसा अत्याचार जनता पर किया।

यह हमारे देश के लोकतंत्र के इतिहास का निश्चित रूप से काला अध्याय है जहां सिर्फ अपने भ्रष्टाचार को छुपाने के लिए, अन्यायपूर्ण शासन को बनाए रखने के लिए लोकतंत्र की गरिमा एवं न्यायालय के आदेश की अवहेलना करने में तत्कालीन श्रीमती इंदिरा गांधी की कांग्रेस सरकार ने कोई समय व्यर्थ नहीं किया और अपने अधिकारों का दुरुपयोग करते हुए सिर्फ अपनी सरकार को बचाने के लिए लाखों लोगों के जीवन को दुखों से भर दिया। कई लोगों की जेल में मृत्यु हुई, अनगिनत लोगों के साथ अन्य कई प्रकार के अन्याय हुए। दुर्भाग्य से यह सब तत्कालीन जनता के द्वारा चुनी हुई, स्वतंत्र देश की सरकार कर रही थी। भारत की भावी पीढ़ी को लोकतंत्र में जन सामान्य की भूमिका का महत्व, लोकसंग्रह, लोकजागरण एवं लोकमत परिष्कार के महत्व को समझना है तो आपातकाल के इतिहास को अवश्य पढ़ना चाहिए।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

हिन्दुस्तान
1936 सत्य • सार्थक • सदैव

आपातकाल की याद

आजाद भारत की गौरवशाली यात्रा में आपातकाल को एक शर्मनाक विचलन के रूप में याद किया जाता है, तो यह उचित ही है, क्योंकि वह कदम न सिर्फ आजादी के हमारे महानायकों, बल्कि 54 करोड़ से अधिक भारतीयों की आकांक्षाओं के साथ भी एक बड़ा धोखा था। इसकी स्मृतियों को इसलिए भी जिंदा रखे जाने की जरूरत है, ताकि हमारा राजनीतिक वर्ग फिर से उस भूल को दोहराने की हिमाकत न कर सके। हमारे चारों तरफ लोकतांत्रिक मूल्यों का हनन जिस तरह बढ़ रहा है और एक के बाद दूसरे देश सैन्य तानाशाही या राजनीतिक निरंकुशता की गिरफ्त में फंस रहे हैं, उसे देखते हुए तो इस प्रकरण को याद करने की आवश्यकता और बढ़ जाती है। वैसे भी, देश की एक विशाल आबादी इस दुखद घटना के बाद पैदा हुई है और उसके गुमान में भी नहीं है कि जब अभिव्यक्ति पर पहरे बिठा दिए जाते हैं और तमाम मौलिक अधिकार छीन लिए जाते हैं, तब जिंदगी किस कदर दुश्वार होती है या आजादी कितनी बेमानी रह जाती है।

आज से ठीक पचास साल पहले 25 जून, 1975 को इंदिरा गांधी सरकार ने अनुच्छेद-352 का उपयोग करते हुए देश में आपातकाल लागू किया था। हालांकि, उसके पहले भी दो बार 1962 और 1971 में राष्ट्रीय आपातकाल लागू हुए थे, मगर दोनों बार बाहरी आक्रमण की सूरत में इसका उपयोग किया गया था। 1975 में आंतरिक उपद्रव के बहाने थोपे गए आपातकाल के दौरान सरकारी दमन ने तो उस ब्रिटिश सत्ता की याद ताजा कर दी थी, जिससे मुक्ति पाने के लिए देश ने दशकों तक संघर्ष किया था और हजारों जानें कुर्बान हुई थीं। इसकी कीमत इंदिरा गांधी और उनकी पार्टी को अगले आम चुनाव में चुकानी पड़ी। न सिर्फ वह खुद चुनाव हार गईं, बल्कि कांग्रेस पार्टी 154 सीटों पर सिमट आई थी। इस चुनाव ने भारतीय लोकतंत्र की जीवंतता को दुनिया के सामने साबित किया था।

देश की बड़ी आबादी इस दुखद घटना के बाद पैदा हुई है और उसके गुमान में भी नहीं है कि जब अभिव्यक्ति पर पहरे बिठा दिए जाते हैं, तब आजादी कितनी बेमानी रह जाती है।

आपातकाल की एक विलक्षण बात यह भी थी कि उस दौरान सरकारी विभागों के कामकाज में अभूतपूर्व चुस्ती व मुस्तैदी दर्ज की गई। महान स्वतंत्रता सेनानी और भूदान आंदोलन के जनक विनोबा भावे ने तो उसे 'अनुशासन पर्व' तक कह डाला था। मगर वह अनुशासन शासन के डंडे से संचालित था, आत्म-प्रेरित नहीं। आज अपने सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार का जो आलम हम देख रहे हैं, उसे देखते हुए क्या हम कह सकते हैं कि उस अनुशासन पर्व से हमने कुछ सीखा है? क्या हम यह भी कह सकते हैं कि हमारी लोकतांत्रिक संस्थाएं ज्यादा मजबूत हुई हैं? अगर हुई होतीं, तो 'डेमोक्रेसी इंडेक्स' में हमारी तस्वीर इतनी खराब नहीं दिखती। इस वर्ष 179 देशों की इस सूची में हम 100वें नंबर पर हैं। लोकतंत्र का मतलब सिर्फ चुनाव और सत्ता का बाधारहित हस्तांतरण नहीं होता, उसके हरेक संस्थान की कार्यशैली में इसकी खूबी झलकनी चाहिए। हमारे संविधान-निर्माताओं ने विशाल राष्ट्र की एकता और अखंडता को देखते हुए केंद्र को काफी अधिकार संपन्न बनाया है, मगर ऐसा करते हुए भी उन्होंने न्यायपालिका और विधायिका को उस पर अंकुश रखने वाली शक्तियां प्रदान की हैं। आपातकाल इस संतुलन को विकृत करने की ही विफल कोशिश थी। इसलिए बहुत जरूरी है कि लोकतंत्र के सभी स्तंभ अपने-अपने दायरे में काम करें। एक-दूसरे की शक्तियों के अतिक्रमण से न सिर्फ अराजकता बढ़ती है, बल्कि इससे जो गतिरोध पैदा होगा, वह देश की प्रगति को भी चोट पहुंचाएगा। आपातकाल से आज यही सबक लेने की जरूरत है।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 25 जून, 1950

सराहनीय कदम

भारत सरकार ने 24 जून से कागज पर से सब प्रकार का नियंत्रण हटाकर एक अभिनन्दनीय कार्य किया है। लोक-स्वतंत्रता में प्रचार का जो महत्व है, वह किसी से छिपा नहीं और प्रचार के साधनों में सबसे मुख्य लेखनी द्वारा अपने विचारों को व्यक्त करना है। अतः आज का स्वतंत्रता-प्रेमी नागरिक अवश्य ही इस विनियंत्रण का स्वागत करेगा।

बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, कोचीन, अर्नाकुलम आदि नगरों में और आसाम तथा मणिपुर राज्यों में अगले मास से पेट्रोल का राशनिंग भी समाप्त करने की घोषणा की गई है। अन्य क्षेत्रों के पेट्रोल के कोटे में भी 15 प्रतिशत की वृद्धि की गई है, जिससे वहां कारों और मोटरसाइकिलों के मालिकों के लिए राशन में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि हो जायेगी। अभी सारे भारत में पेट्रोल का राशनिंग समाप्त करने में कुछ कठिनाइयां हैं, लेकिन सितम्बर में इस स्थिति पर फिर से विचार किया जायेगा और तब सभी जगह राशनिंग तोड़ दिये जाने की आशा है।

लाल सागर में जहाज दुर्घटना : गत सोमवार को लाल सागर में एक भारतीय जहाज 'इन्डियन एन्टरप्राइज' के साथ भयंकर दुर्घटना हो गई। जब वह ब्रिटेन से भारत सरकार के लिए 580 टन विस्फोटक पदार्थ लेकर कलकत्ता जा रहा था, तो उसमें भीषण विस्फोट हो गया। फलस्वरूप संपूर्ण जहाज नष्ट हो गया और उसके प्रायः सभी अधिकारी तथा कर्मचारी समुद्र के गर्भ में समा गये। जहाज के 74 यात्रियों में से 70 भारतीय थे। उनमें एक ही व्यक्ति बचाया जा सका, जिसे विस्फोट ने दूर समुद्र में फेंक दिया था और बाद में जिसे एक नार्वे के जहाज ने उठा लिया। दुर्घटना के कारण का अभी कुछ पता नहीं चल सका है, लेकिन कुछ क्षेत्रों का खयाल है कि उसके पीछे कोई विध्वंसात्मक कार्रवाई है। जांच आरंभ की जा चुकी है।

पश्चिमी बंगाल और पूर्वी बंगाल : पश्चिमी बंगाल और पूर्वी बंगाल के बीच निष्क्रांतों के प्रवजन में दिन-पर-दिन कमी होती जा रही है और अपने घरों को वापस जाने वाले व्यक्तियों की संख्या उत्तरोतर बढ़ रही है। यह उल्लेखनीय है कि दूसरे प्रकार के व्यक्तियों में महिलाओं तथा बच्चों का भी अच्छा अनुपात रहता है, जो एक स्वच्छ चिन्ह है।... बिहार और आसाम में हजारों व्यक्तियों को फिर बसाया जा चुका है।

सिर्फ दिखावे के लिए न हो संघर्ष-विराम

यहां स्कैन करें

तलमीज अहमद | पूर्व राजनयिक

एशिया में अमन-ओ-अमान की सख्त जरूरत है। मगर यहां तब तक शांति नहीं कायम हो सकती, जब तक कि फलस्तीन समस्या का स्थायी समाधान नहीं हो जाता।

लगता है, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप इजरायल और ईरान के बीच संघर्ष-विराम कराने में सफल हुए हैं। बीते करीब दो हफ्तों से इजरायल इस उम्मीद में ईरान पर हमले कर रहा था कि वह उसकी परमाणु क्षमताओं को खत्म कर देगा। मगर पहले दिन ही यह तय हो गया कि उसका यह दांव सही नहीं है। नतीजतन, इजरायली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने अपनी रणनीति बदलते हुए दो काम किए। पहला, अपना ध्यान ईरान में सत्ता-परिवर्तन पर लगाया और दूसरा, अमेरिका को सहयोगी बनाने का प्रयास किया। खामेनेई का पतन अमेरिका को भी आकर्षित करता रहा है।

मगर इसने ट्रंप की दुविधा बढ़ा दी, क्योंकि वह मध्य-पूर्व के तनाव में अमेरिका को शामिल करने के मुखर आलोचक रहे हैं। उन्होंने पूर्व में अफगानिस्तान, इराक और लीबिया में हुई अमेरिकी कार्रवाई की न सिर्फ निंदा की है, बल्कि उस दौर के राष्ट्रपतियों को भी निशाने पर लिया है। जाहिर है, नेतन्याहू के लिए राह आसान नहीं थी। उन्हें अमेरिकी मदद भी चाहिए थी और ट्रंप के ना-नुकुर का जवाब भी खोजना था। वह सफल रहे।

दरअसल, डोनाल्ड ट्रंप एक अति-महत्वाकांक्षी राजनेता हैं। वह खुद को 'ग्लोबल स्टेट्समैन', यानी वैश्विक राजनेता के रूप में पेश करना चाहते हैं या फिर 'ग्लोबल वॉरियर' (वैश्विक योद्धा) के रूप में। हालांकि, वॉरियर से अधिक वह स्टेट्समैन को तवज्जो देते हैं, क्योंकि नोबेल शांति पुरस्कार के इच्छुक रहे हैं। ग्लोबल वॉरियर का भी अपना आकर्षण है, खासतौर से तब, जब संघर्ष सीमित समय का और तीव्र हो। इससे असाधारण छवि बनती है, जैसी जूलियस सीजर की रही है। नेतन्याहू ने बहुत चालाकी से ट्रंप के मन को छुआ। वह उनको यह समझाने में सफल रहे कि सीमित और तीव्र कार्रवाई से ईरान की परमाणु क्षमता नष्ट की जा सकती है और फिर बाद में शांति-प्रक्रिया को आगे बढ़ाकर वहां शासन में बदलाव किया जा सकता है। अमेरिका इसीलिए इस युद्ध में शामिल हुआ। मगर ट्रंप को जल्द ही एहसास हो गया कि ईरान में सत्ता-परिवर्तन का भविष्य नहीं है। उन्होंने खामेनेई के खिलाफ कुछ बयान जरूर दिए, लेकिन उतनी संजीदगी नहीं दिखाई।

अमेरिका का हमला करना नेतन्याहू की एक बड़ी कूटनीतिक जीत थी। दिलचस्प है कि बिल क्लिंटन से लेकर अब तक बीते तीन दशक में अमेरिकी राष्ट्रपतियों को साध पाने में नेतन्याहू खासा सफल रहे हैं। इस दौरान बराक ओबामा ही एकमात्र ऐसे राष्ट्रपति रहे, जिन्होंने अपनी अनिच्छा जताई थी, लेकिन उनके कार्यकाल में भी नेतन्याहू अमेरिकी संसद में परमाणु मसले पर अपनी बात रख चुके हैं। बहरहाल, अमेरिका ने ईरान की परमाणु क्षमताओं पर आक्रमण जरूर किया, पर अभी तक हम यह नहीं जान सके कि इससे ईरान को कितना नुकसान हुआ है? ट्रंप ने भी इस आकलन का इंतजार नहीं किया और तुरंत 'जीत' की घोषणा कर दी। उन्होंने अपने बयान में ढांचागत नुकसान की बात कही और शांति-प्रक्रिया की तरफ बढ़ने का एलान करते हुए संघर्ष-विराम की घोषणा कर दी।

इस युद्ध में इजरायल जहां अमेरिका को अपना सहयोगी बनाने में सफल रहा, वहीं संयुक्त राष्ट्र को भी साधने में उसे सफलता मिली। उसने ऐसी भूमिका तैयार की कि आलोचना की स्थिति में उसके लिए यह साबित करना आसान हो जाएगा कि अमेरिका और इजरायल ने मिलकर ईरान पर हमला किया है। जाहिर है, अमेरिका ने यहां अपने लिए बड़ा खतरा मोल लिया। उसे अंदेशा था कि ईरान जवाब में उसके ठिकानों को निशाना बना सकता है। मगर ईरानी नेता कहीं अधिक व्यावहारिक निकले। उन्होंने युद्ध रोकना ही मुनासिब समझा। वैसे भी, उनके लिए यह थोपी गई जंग थी, जिससे जल्द बाहर निकलना जरूरी था।

मेरा मानना है कि ईरान के परमाणु कार्यक्रम को इन हमलों से कोई बड़ा नुकसान नहीं पहुंचा है। यही कारण है कि तेहरान ने संघर्ष-विराम का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। अगर वह अमेरिकी ठिकानों पर हमला करता रहता, तो मुमकिन है कि अमेरिका सख्त कार्रवाई करता, जिसका नुकसान ईरान को ही होता।

फिलहाल, दोनों पक्ष अपनी-अपनी जीत का दावा कर रहे हैं। मगर वास्तव में ईरान की जवाबी कार्रवाई से इजरायल चौंक गया था। वह इसके लिए तैयार नहीं था। इस युद्ध में उसका परिचय तेहरान की घातक मिसाइलों और ड्रोन से हुआ है, जिनके कारण नेतन्याहू को तत्काल अमेरिकी मदद की दरकार हुई। इजरायली प्रधानमंत्री की एक बुरी आदत है। वह घोषणाएं कर तो देते हैं, लेकिन ज्यादातर को पूरा नहीं कर पाते। जैसे-गाजा में भी उन्होंने तुरंत जंग खत्म करने का एलान किया था, लेकिन 20 से अधिक महीनों से यह संघर्ष चल रहा है। ईरान के साथ भी यही डर बना हुआ था। लिहाजा, अमेरिकी दखलंदाजी से एकमात्र अच्छी बात यह हुई कि जो लड़ाई लंबी खिंच सकती थी, उसमें जल्द विराम लगाना संभव हो पाया। इधर, ईरान को दो मोर्चों पर सफलता मिलती दिखती है। पहला, वह अपनी परमाणु क्षमता को एक सीमा तक बचाने में सफल रहा, और दूसरा, उसने इजरायल को खासा ढांचागत नुकसान पहुंचाया है।

अभी यह कहना जल्दबाजी होगी कि ईरान की परमाणु क्षमताओं को कितना नुकसान हुआ है, लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि युद्ध से परमाणु कार्यक्रम शायद ही रोके जा सकते हैं। बेशक, शुरुआती वक्त में ऐसा करना संभव होता है, जैसा कि इराक और सीरिया में किया गया, लेकिन ईरान बीते ढाई दशकों से इस पर काम कर रहा है, इसलिए उसके चंद वैज्ञानिकों को मारकर या उस पर हमला करके उसके परमाणु कार्यक्रम को नहीं रोका जा सकता। अब तो यह भी कहा जाने लगा है कि वह कहीं अधिक तेजी से अपने कार्यक्रम में आगे बढ़ सकता है, क्योंकि उत्तर कोरिया और लीबिया का उदाहरण उसके सामने है। लीबिया ने अपना परमाणु कार्यक्रम छोड़ दिया, जिसके बाद उसके नेता को मार गिराया गया था, जबकि उत्तर कोरिया के नेता को सभी नापसंद करते हैं, पर उसके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जाती, क्योंकि यहां परमाणु हथियार हैं।

जाहिर है, ऐसे मसलों का हल कूटनीति में छिपा है। हमें इस संघर्ष-विराम से आगे सोचना होगा। इस क्षेत्र में अमन-ओ-अमान की सख्त जरूरत है। मगर यहां तब तक शांति नहीं पसर सकती, जब तक फलस्तीन की समस्या का स्थायी समाधान नहीं हो जाता। साफ है, इस मसले पर इजरायल के रुख से ही पश्चिम व मध्य एशिया में स्थिरता तय होगी।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नास्तिकों की बढ़ती आबादी के बावजूद आस्था असरदार

यहां स्कैन करें

मनु जोसेफ | पत्रकार और उपन्यासकार

दुनिया में धर्म त्यागने वालों या यूं कहें कि नास्तिकों की संख्या में बढ़ोतरी हो रही है। अमेरिका स्थित थिंक टैंक प्यू रिसर्च सेंटर की नई रिपोर्ट के अनुसार, 2010 से 2020 के बीच नास्तिकों की संख्या में 27 करोड़ की बढ़ोतरी हुई है। यह वृद्धि मुसलमानों की संख्या में वृद्धि के बाद दूसरे स्थान पर है। दुनिया में इस समय नास्तिकों की आबादी लगभग 1.9 अरब है, जो दुनिया की कुल आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा है, यानी विश्व में हर चौथा व्यक्ति नास्तिक है। पिछले दशक में नास्तिकों की आबादी 23.3 प्रतिशत से बढ़कर 24.2 फीसदी हो गई है।

'प्यू रिपोर्ट' को दुनिया में सर्वाधिक उद्धृत किया जाता है और यह स्रोतों में से एक है। दुनिया भर के देशों की जनगणना के आंकड़ों, जनसांख्यिकीय अध्ययनों और सर्वेक्षणों का उपयोग करके यह रिपोर्ट तैयार की जाती है। इस रिपोर्ट के अनुसार, इस्लाम सबसे तेजी से बढ़ने वाला धर्म है। 2010 से 2020 के बीच दुनिया की मुस्लिम आबादी में लगभग 34.7 करोड़ की वृद्धि हुई, जो लगभग पूरी तरह से जन्म पर आधारित है। इस दशक में इस्लाम ने वैश्विक आबादी में अपना हिस्सा 23.9 प्रतिशत से बढ़ाकर 25.6 प्रतिशत कर लिया। दुनिया की आबादी में हिंदुओं की हिस्सेदारी लगभग 15 प्रतिशत पर बनी रही, जबकि ईसाइयों की हिस्सेदारी में दो प्रतिशत की कमी आई है। मुसलमानों के बाद दुनिया की आबादी में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने वाला एकमात्र समूह नास्तिकों का है। प्यू रिपोर्ट के अनुसार, धर्मांतरण से किसी भी धर्म की आबादी में कोई अहम बदलाव नहीं आया है। जो अधार्मिक यानी नास्तिक बनते हैं, वे बहुत सोच-समझकर बनते हैं।

नास्तिक बढ़ रहे हैं, पर इसके कारणों को लेकर भ्रम नहीं पालना चाहिए। कुछ जगहों से भगवान विदा हो सकते हैं, पर उनके झंडे बने रहेंगे!

दरअसल, आप करीब से देखेंगे, तो यह पूरी तस्वीर कुछ अलग दिखेगी। नास्तिकों का उदय दुनिया में किसी तर्क की लहर के कारण नहीं हुआ है। ज्यादातर जगहों पर ये पुराने तरीके से ही फैल रहे हैं। चीन में सरकार द्वारा धर्म को लंबे समय से त्याग दिया गया है, पश्चिमी ईसाई राष्ट्रों में आस्था पहले से ही परंपरा में तब्दील हो चुकी है। जापान जैसे देशों में बौद्ध धर्म एक सामान्य दर्शन बन गया है। ऐसी जगहों पर लोग बहुत पहले से ईश्वर को नहीं मान रहे। अकेले चीन में दुनिया भर के नास्तिकों की 67 प्रतिशत आबादी बसती है। अमेरिका में लगभग 10 करोड़ लोग, तो जापान व पश्चिमी यूरोप में 73 करोड़ (लगभग 57 प्रतिशत जापानी) वयस्क नास्तिक हैं। परंपरागत रूप से एशिया के बौद्ध व समृद्ध ईसाई देशों में नास्तिकों की सर्वाधिक आबादी रहती है। प्यू रिपोर्ट से यह भी स्पष्ट हुआ है कि दुनिया के सबसे अस्थिर इलाकों के धर्मों की संख्या में कोई गिरावट नहीं आई है। दुनिया के प्रमुख धर्मों- इस्लाम और हिंदू में कमी नहीं आई है।

ईसाई धर्म में भले गिरावट दर्ज की गई हो, मगर यह दुनिया के सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका में एक राजनीतिक पहचान के रूप में फिर से उभरा है। हालांकि, मेरी राय में यह पुनरुत्थान ईश्वर में भरोसा बढ़ने के कारण नहीं हुआ है। दरअसल, आस्था का युग भले खत्म हो रहा हो, पर पहचान का युग अभी शुरू ही हुआ है। ऐसा हम बार-बार और लगातार देखते हैं। गरीब देशों के अमीर बच्चे पश्चिम जाते हैं, दुनिया भर की बातें करते हैं, लेकिन उनकी चिंताएं आमतौर पर अपने समुदाय या धार्मिक समूह की ही होती हैं। नास्तिक मुसलमान भी हैं। धर्मविहीन हिंदू भी राष्ट्रवादी हैं। धार्मिक रूप से असंबद्ध लोग अक्सर किसी समूह से बहुत ज्यादा जुड़े होते हैं।

वास्तव में, यहां जिस एक बात पर कम ध्यान दिया जाता है, वह यह है कि आस्तिक लोग दूसरे धर्म या संप्रदाय में यकीन रखने वाले लोगों की भावनाओं को बेहतर समझते हैं। उदाहरण के लिए, जब सबरीमाला मंदिर विवाद छिड़ा, तो कुछ धर्मनिष्ठ मलयाली ईसाई भी नाराज हो गए। वे आस्था के प्राचीन सिद्धांतों के प्रति सहानुभूति रखते थे। इस आस्था को तर्क से कभी मिटाया नहीं जा सकता है।

तो हां, नास्तिक बढ़ रहे हैं, लेकिन हमें इसके कारणों को लेकर कोई भ्रम नहीं पालना चाहिए। कुछ जगहों से भगवान विदा हो सकते हैं, लेकिन उनके झंडे और जयकारे बने रहेंगे!

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

समरसता की लय न टूटे

समाज के लिए आध्यात्मिक महत्व क्या है? समाज का अर्थ है, एक समूह का सामूहिक आंदोलन, जिसमें सभी सदस्य एकमत होकर सामान्य लक्ष्य की ओर साथ बढ़ने का संकल्प लेते हैं। जब लोग यह निर्णय लेते हैं कि हम सब साथ चलेंगे, सुख-दुख में एक-दूसरे के साथ रहेंगे, तभी वह समूह समाज कहलाने योग्य बनता है।

इस सामूहिक यात्रा में कुछ लोग आगे बढ़ सकते हैं, कुछ पीछे रह सकते हैं, कुछ शारीरिक या मानसिक पीड़ा के कारण चलने में असमर्थ हो सकते हैं, तो कुछ गिर भी सकते हैं। ऐसे में, साथ चलने वाले लोग मुसीबतजदा लोगों के हाथ थाम उठा देते हैं। उन्हें अपना कंधा दे देते हैं, ताकि जीवन की राह पर वे आगे बढ़ सकें। जो लोग अपने पीछे चल रहे साथियों की चिंता नहीं करते, वे समाज के सच्चे सदस्य नहीं होते। समाज के संदर्भ में आध्यात्मिक मार्ग यही है कि सब मिलकर साथ आगे बढ़ें, और इस यात्रा के दौरान हर सदस्य की जिम्मेदारी को सभी मिलकर निभाएं।

जो लोग चल नहीं सकते, उन्हें उठाकर ले चलना होगा, ताकि समाज की सामूहिक लय बनी रहे। मानव समाज में शिक्षा का भी गहरा अंतर है। एक ही परिवार में पुरुष शिक्षित हो सकता है, लेकिन उसकी पत्नी अशिक्षित हो सकती है; पत्नी विदुषी और पति कम पढ़ा-लिखा हो सकता है, जिससे दोनों के बीच एक व्यापक दूरी बन जाती है। ऐसे असंतुलन को मिटाना अत्यंत आवश्यक है। भले ही हमारी गति तेज न हो, लेकिन हमें उन लोगों को भी साथ लेकर चलना होगा, जो पीछे छूट गए हैं या धीमे चल रहे हैं।

अगर सबको साथ लेकर चलने में मेरी गति थोड़ी धीमी हो जाए, तो भी यह स्वीकार करना होगा, क्योंकि सच्चाई यही है। हमें साथ चलना है, यही परम सत्य है। इस यात्रा के हर यात्री पर यह दायित्व लागू है कि वे इस सामूहिक यात्रा में भाग लेना चाहते हैं, तो उन्हें शारीरिक और मानसिक रूप से मजबूत बनना होगा, और इससे भी आगे जाकर कुछ अतिरिक्त शक्ति अर्जित करनी होगी। उन्हें असाधारण बनना होगा।

मैंने पहले कहा था, यदि किसी व्यक्ति के पास कपड़े नहीं हैं और वह ठंड से कांप रहा है, भूखा है और पैसे नहीं हैं, तो वह पैसे से भोजन और वस्त्र प्राप्त कर सकता है। इसीलिए संस्कृत में पैसे को 'अर्थ' कहा गया है। परंतु यह भी समझना जरूरी है कि अर्थ 'परमार्थ' नहीं है। परमार्थ वह है, जो व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक कष्टों को स्थायी रूप से दूर कर दे, जबकि पैसे से खरीदा गया भोजन केवल अस्थायी राहत देता है। इसलिए परमार्थ का लक्ष्य होना चाहिए एक ऐसा जीवन, जहां त्रिविध कष्टों से स्थायी मुक्ति मिले और इसी दिशा में हमें एकजुट होकर बढ़ना है।

अर्थ 'परमार्थ' नहीं है। परमार्थ वह है, जो व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक कष्टों को स्थायी रूप से दूर कर दे, पैसे से खरीदा गया भोजन केवल अस्थायी राहत देता है।

श्री श्री आनंदमूर्ति

कैलाश सत्यार्थी | नोबेल विजेता

गांधी के हत्यारे नहीं जानते थे कि कुछ लोग गोली मार देने से मरते नहीं, बल्कि अमर हो जाते हैं। युद्धों के उन्माद में अंधी होती जा रही दुनिया में आज बापू के विचारों की बहुत जरूरत है।

भारतीय लोकतंत्र का वह काला अध्याय

25 जून, 1975 को देश में एक काले अध्याय की शुरुआत हुई। वह आपातकाल का दौर था, जिसमें देश के तमाम दिग्गज विपक्षी नेताओं को रातोंरात जेलों में डाल दिया गया। प्रेस सेंसरशिप लगाने के साथ ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर ताले जड़ दिए गए। जिसने भी सरकार के खिलाफ बोलने की कोशिश की, उसे हवालात में डाल दिया गया। जेल में तो जुल्म होते रहे, जेल के बाहर भी लोगों में, विशेषकर विरोध करनेवालों के परिजनों में भय व्याप्त रहा। जहां-तहां गिरफ्तारियां हुईं। हालांकि, ऐसा नहीं था कि इससे आम आदमी खुश था। आपातकाल उनके लिए भी आफतकाल ही था। बहरहाल, 19 महीने गुजरे और एक दिन जयप्रकाश नारायण समेत विपक्षी नेताओं को रिहा कर दिया गया। लोकसभा भंग कर दी गई और नए चुनाव हुए। इसमें जनता पार्टी की जीत के बाद इंदिरा गांधी को सत्ता छोड़नी पड़ी। आपातकालीन बंधनों से देश मुक्त हुआ। आज भी उन दिनों को याद करने पर शरीर में सिहरन दौड़ जाती है। ऐसे में, कामना यही है कि देश में भले ही पक्ष-विपक्ष का राजनीतिक संघर्ष चलता रहे, किंतु फिर कभी देश को स्वार्थ रूपी सत्ता के 'आपातकाल' का मुंह न देखना पड़े, न अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता छीनी जाए और न ही लोकतंत्र पर कभी ऐसा दाग लगने पाए, जिससे आमजन में भय पैदा हो।

शकुंतला महेश नेनावा, टिप्पणीकार

आपातकाल भारत के लोकतांत्रिक और सांविधानिक इतिहास में एक बदनुमा दाग साबित हुआ है। 1971 के लोकसभा चुनाव में इंदिरा गांधी ने समाजवादी नेता राजनारायण को पराजित किया था। इसके बाद कदाचार के आधार पर इस चुनाव को चुनौती दी गई। राजनारायण ने आरोप लगाया कि राजकीय लाभ के लिए सरकारी मशीनरी और सार्वजनिक धन का दुरुपयोग किया गया है। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने इंदिरा गांधी को दोषी माना। उच्च न्यायालय के निर्णय को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी गई। इसी बीच 25 जून, 1975 को सरकार ने राष्ट्रीय आपातकाल घोषित कर दिया। इसके बाद नागरिक स्वतंत्रताओं का निलंबन, प्रेस पर सेंसरशिप लगाया गया और चुनावों को स्थगित कर दिया गया। नागरिक अधिकारों का हनन किया गया और जबरिया सरकारी आदेशों का पालन कराया जाने लगा। उस दौर में तो नसबंदी भी खूब कराई गई। जाहिर है, वह काला अध्याय आज तक लोग नहीं भूल सके हैं। जो कार्य अंग्रेजों ने नहीं किया, वह इंदिरा गांधी ने कर दिया। कांग्रेस के पास इसका कोई जवाब नहीं है। फिर भी, कांग्रेस का अहंकार सातवें आसमान पर है।

कांतिलाल मंडोत, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
आपातकाल

अनुशासन की लौ में राष्ट्र का निर्माण हुआ

हर घटना के दो पहलू होते हैं, एक धवल और दूसरा स्याह। आपातकाल को यदि अंधकारमय कालखंड कहा गया है, तो उसके भीतर छिपे उस उजाले को भी देखना आवश्यक है, जिसने भारत को नई दिशा दिखाई। निस्संदेह, आपातकाल ने नागरिक स्वतंत्रताओं पर नियंत्रण लगाया, लेकिन इसने देश को राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक अनुशासन और प्रशासनिक दक्षता भी प्रदान की। आपातकाल के पक्ष में सोचने का मतलब यह नहीं कि हम लोकतंत्र का विरोध कर रहे हैं, बल्कि यह मानना है कि कठिन समय में कठोर निर्णय भी कभी-कभी आवश्यक होते हैं। आपातकाल ने राष्ट्र में अनुशासन का एक ऐसा भाव स्थापित किया, जिसने प्रशासकीय कार्यों को गति दी और देश को निर्णायक नेतृत्व प्रदान किया।

आपातकाल के दौरान आर्थिक योजनाओं को नई दिशा मिली। उत्पादन में बढ़ोतरी हुई। योजनाबद्ध विकास और भ्रष्टाचार पर नियंत्रण जैसे अनेक उल्लेखनीय सुधार हुए। सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य-संस्कृति में सुधार आया। रेलगाड़ियों का समय पर चलना, सरकारी कार्यालयों की कार्य-कुशलता और योजनाओं का जमीनी क्रियान्वयन, यह सब उस अनुशासन का परिणाम था, जो आपातकाल की कठोरता से उपजा था। उल्लेखनीय यह भी है कि इस कालखंड में सामाजिक सुधारों की दिशा में अनेक प्रयास किए गए। परिवार नियोजन को पहली बार एक गंभीर राष्ट्रीय कार्यक्रम का स्वरूप दिया गया। जनसंख्या-विस्फोट की गंभीरता को पहचानते हुए जागरूकता और क्रियान्वयन, दोनों पर जोर दिया गया।

आपातकाल ने यह भी सिखाया कि स्वतंत्रता और अनुशासन में संतुलन कितना आवश्यक है। यह कालखंड हमें यह सोचने को प्रेरित करता है कि एक राष्ट्र की उन्नति केवल स्वतंत्रता से नहीं, अपितु उस स्वतंत्रता के विवेकपूर्ण उपयोग और समयानुकूल सख्ती से भी सुनिश्चित होती है। इस दौर में मीडिया, न्यायपालिका और नौकरशाही की शक्ति और सीमाओं पर एक व्यापक विमर्श शुरू हुआ। आगे चलकर यह लोकतंत्र को और परिपक्व बनाने का कारण बना। इस तरह आपातकाल, चाहे जितना विवादास्पद रहा हो, भारत की लोकतांत्रिक यात्रा में एक आवश्यक पड़ाव सिद्ध हुआ। इसे केवल दमन का प्रतीक मानना एकांगी दृष्टिकोण होगा। उस समय राष्ट्र को एक दृढ़ हाथ की आवश्यकता थी, जिसने अस्थिरता के अंधकार में व्यवस्था की मशाल जलाई। इसलिए, आपातकाल को एक ऐसे अध्याय के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, जिसने कठिन निर्णयों के जरिये राष्ट्र को संभाला।

नृपेन्द्र अभिषेक नृप, टिप्पणीकार

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

सवालों में संघर्ष विराम

सवालों और संशय के बीच इजरायल-ईरान के बीच छिड़े भीषण युद्ध पर विराम लग गया। इस युद्ध में अमेरिका ने कूदकर और ईरान के परमाणु ठिकानों को निशाना बनाकर पश्चिम एशिया के साथ विश्व शांति एवं स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर दिया था। फिलहाल यह खतरा टलता दिख रहा है, लेकिन अभी यह कहना कठिन है कि इजरायल-ईरान के बीच की दशकों पुरानी दुश्मनी खत्म हो जाएगी और ऊर्जा के स्रोत वाले पश्चिम एशिया में शांति भी आ जाएगी, जैसा कि अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप कह रहे हैं। उनकी किसी बात पर भरोसा करना ठीक नहीं। वह अपनी ही बात और अपनी ही नीति से पलट जाते हैं। अब वह बीच-बचाव की मुद्रा में दिख रहे हैं और इजरायल को भी नसीहत दे रहे हैं। उनकी और इजरायली प्रधानमंत्री की मानें तो ईरान ने परमाणु हथियार बनाने की क्षमता खो दी है, लेकिन ईरान कह रहा है कि वह अपना परमाणु कार्यक्रम जारी रखेगा। क्या वह परमाणु हथियार हासिल करने का इरादा सचमुच छोड़ देगा? क्या उसके बचे-खुचे विज्ञानी यह विस्मृत कर सकते हैं कि परमाणु हथियार बनाते कैसे हैं? क्या अमेरिका से सदा सशंकित रूस और चीन भी यह चाहेंगे कि ईरान परमाणु हथियार बनाने का इरादा छोड़ दे? स्पष्ट है कि ऐसे सवालों का जवाब भविष्य ही देगा। इस पर हैरानी नहीं कि ईरान भी अपनी जीत और शत्रु को सबक सिखाने का दावा कर रहा है। ऐसा ईरानी जनता और खास तौर पर कट्टर मजहबी सत्ता के समर्थकों का मनोबल बढ़ाने के लिए किया जा रहा है। दिख यही रहा है कि जिस तरह भारत के आपरेशन सिंदूर से पाकिस्तान पस्त हो गया था, वैसे ही, बल्कि उससे ज्यादा इजरायल और अमेरिकी सेनाओं के सामने ईरान भी पस्त हो गया। ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्ला खामेनेई ने खूब गर्जन-तर्जन किया और उनकी सेनाओं ने इजरायल को कुछ नुकसान पहुंचाने के साथ पश्चिम एशिया में अमेरिका के ठिकानों को निशाना बनाने की कोशिश की। इसी क्रम में कतर, इराक आदि में अमेरिकी अड्डों को निशाना भी बनाया गया, लेकिन ये कुलमिलाकर निष्प्रभावी हमले थे। ईरान ने ये हमले कर एक तरह से अपनी खीझ मिटाई। वास्तव में उसे इन हमलों के बहाने संघर्ष विराम की ट्रंप की पेशकश स्वीकारने का जरिया मिल गया। ऐसा कोई जरिया उसके लिए जरूरी भी था, क्योंकि कोई देश यह नहीं कहता कि वह असहाय हो गया। इसका एक उदाहरण पाकिस्तान है, जिसने भारत से हमेशा पिटने के बाद भी अपनी जीत का दावा किया। चूंकि भारत के ईरान और इजरायल, दोनों से संबंध हैं, इसलिए उसने किसी एक पक्ष में खड़े न होकर सही किया। भारत को सबसे पहले अपने हित ही देखने चाहिए। वर्तमान वैश्विक हालात और ट्रंप के रवैये को देखते हुए तो ऐसा करना और भी आवश्यक है।

जागरूकता जरूरी

सर्वाइकल कैंसर से बचाव हेतु 09-14 वर्ष की बालिकाओं के लिए चलाए जा रहे निःशुल्क टीकाकरण अभियान को गति नहीं मिल पा रही। जागरूकता के अभाव और जिम्मेदारों की उदासीनता के कारण इस जानलेवा बीमारी से बेटियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने की राज्य सरकार की महत्वाकांक्षी योजना को जमीन पर उतारने की रफ्तार सुस्त है। करीब चार महीने से चल रहे इस अभियान के बावजूद उपलब्ध टीके की खपत महज 15 प्रतिशत तक पहुंची है। स्वास्थ्य और शिक्षा विभाग एक-दूसरे पर ठीकरा फोड़ने में लगे हैं। स्वास्थ्य विभाग का कहना है कि विभिन्न जिलों में शिक्षा पदाधिकारियों के माध्यम से स्कूलों से उन बच्चियों की सूची मांगी गई थी जो इसकी लाभुक होंगी, लेकिन इसमें काफी शिथिलता बरती जा रही है। यही वजह है कि टीकाकरण के लाभ से बच्चियां अब तक वंचित हैं। अगर आरोप सही है तो विभागीय पदाधिकारियों को इसका संज्ञान लेकर दोषी अफसरों को चिन्हित करना चाहिए, जो इस योजना में रोड़ा बने हुए हैं। इससे इतर कड़वी सच्चाई यह भी है कि स्वास्थ्य विभाग की ओर से इस योजना के प्रचार-प्रसार में कसर दिख रही। अभिभावक जागरूक होंगे तभी तो वह अपनी बेटियों को टीकाकारण करवाएंगे, जबकि इसे सदर अस्पतालों में निःशुल्क दिया जा रहा। जिम्मेदार विभागों और अभिभावकों को अति गंभीर होने की आवश्कता है, तभी हम बेटियों के माथे से मंडराते खतरे को दूर कर पाएंगे। देश में सर्वाइकल कैंसर से जुड़ा हर पांचवां मामला बिहार का ही होता है।

> सर्वाइकल कैंसर के टीकाकरण को गति देने की आवश्यकता है।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

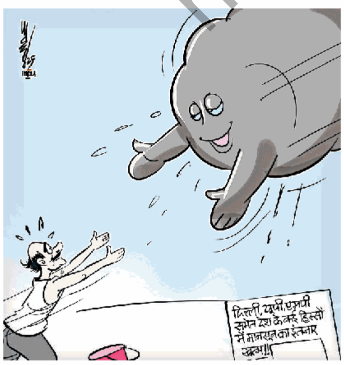

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या ईरान वैश्विक अर्थव्यवस्था के समक्ष बड़ा संकट खड़ा कर सकता है?

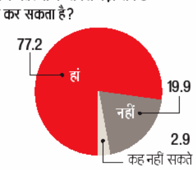

आज का सवाल
क्या ईरान और इजरायल के बीच सैन्य टकराव खत्म समझा जाए?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

न भूलें आपातकाल थोपने के पीछे का इरादा

भूपेंद्र यादव

यदि 1977 में इंदिरा गांधी सत्ता में लौटतीं तो संवैधानिक व्यवस्था, बहुदलीय प्रणाली, न्यायपालिका आदि को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचता

कांग्रेस सरकार द्वारा 1975 से 77 तक लगाया गया आपातकाल भारत के लोकतांत्रिक इतिहास का सबसे काला अध्याय है। उस दौर में इंदिरा सरकार ने संविधान की मूल भावना को दरकिनार कर लोकतंत्र के आत्मा, संवैधानिक संस्थाओं, प्रेस की स्वतंत्रता, न्यायपालिका की निष्पक्षता और नागरिक अधिकारों पर आघात किया। आपातकाल का कालखंड भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में कलंक के टीके की तरह है। इस पर काफी चर्चा हुई है। किताबें भी लिखी गई हैं, लेकिन इस पहलू पर उतनी चर्चा नहीं हुई कि आपातकाल लगाने के पीछे इंदिरा गांधी की मंशा क्या थी? अगर 1977 में इंदिरा गांधी दोबारा सत्ता में लौटतीं तो भारत के लोकतंत्र और संविधान के मूल ढांचे पर इसके क्या प्रभाव पड़ते?

आपातकाल के दौरान किया गया 42वां संविधान संशोधन संविधान के मूल आत्मा को बदलने का एक प्रयास था। इसके मूल में एकदलीय प्रणाली को स्थापित करने की मंशा थी। यह एक तरह से संविधान को ही बदलने का प्रयास था। इस संशोधन के माध्यम से न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कम किया गया, नागरिक अधिकारों को सीमित किया गया और इंदिरा गांधी ने अपनी सरकार को असाधारण शक्तियां दे दीं।

कांग्रेस के मुखपत्र नेशनल हेराल्ड ने अपने संपादकीय में आपातकाल की हिमायत में लिखा था कि समय आ गया है कि अब देश एकदलीय लोकतंत्र की दिशा में बढ़े। इंदिरा के करीबी सहयोगी बीके नेहरू, जो एक अनुभवी राजनयिक भी थे, ने आपातकाल की सराहना में एक पत्र में लिखा था कि संसदीय लोकतंत्र हमारी जरूरतों का उत्तर देने में सक्षम नहीं है। उन्होंने इंदिरा गांधी से आग्रह किया कि अब जब आपके पास दो-तिहाई बहुमत है, तो संविधान में मौलिक परिवर्तन कर डालिए। इसलिए, यह संदेह निराधार नहीं कि यदि इंदिरा गांधी 1977 में सत्ता में वापसी करतीं तो यह प्रक्रिया और तेज होती। संविधान के मूल ढांचे, जैसे न्यायपालिका की स्वतंत्रता, संघीय व्यवस्था, नागरिक अधिकार एवं चुनावों की निष्पक्षता को कमजोर करने के लिए और संशोधन लाए जाते। तब भारत की लोकतांत्रिक पहचान ही खतरे में पड़ जाती।

आपातकाल के समय इंदिरा गांधी ने असहमत विरोधी दलों पर कड़े प्रतिबंध लगाए, सैकड़ों नेताओं को जेल में डाला और अनेक गैर-राजनीतिक संगठनों की आवाज भी दबाई। इसके पीछे उनका इरादा बहुदलीय लोकतांत्रिक व्यवस्था को कमजोर करके देश में एकदलीय प्रणाली को शक्तिशाली बनाने का था। यह अलोकतांत्रिक विचार था। इसके तहत इंदिरा गांधी कांग्रेस को एकमात्र राजनीतिक शक्ति बनाना चाहती थीं।

अवधेश राजपूत

आपातकाल के वक्त भारत में परिवार आधारित तानाशाही का प्रयोग चल रहा था। यदि यह प्रयोग सफल हुआ होता तो देश की निर्णय प्रक्रिया लोकतांत्रिक प्रणाली के बजाय 'एक दल-एक परिवार' की व्यक्तिगत इच्छाओं से संचालित होती। आपातकाल में नौकरशाही को कांग्रेस पार्टी के एजेंडे के प्रति वफादार बनाने के सारे प्रयास हुए। योग्यता और निष्पक्षता को दरकिनार कर केवल वफादारी के आधार पर पदोन्नति दी गई। एक समर्पित नौकरशाही की परिकल्पना भी आपातकाल के दौरान उभरी। यदि 1977 में दोबारा कांग्रेस की सरकार बनती, तो पूरी आशंका थी कि इस नीति को और आक्रामक रूप से लागू किया जाता। स्वतंत्र प्रशासनिक संस्थाएं, जैसे संघ लोक सेवा आयोग, कैग, चुनाव आयोग को निष्प्रभावी बनाया जाता और एक 'कमिटेड ब्यूरोक्रेसी' तैयार की जाती। कांग्रेस द्वारा समय-समय पर ऐसी कोशिश की जाती रही है, इसलिए इस आशंका को बल मिलता है। देश में लोकतंत्र की आधारशिला रखने वालों ने स्वतंत्र और स्वायत्त न्यायपालिका की व्यवस्था दी थी। उसे भी इंदिरा सरकार ने सरकार के प्रति प्रतिबद्ध बनाने की कोशिश की थी। सुप्रीम कोर्ट में वरिष्ठता की अनदेखी कर कनिष्ठ जज को मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया। जस्टिस एचआर खन्ना जैसे साहसी न्यायाधीशों को दरकिनार कर दिया गया, क्योंकि उन्होंने नागरिक अधिकारों की रक्षा पर जोर दिया था। यदि इंदिरा सत्ता में कायम रहतीं तो न्यायपालिका पर दबाव और बढ़ता। संवैधानिक समीक्षा की शक्तियों को सीमित किया जाता, न्यायिक नियुक्तियों में सरकार की मनमानी चलती और अदालतें सरकारी एजेंडे को वैध ठहराने का माध्यम बन जातीं।

आपातकाल के दौरान प्रेस की स्वतंत्रता पर अभूतपूर्व हमला हुआ। व्यापक सेंसरशिप लगाई गई। सरकार विरोधी सामग्री प्रकाशित करने पर प्रतिबंध लगाया गया। कई समाचार पत्रों के मालिकों, संपादकों को दंडित किया गया, क्योंकि उन्होंने आपातकाल की आलोचना की थी। कुछ अखबारों ने अपने संपादकीय खाली छोड़ दिए थे।

यदि 1977 में इंदिरा फिर सत्ता में आतीं, लोकतंत्र की बुनियादें-संवैधानिक व्यवस्था, बहुदलीय प्रणाली, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, प्रेस की आजादी और निष्पक्ष प्रशासन आदि गंभीर रूप से कमजोर हो जाता। भारत एक परिवार केंद्रित, पार्टी-प्रधान और अधिनायकवादी राज्य में बदल सकता था, पर भारत में लोकतंत्र की जड़ें बहुत मजबूत हैं, इसे देश ने साबित किया। जनता ने लोकतंत्र के खिलाफ इंदिरा गांधी की मंशा को खारिज कर लोकतंत्र के पक्ष में मतदान किया। इंदिरा गांधी और आपातकाल के लिए जिम्मेदार कांग्रेस के कई दिग्गज नेता चुनाव हार गए। 1977 का लोकसभा चुनाव नई सरकार चुनने से ज्यादा लोकतंत्र और संविधान को कमजोर करने की मंशा रखने वालों को दंडित करने वाला चुनाव था। लोगों ने आपातकाल के लिए जिम्मेदार लोगों को अपने मतदान के अधिकार की ताकत से दंडित किया और इस तरह कि वह एक मिसाल बना।

जनता पार्टी की ऐतिहासिक जीत और इंदिरा गांधी की पराजय ने न केवल लोकतंत्र की रक्षा की, बल्कि यह भी साबित किया कि भारत की जनता अपनी आजादी और संवैधानिक मूल्यों की रक्षा के लिए कोई भी कीमत चुकाने को तैयार है। 1977 का चुनाव भारतीय लोकतांत्रिक चेतना की जीत के नाम रहा। अब जब आपातकाल के 50 साल पूरे हो रहे हैं, तब हमारा लोकतंत्र मजबूती से आगे बढ़ रहा है और अनुच्छेद-356 के दुरुपयोग जैसी प्रवृत्ति खत्म हुई है।

(लेखक केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री हैं)
response@jagran.com

आपसी बैर बढ़ाने वाली राजनीति

राजीव सचान

जब विदेश नीति पर भी सस्ती राजनीति होती है तो पक्ष-विपक्ष के नेताओं के साथ उसके समर्थकों में भी कटुता पैदा होती है

कांग्रेस और कुछ अन्य विपक्षी दलों को मोदी सरकार की विदेश नीति रास नहीं आ रही है। यह कोई नई-अनोखी बात नहीं। ऐसा पहले भी होता रहा है, लेकिन पहले आमतौर पर उस पर आम सहमति कायम होती थी, क्योंकि माना जाता था कि विदेश नीति सत्तारूढ़ दल की की नहीं, देश की होती है। अतीत में इस मान्यता के कुछ अपवाद भी दिखे। विदेश नीति के मामले में जो अपवाद हुआ करता था, वह अब नियम बन गया है। जब भाजपा विपक्ष में थी, तो उसे भी मनमोहन सरकार की विदेश नीति के कुछ मुद्दों पर गहरी आपत्ति थी। परमाणु उत्तरदायित्व विधेयक लंबे समय तक इसलिए विवादों से घिरा रहा, क्योंकि भाजपा और अन्य विपक्षी दलों को उसके कुछ प्रविधान पसंद नहीं थे। यह विधेयक कुछ संशोधनों के साथ पारित होकर कानून तो बना, लेकिन कहा जाता है कि इन संशोधनों के कारण ही विदेशी कंपनियों ने भारत में परमाणु रिएक्टर लगाने में रुचि नहीं दिखाई। जो भी हो, कुछ समय पहले मोदी सरकार ने यह संकेत दिया कि विदेशी परमाणु ऊर्जा कंपनियों को आकर्षित करने के लिए उक्त कानून में कुछ बदलाव हो सकता है। इस पर कांग्रेस ने भाजपा के 2010 के रवैये का हवाला देते हुए कहा था कि उसने तो यू-टर्न ले लिया।

2014 में मोदी सरकार के सत्ता में आने के बाद उसकी विदेश नीति पर लेकर विपक्ष की आपत्तियां लगातार बढ़ती और तीखी होती गई हैं। पाकिस्तान और चीन पर मोदी सरकार की नीति पर तो कुछ ज्यादा ही सवाल उठे। जब जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 निष्प्रभावी किया गया तो देश-दुनिया में हलचल मची। एक समय कांग्रेस के ही नेता कहते थे कि यह अनुच्छेद घिसते-घिसते खत्म हो जाएगा, लेकिन मोदी सरकार ने जब उसे सचमुच खत्म कर दिया तो राहुल गांधी समेत कई विपक्षी नेताओं ने ऐसे बयान दिए, जो पाकिस्तान को अच्छे लगे। इसके पहले डोकलाम विवाद के समय भी कांग्रेस ने मोदी सरकार को कठघरे में खड़ा किया था। राहुल गांधी तो विदेश मंत्रालय को सूचना दिए बिना चीनी दूतावास चले गए थे। इसे लेकर हंगामा मचा तो कांग्रेस की ओर से कहा गया कि वह मामले को समझने गए थे। फिर गलवन में चीनी सैनिकों से खूनी झड़प के बाद भी कांग्रेस समेत कई विपक्षी दलों ने मोदी सरकार को घेरा। राहुल गांधी और कुछ अन्य नेता यदा-कदा कहते रहते हैं कि मोदी चीन से डरते हैं।

पहलगाम आतंकी हमले के बाद सर्वदलीय बैठक • फाइल

पहलगाम में बर्बर आतंकी हमले के बाद राहुल गांधी एवं अन्य विपक्षी नेताओं ने पर्यटकों की सुरक्षा में कमी के सही सवाल उठाकर कठिन वक्त में भारत सरकार के साथ खड़े होने का अच्छा संदेश दिया, लेकिन पाकिस्तान को सबक सिखाने वाले आपरेशन सिंदूर खत्म होते ही उनके सुर बदल गए। ये सुर पाकिस्तान में गूंजने लगे। आपरेशन सिंदूर के अचानक स्थगन और उसका श्रेय ट्रंप की ओर से लेने पर विपक्ष और अन्य अनेक ने उचित ही आपत्ति जताई। इस पर सरकार को भी कहना पड़ा कि ट्रंप सही नहीं। फिर एक दिन आपरेशन सिंदूर पर विदेश मंत्री जयशंकर के बयान को लेकर राहुल गांधी ने उन्हें घेरा और यह पूछा कि वे बताएं कि उनके कारण भारतीय सेना ने पाकिस्तान के खिलाफ सैन्य कार्रवाई में अपने कितने लड़ाकू विमान खोए? विदेश मंत्रालय ने स्पष्टीकरण दिया, लेकिन कांग्रेस को वह रास नहीं आया। उसके एक प्रवक्ता ने यह कहा कि विदेश मंत्री ने आतंकियों को बचाने का पाप किया है। पाकिस्तान को यह अच्छा लगा। यह भी याद करें कि पाकिस्तान के खिलाफ सर्जिकल और एयर स्ट्राइक पर कैसे सवाल उठाए गए थे और उन्हें पाकिस्तान में कितना पसंद किया गया था। ऐसे सवाल विरोध के लिए विरोध की राजनीति का ही परिचय देते हैं। दुर्भाग्य से अब विदेश नीति पर भी ऐसी ही राजनीति होती है।

इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि ट्रंप भारत-पाकिस्तान के बीच संघर्ष विराम का श्रेय लेने की सनक से ग्रस्त हैं। इतना अधिक कि कनाडा गए प्रधानमंत्री मोदी को उनसे फोन पर दो टूक बात करनी पड़ी। इसका सार यही था कि ट्रंप झूठ बोल रहे हैं। उनके झूठ से और पाकिस्तान प्रेम से भारत निपट ही रहा था कि इजरायल-ईरान जंग ने भारत का संकट बढ़ा दिया। इजरायल-ईरान जंग पर मोदी सरकार के रवैये पर सोनिया गांधी ने एक लेख लिखा। उन्होंने गाजा संकट एवं ईरान-इजरायल युद्ध पर मोदी सरकार पर चुप रहने का आरोप लगाया। उन्होंने कहा कि अभी समय है। सरकार को अपनी नीति बदलनी चाहिए। फिर ईरान-इजरायल युद्ध में ट्रंप ने कूदकर भारत और पूरी दुनिया का संकट बढ़ाया। भारत सरकार ने रूस-यूक्रेन युद्ध की तरह से इजरायल-ईरान जंग पर भी तटस्थ रहना तय किया। तटस्थता की यह नीति कई विपक्षी दलों को अच्छी नहीं लग रही। वाम दलों को तो बिल्कुल भी नहीं, लेकिन कांग्रेस भी इस नीति से खुश नहीं।

क्या भारत को सबसे पहले अपने हित की चिंता नहीं करनी चाहिए, जैसा अन्य तमाम देश कर रहे हैं? आखिर भारत को इजरायल और ईरान में किसके साथ खड़ा होना चाहिए? दोनों से तो भारत के अच्छे संबंध हैं। क्या कांग्रेस और सोनिया एवं राहुल को याद नहीं कि इजरायल से कूटनीतिक संबध तो नरसिंह राव सरकार ने आगे बढ़ाए थे। यही काम मनमोहन सिंह ने किया। जब विदेश नीति पर भी सस्ती राजनीति होती है तो पक्ष-विपक्ष के बड़े नेताओं के साथ उसके कार्यकर्ताओं एवं समर्थकों में भी कटुता पैदा होती है और देश का माहौल भी खराब होता है।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

एकांत की साधना

आदि गुरु शंकराचार्य जी के अनुसार मनुष्यों से भरा स्थान ब्रह्मचिंतन में विघ्न है, अतः निर्जन स्थान में वास करना चाहिए। केवल तपस्वियों की नहीं, वरन एकांत में समस्त रचनात्मक प्राणियों की मुक्ति की कुंजी निहित है। यह उस भीतरी द्वार की ओर संकेत करता है, जहां चित्त की निर्झरिणी अविरल बहती है। मनुष्यों की भीड़ में आत्मा का आलोक धीमा पड़ने लगता है। भीड़ का कोलाहल हमारे बाह्य वातावरण को ही नहीं, अपितु सूक्ष्म कंपन में परिवर्तित होकर चित्त की तरंगों को भी विक्षुब्ध करता है। एक साधक के लिए यह विक्षोभ जब ब्रह्मरंध्र पर असर डालता है तो प्रज्ञा-जागृति में अवरोध बनता है।

यह सत्य है कि सभी साधक नहीं होते हैं, परंतु सामान्यजन भी तो किसी न किसी साधना में रत हो सकते हैं। कला, साहित्य, चिंतन, अवलोकन, नृत्य, भ्रमण, खोज, सृजन अपने स्तर पर एक साधना ही हैं। एकांत में कविता लिखना, किसी बांसुरी की धुन में लयबद्ध होना, वृक्ष की छाया में बैठे हुए तितलियों के रंग देखना, कुम्हार की चाक को चलते देखना, यह सब भी तो एक प्रकार का ध्यान है। यह 'ध्यान' भले ही चित्त को निर्विकल्प समाधि में न ले जाए, परंतु सामान्य चित्त की व्यग्रता का शमन अवश्य करता है। एकांत सृजन का गर्भगृह है। जब एकांत में व्यक्ति स्वयं में प्रवेश करता है, तब वह बाह्य नाट्य रंगमंच से विलग होकर उस नादब्रह्म को सुन पाता है, जो दिन-रात उसके अंतस में गूंजता रहता है।

जिनके पास साधना का अवलंबन नहीं है, उन्हें ही अकेलापन काटता है। अकेलेपन का विराग वे ही गाते हैं, जिनके जीवन में किसी भी प्रकार की साधना का राग नहीं है। जबकि जिसने एक बार भी आत्मा की निःस्तब्धता को सुनकर रचनात्मक सृजन या प्रेम का जागरण अनुभव किया है, वह जानता है कि एकांत कोई अभाव नहीं, अकेलापन भी नहीं, अपितु आत्मालाप और आत्मलोप के लिए उपलब्ध एक सुंदर अवसर है।

ट्विंकल तोमर सिंह

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

राजनीतिक अपराध था आपातकाल

'जब जेल जैसा बन गया था देश' शीर्षक से लिखे आलेख में केसी त्यागी ने 50 वर्ष पहले इंदिरा गांधी द्वारा अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए देश पर थोपे गए आपातकाल की उस नकारात्मकता का उल्लेख किया है जो भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकारों का बलपूर्वक दमन करने के आपराधिक कृत्य के रूप में कुख्यात हुई थी। स्वाधीन भारत के इतिहास में काले अध्याय के रूप में दर्ज यह राजनीतिक अपराध कांग्रेस की सर्वोच्च नेता और तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश के प्रति किया था। उस समय आपातकाल के भुक्तभोगी संघ के स्वयंसेवकों और कांग्रेस विरोधी दलों के नेताओं की जुबानी पुलिस की बर्बरता और जेल की यातनाओं को सुनकर सिहरन पैदा हो जाती है। हालांकि आमजन की स्मृति भी कितनी कमजोर होती है कि जिसने आपातकालीन विभीषिका के दंश को भुलाकर देश की सत्ता को कालांतर में पुनः उन्हीं निरंकुश हाथों में सौंप दिया था, जिसने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए देश को आपातकाल की आग में झोंका था। यही कारण था कि कांग्रेस के जिम्मेदार नेताओं ने इस राजनीतिक अपराध के लिए कभी भी पश्चाताप नहीं किया। कांग्रेस का यह आचरण आपातकाल जैसे देशघाती अपराध को स्वीकृति देने जैसा रहा। इस बीच देश के नागरिकों को भी मंथन करना चाहिए कि देश में कभी ऐसी परिस्थितियां दोबारा निर्मित न हों जो आपातकाल जैसी दमनकारी आपदा का कारण बनें।

pandeyvp1960@gmail.com

अंतरजिला तबादले की अनदेखी

बिहार में चल रहे शिक्षकों के स्थानांतरण में दूरी के आधार की अनदेखी की जा रही है। 22 जून 2025 को दूरी के आधार पर वर्ग एक से पांच तक के शिक्षकों के तबादला की सूची ई शिक्षाकोष पर अपलोड की गई, उसमें किसी भी पुरुष शिक्षक का अंतरजिला तबादला नहीं किया गया, जो शिक्षक पहले से अपने जिला में पदस्थापित थे, उन्हें ही घर के आसपास स्थानांतरित कर दिया गया। ऐसे में मानवीय आधार पर पुरुष शिक्षकों का अंतरजिला स्थानांतरण शीघ्रताशीघ्र अपने गृह जिला या दिए गए विकल्प में किया जाए। यह व्यापक हित में होगा।

धीरज कुमार, पूर्णिया, बिहार

चारित्रिक गुण आवश्यक

आजादी के बाद दो दशकों तक राजनीति में नैतिकता बनी रही, समय के साथ इसका पतन होता चला गया। आज की राजनीति में चोरी और सीनाजोरी का प्रचलन बढ़ चुका है। एक दौर था, जब नैतिकता के आधार पर लाल बहादुर शास्त्री ने केंद्रीय मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने में एक पल की भी देर नहीं की थी, आज जब तक जेल जाने की नौबत नहीं आती है, तब तक नेतागण इस्तीफा नहीं देते। जेल जाने के दौरान भी नेताओं की पूरी कोशिश होती है कि उनका पद उनके परिवार वाले को दिया जाए। आमजन को जनप्रतिनिधि चुनने से पहले उनके चारित्रिक गुणों को देखना चाहिए।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी।

आपातकाल के बाद लोकतंत्र सुदृढ़

पचास वर्ष पूर्व के 25 जून को 1975 में देश ने उस आपातकाल का स्वरूप देखा, जब दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश आपातकाल के झंझावतों में उलझकर रह गया। यह अलग बात है कि उसके पूर्व और पश्चात आपातकाल देश में लगा नहीं है, परंतु जिन परिस्थिति में आपातकाल लगाया गया था, वह विपक्ष के आंदोलन को दबाने के लिए परिपक्व हो रही लोकतांत्रिक समृद्धि की फुलवारी को तहस-नहस करने जैसा रहा। आज सरकार और आमजन दोनों अपनी नीति भी चला रहे हैं और सरकार की आलोचना भी देश के नागरिक कर रहे हैं, लेकिन जिस तरह इंदिरा गांधी ने तानाशाही से आपातकाल लगाया और विरोधी नेताओं को जेल में डालना शुरू किया, वह लोकतांत्रिक विघटन का सूचक रहा। हालांकि यह अलग बात रही कि उसके बाद सभी राजनीतिक दलों ने चाहे वह कांग्रेस हो या गैर कांग्रेसी राजनीतिक दल, किसी ने भी आपातकाल की उस विरासत को आगे बढ़ाने में रुचि नहीं ली। यह देश के लिए बहुत बड़ा सौभाग्य है। सत्ता का हस्तांतरण हर एक पार्टी अथवा संयुक्त मोर्चा सुलभता से करती रही है। यह देश में सुदृढ़ लोकतंत्र का परिचायक है। आपातकाल इस बात का परिचायक बना कि सहमति पर आधारित शासन व्यवस्था होने के बावजूद लोकतंत्र में तानाशाही किस कदर लोकतंत्र का गला घोंट सकती है।

मिथिलेश कुमार, भागलपुर, बिहार

पोस्ट

इंग्लैंड के खिलाफ पहले टेस्ट की दोनों पारियों में दमदार शतक और सौ ओवरों से भी ज्यादा विकेटकीपिंग का दायित्व। रिषभ पंत की ऐसी बेहतरीन फिटनेस और दमखम देखकर पूर्ववर्ती नेशनल क्रिकेट एकेडमी (बीसीसीआइ-सेंटर आफ एक्सीलेंस) में फिजियो टीम की सराहना करना भी बनता है।

मकरंद वेंगणकर@wmakarand

कथित संघर्षविराम के बाद ईरान ने जिस तरह अपनी जीत का एलान किया, वह आपरेशन सिंदूर के बाद पाकिस्तान के दावों की याद दिलाने वाला है। ईरान को भारी नुकसान झेलना पड़ा है। वह किस मुंह से जीत की मुनादी कर रहा। शायद यह अपने लोगों को बरगलाने के काम आए।

विक्रम चंद्रा@vikramchandra

'नरेंदर नाम मेरा, सरेंडर काम मेरा' जैसा अभियान यही साबित करता है कि देश में अभिव्यक्ति की पूरी आजादी है। यह बात अलग है कि दुर्भावना से भरे इस अभियान का हश्र भी शायद 'चौकीदार चोर है' जैसा ही होगा, जो मतदाताओं को कतई रास नहीं आया था।

सदानंद धूमे@dhume

जनपथ

सपने में आपात का डरवाता है भूत,
पिला गई हैं इंदिरा कैसा कड़वा घूंट।
कैसा कड़वा घूंट लगे जब जून महीना,
मानसून की ठंड हवा दे जाय पसीना!
जब सत्ता-सरकार जेठ सी लगती तपने,
होते चकनाचूर तभी जनता के सपने।
– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त
जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 74

https://t.me/AllNewsPaperPaid

****

कल्पमेधा

प्राचीन धर्मों ने कहा है कि नास्तिक वह है, जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता। नया धर्म कहता है, नास्तिक वह है जो अपने-आप में विश्वास नहीं करता।
– विवेकानंद

विराम अविराम

इजराइल और ईरान के बीच युद्ध विराम पर सहमति की खबर निश्चित रूप से अच्छी बात है। युद्ध को किसी भी रूप में उचित नहीं ठहराया जा सकता। इस युद्ध विराम की सूचना पहले अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने दी। उनका दावा है कि उन्हीं के समझाने पर दोनों देश जंग की राह छोड़ने पर तैयार हुए हैं। पिछले बारह दिनों से दोनों देश एक-दूसरे पर विनाशकारी हमले कर रहे थे। हालांकि अमेरिका शुरू से कहता रहा कि इस युद्ध को रोका जाना चाहिए। मगर उसका रुख एकतरफा ही था। वह स्पष्ट रूप से इजराइल के साथ खड़ा नजर आ रहा था। इजराइल को उसका समर्थन पिछले रविवार को तब पूरी तरह स्पष्ट हो गया, जब उसके बंकरभेदी विमानों ने ईरान के तीन परमाणु ठिकानों पर भीषण बम बरसा दिए। उस समय माना जाने लगा कि यह जंग लंबी चलेगी। युद्ध विराम की सूचना ने दुनिया को सुखद आश्चर्य से भर दिया। मगर इसके साथ ही युद्ध विराम के उल्लंघन से एक बार फिर चिंता पैदा हुई है। हालांकि ऐसे कयास लगाए जा रहे थे कि इजराइल अब थक चुका है और ईरान के हमलों को नाकाम करने में विफल हो रहा है, इसलिए वह कदम पीछे खींचना चाहता है। फिर, अमेरिका को भी लग रहा था कि अगर वह इराक की तरह ईरान में भी फंस गया, तो मुश्किलें बढ़ सकती हैं।

युद्ध शुरू करना तो आसान होता है, पर उसे समाप्त करना अपने हाथ में नहीं होता। फिर, किसी भी युद्ध के लंबे समय तक चलते रहने का असर न केवल संबंधित देशों की अर्थव्यवस्था पर, बल्कि दुनिया के बहुत सारे देशों पर पड़ता है। ऐसे में, इस युद्ध विराम की घोषणा हर तरह से सराहनीय कही जा सकती है। इस युद्ध में कौन सही था, कौन गलत, इसका विश्लेषण तो बहुत हो चुका, इतिहास में भी होता रहेगा, पर अभी इस बात पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है कि यह विराम स्थायी रूप कैसे ले। विडंबना यह है कि ट्रंप के युद्ध विराम की खबर देने के बाद भी ईरान और इजराइल ने एक-दूसरे के ठिकानों पर बम फेंके और अभी वे एक-दूसरे को संघर्ष विराम के उल्लंघन का दोषी ठहराने में लगे हुए हैं। इससे यही लगता है कि दोनों के भीतर टीस अभी बनी हुई है। इसे भी समाप्त होना चाहिए। अगर अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप सचमुच शांति के लिए प्रतिबद्ध हैं, तो ऐसा वातावरण बनाने की जिम्मेदारी उन्हीं पर अधिक है।

पिछले कुछ वर्षों से देखा जा रहा है कि युद्ध में नियम-कायदों और सारी नैतिकता को ताक पर रख दिया जा रहा है। इजराइल इतने समय से फिलिस्तीन में जिस तरह बम बरसा रहा है, उसमें निरपराध स्त्रियों, बच्चों तक की चिंता नहीं की गई, अस्पतालों में बीमार और घायलों की परवाह किए बिना बम गिराए गए, वह युद्ध अपराध की ही श्रेणी में आता है। फिर ईरान के विरुद्ध परमाणु हथियार बनाने के सबूत के बगैर उसने हमला कर दिया। परमाणु विकिरण की परवाह किए बिना अमेरिका ने भी ईरान के परमाणु ठिकानों पर बम गिरा दिए। इसी तरह दुनिया के करीब उनसठ देश किसी न किसी रूप में संघर्षरत हैं। उनमें केवल अपनी ताकत दिखाने की कोशिशें अधिक देखी जा रही हैं। पर, ऐसी स्थितियों को रोकने के मकसद से गठित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद अब जैसे अप्रासंगिक हो गई है। इसके चलते दुनिया भर में किसी न किसी रूप में प्रभाव पड़ रहा है। अमेरिका महाबली है और अब उस पर यह जिम्मेदारी सबसे अधिक है कि युद्ध की स्थितियों को टालने और रोकने के व्यावहारिक उपाय तलाश करे।

अपराध का दायरा

दिल्ली में छत से धक्का देकर एक लड़की की हत्या को आम आपराधिक घटना माना जा सकता है, लेकिन इससे यह भी जाहिर होता है कि पिछले कुछ समय से अपराध का दायरा कैसे चिंताजनक रूप से फैल रहा है। खबर के मुताबिक, एक युवक ने लड़की को पांचवीं मंजिल से नीचे धक्का दे दिया और फरार हो गया। इलाज के दौरान लड़की की मौत हो गई। माना जा रहा है कि आरोपी पहले से परिचित था, लेकिन जिस तरह वेश बदल कर वह वहां गया था, उससे उसकी मंशा समझी जा सकती है। घटना की तहें जांच के बाद साफ होंगी, लेकिन इतना तय है कि अगर युवक के भीतर लड़की की हत्या करने का दुस्साहस आया तो इसका एक कारण उसका कानूनी कार्रवाई से बेखौफ होना भी हो सकता है। आमतौर पर ऐसी घटनाओं के बाद पुलिस की नींद देर से खुलती है और शायद यही वजह है कि आपराधिक घटनाओं में कमी नहीं आ पा रही। खासतौर पर महिलाओं के सामने यह चुनौती खड़ी हो रही है कि आपराधिक वृत्ति के युवकों की मनमानी के बीच वे कैसे सुरक्षित महसूस करें। क्या यह दिल्ली की कानून-व्यवस्था पर एक सवाल नहीं है?

पिछले कुछ समय से दिल्ली और अन्य शहरों-महानगरों में एक विचित्र स्थिति पैदा हो रही है कि बहुत मामूली बातों पर भी दो लोग या पक्ष आपस में हिंसक टकराव पर उतर आते हैं, जिसमें कई बार किसी की जान चली जाती है। इसके अलावा, एक चिंताजनक पहलू यह है कि प्रेम के नाम पर किसी युवक की मनमानी का विरोध करने या इनकार करने पर लड़की की हत्या तक कर दी जाती है। यह एक ओर कानून-व्यवस्था की विफलता है कि आपराधिक मानस वाले लोगों के भीतर उसका खौफ नहीं दिखता, तो दूसरी ओर यह समाज की भी नाकामी है कि वह लड़कों के भीतर महिलाओं के प्रति जरूरी संवेदनशीलता पैदा नहीं कर पाता। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि अगर सरकार और समाज के स्तर पर इस तरह की आपराधिक वृत्ति की रोकथाम के लिए समय पर जरूरी कदम नहीं उठाए गए तो इसका खमियाजा सभी स्तरों पर उठाना पड़ सकता है।

आपातकाल से सबक सीखना जरूरी

आपातकाल के तमाम प्रसंगों और घटनाक्रम से एक बड़ी सीख मिलती है। जब कोई व्यक्ति या नेता अपने को पार्टी या फिर राष्ट्र का पर्याय मान लेता है, तो लोकतांत्रिक मूल्यों के पतन और तानाशाही की बुनियाद वहीं से शुरू हो जाती है।

केसी त्यागी

इंदिरा गांधी ने आपातकाल की घोषणा किसी बाह्य या आंतरिक उथल-पुथल के कारण नहीं की थी। 1971 के बांग्ला युद्ध के दौरान ही बाह्य आपातकाल लग गया था। गुजरात, बिहार में उभरे युवाओं के आंदोलन का राष्ट्रव्यापी रूप लेना, जेपी जैसे महानायक का उसे नेतृत्व प्रदान करना, 12 जून, 1975 को गुजरात में कांग्रेस पार्टी की पराजय आदि कई प्रमुख कारण रहे। जेपी स्वाधीनता संग्राम में गांधी और नेहरू के विश्वासपात्र साथियों में थे। लिहाजा, आपातकाल को लेकर उनकी पीड़ा अन्य नेताओं से भिन्न और मार्मिक थी। इंदिरा गांधी को जेल से लिखा जेपी का पत्र उनकी आत्मा की आवाज है- 'कृपया उन बुनियादों को तबाह न करें, जिन्हें राष्ट्र के पिताओं ने, जिसमें आपके पिता भी शामिल हैं, अपने खून-पसीने से सींचने का काम किया है। आप जिस रास्ते पर चल पड़ी हैं, उस पर संघर्ष और पीड़ा के सिवाय और कुछ भी नहीं है। आपको एक महान परंपरा, महान मूल्य और कार्यरत लोकतंत्र विरासत में मिला है। जाते-जाते दुखी कर देने वाला मलबा छोड़कर मत जाइए, फिर से जोड़ने में काफी समय लग जाएगा। जिन लोगों ने ब्रिटिश साम्राज्य से लोहा लिया और उसे परास्त किया, वे अनिश्चितकाल तक अधिनायकवाद के अपमान और शर्म को बर्दाश्त नहीं कर सकते।'

25 जून, 1975 को दिल्ली के रामलीला मैदान में समूचे विपक्ष द्वारा आयोजित रैली बहुत विशाल थी। पहले इसका आयोजन 20 जून को तय था। जेपी उस दिन कोलकाता में थे। उनकी उपस्थिति को रोकने के लिए कोलकाता से दिल्ली की सभी उड़ानें रद्द कर दी गईं। लिहाजा, 25 जून की तिथि तय की गई थी। जनसंघ नेता मदनलाल खुराना मंच का संचालन कर रहे थे। लोकदल के प्रतिनिधि के रूप में सत्यपाल मलिक और मैं उपस्थित थे। इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा 12 जून को जस्टिस जगमोहन लाल सिन्हा के फैसले से समूचे देश में भूचाल-सा आ गया था। समाजवादी नेता राजनारायण ने 1971 में इंदिरा गांधी के विरुद्ध लोकसभा का चुनाव लड़ा और वे पराजित हो गए थे। उन्होंने उन नतीजों को इलाहाबाद हाईकोर्ट में चुनौती दी। जस्टिस सिन्हा ने अपने फैसले में इंदिरा गांधी को चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग करने, भ्रष्ट हथकंडे अपनाने, डीएम, एसपी के पदों का दुरुपयोग करने, शराब और कंबल आदि बांटने का दोषी पाया और उनके चुनाव को रद्द कर उन्हें छह वर्ष के लिए अयोग्य घोषित कर दिया।

हालांकि बाद में उनके वकील डीपी खरे ने एक याचिका दायर कर बीस दिन की छूट की मांगी थी कि नए नेता का चुनाव करना होगा और इस बीच में कोई उथल-पुथल राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध हो सकती है। हालांकि नेता के चुनाव की बात तो दूर, समूची पार्टी ने एक बड़ी रैली 23 जून को कर उनके प्रति न सिर्फ आस्था का परिचय दिया, बल्कि तत्कालीन पार्टी अध्यक्ष देवकांत बरुआ ने सभ्यता की सभी सीमाएं लांघते हुए नारा दिया कि इंदिरा ही भारत है और भारत ही इंदिरा है।

आपातकाल के तमाम प्रसंगों और घटनाक्रम से एक बड़ी सीख मिलती है। जब कोई व्यक्ति या नेता अपने को पार्टी या फिर राष्ट्र का

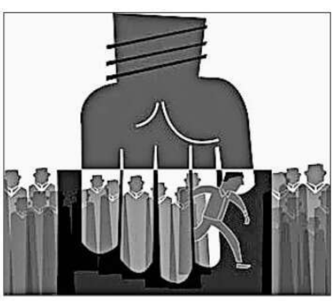

पर्याय मान लेता है, तो लोकतांत्रिक मूल्यों के पतन और तानाशाही की बुनियाद वहीं से शुरू हो जाती है। औपचारिक रूप से आपातकाल थोपना अब असंभव है, पर ऐसी आशंकाएं बनी रहती हैं, जो किसी व्यक्ति विशेष को संस्थागत तंत्रों और सिद्धांतों से ऊपर उठा देता है।

> **सिद्धार्थ शंकर रे जैसे कानूनविद आपातकाल का मसविदा तैयार करने लगे और संजय ब्रिगेड ने जेपी की पुलिस और सेना से की गई अपील को मुख्य मुद्दा बनाकर आपातकाल की योजना तैयार कर ली। रात को 11:45 पर राष्ट्रपति फखरुद्दीन अहमद से हस्ताक्षर करा कर इसकी घोषणा कर दी गई। सुबह छह बजे कैबिनेट की बैठक में सभी महत्त्वपूर्ण जानकारियां आदान-प्रदान होती रहीं। उस समय तक देश के लगभग डेढ़ लाख से ज्यादा नेता और कार्यकर्ता जेल जा चुके थे। परिजनों को यातनाएं दी जा रही थीं। जमानत के लिए अदालतों पर दबाव बनाया गया और प्रेस पर सेंसरशिप लगाकर उसकी आजादी का गला घोंट दिया गया।**

बहरहाल, रैली में सभी प्रमुख दलों के नेताओं के बाद जेपी बोलने को उठे, तो विशाल जनसमुदाय देर तक तालियां बजाकर उनका अभिवादन करता रहा। वातावरण सारगर्भित था और उत्तेजित भी। राष्ट्रकवि दिनकर की इस कविता का कई बार उल्लेख होता है कि- 'सदियों की ठंडी-बुझी राख सुगबुगा उठी/ मिट्टी सोने का ताज पहन इठलाती है/ दो राह, समय के रथ का घर्घर-नाद सुनो/ सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।'

जेपी ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के घटनाक्रम का जिक्र करते हुए इंदिरा गांधी के इस्तीफे की पुनः मांग की कि यह जन समर्थन के अभाव वाली सरकार है और वे इसे अस्वीकार करते हैं। उन्होंने सेना और पुलिस से अपील की कि वे किसी भी अवैध आदेश का पालन न करें, जैसा कि उनका मैन्युअल भी कहता है। इसी प्रकार का प्रस्ताव 1930 के दशक में मोतीलाल नेहरू ने भी पारित किया था कि पुलिस को चाहिए कि वह अवैध आदेशों का पालन न करे। उस समय के अंग्रेज जजों ने भी स्वीकार किया था कि अवैध आदेशों का पालन न करने की अपील करने में कुछ गलत नहीं है।

इंदिरा गांधी असुरक्षा के दौर से गुजर रही थीं। एक तबके द्वारा अदालत का फैसला आने तक किसी वरिष्ठ मंत्री को कार्यभार सौंपने की मांग भी उठने लगी। सरदार स्वर्ण सिंह और बाबू जगजीवन के नाम प्रमुखता से चर्चा में रहे, लेकिन इस दौर में इंदिरा गांधी का किसी नेता पर ऐतबार नहीं बचा था। उनकी मुसीबत को निरंतर बढ़ाने का काम चंद्रशेखर और उनके साथी कर रहे थे। मोहन धारिया, कृष्णकांत, लक्ष्मीकांत झा इस समूह के सदस्य थे, जो निरंतर टकराव टालने और जेपी से संवाद करने के पैरोकार थे। इन्हीं नेताओं के प्रयास से दो दौर की वार्ता इंदिरा गांधी और जेपी के बीच हो चुकी थी, जो बेनतीजा रही।

इसी असुरक्षा के दौर में आरके धवन, संजय गांधी और चौधरी बंसीलाल का त्रिगुट सक्रिय हुआ था। संजय गांधी को मारुति उद्योग के लिए 290 एकड़ जमीन आबंटित किए जाने पर संसद कई बार ठप हो चुकी थी। तीनों ने मिलकर सख्त कार्रवाई करने का दबाव बनाना शुरू कर दिया। इंदिरा गांधी के आवास पर 12 जून से निरंतर जनसमर्थन के नाम पर रैली आयोजित होने लगी। युवा कांग्रेस में उपद्रवी किस्म के तत्त्वों की भरमार हो चली थी। तिगड़ी ने इंदिरा गांधी पर दबाव बनाना शुरू किया कि वे नरम रुख त्यागकर कड़ा रवैया अख्तियार करें। चंद्रशेखर के नार्थ एवेन्यू स्थित आवास पर 24 जून को जेपी के सम्मान में आयोजित भोज में दो दर्जन से अधिक कांग्रेसी सांसदों की उपस्थिति ने सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

सिद्धार्थ शंकर रे जैसे कानूनविद आपातकाल का मसविदा तैयार करने लगे और संजय ब्रिगेड ने जेपी की पुलिस और सेना से की गई अपील को मुख्य मुद्दा बनाकर आपातकाल की योजना तैयार कर ली। रात को 11:45 पर राष्ट्रपति फखरुद्दीन अहमद से हस्ताक्षर करा कर इसकी घोषणा कर दी गई। सुबह छह बजे कैबिनेट की बैठक में सभी महत्त्वपूर्ण जानकारियां आदान-प्रदान होती रहीं। उस समय तक देश के लगभग डेढ़ लाख से ज्यादा नेता और कार्यकर्ता जेल जा चुके थे। परिजनों को यातनाएं दी जा रही थीं। जमानत के लिए अदालतों पर दबाव बनाया गया और प्रेस पर सेंसरशिप लगाकर उसकी आजादी का गला घोंट दिया गया। हालांकि प्रेस क्लब दिल्ली से कुलदीप नैयर की अगुआई में सौ से ज्यादा पत्रकारों ने इसका विरोध किया, लेकिन इंदिरा गांधी के सत्ता के जुनून के सामने सब फीका पड़ गया।

दुनिया मेरे आगे

तकनीकी धुंध में मनुष्यता

कल्पना मनोरमा

आज की तकनीकी प्रगति ने मनुष्य को जितनी सुविधाएं दी हैं, उससे ज्यादा उसके भीतर की संवेदना और आत्मानुभूति को कुंद किया है। मानो मनुष्य अपने ही भीतर से निर्वासित हो चुका है और उसे पता भी नहीं चला। वक्त की खुली चेतावनियों के बीच अगर मनुष्य ने आत्मसमीक्षा, मौन और स्वविवेक को पुनर्जीवित नहीं किया, तो वह दिन दूर नहीं जब रोबोट से भरे समाज में मनुष्य आत्माहीन बनकर रह जाएंगे।

कहने को यह समय विज्ञान की विजयगाथाओं का है। मशीनें तेज और तेज होती जा रही हैं। मशीनी कारनामे लुभावने लग सकते हैं, लेकिन मानवीय हृदय जैसी कोमलता कहां से आएगी? ठंडे और भ्रमित मन वाले व्यक्ति क्या समाज में सहिष्णुता बचा पाएंगे? आज बुजुर्ग हो या नौजवान, सभी के हाथों में स्मार्टफोन की स्क्रीन चमक रही है, लेकिन उनकी अंतरात्मा बुझ रही है। दस सेकंड की रील में जीवन भर की संवेदनाएं खो रही हैं। व्यक्ति की जगह सिकुड़ती जा रही है। अगली और पिछली पीढ़ियों की चेतना की पुनर्स्थापना की जरूरत है, वरना दासता का इतिहास दोहराया जाएगा। अब समय काटा नहीं जाता, बल्कि समय को निगला जा रहा है। अंगुलियां हर वक्त मोबाइल पर चलाते हुए। समय अब 'अनुभव' नहीं, 'उपयोग' की वस्तु बन गया है। यह केवल सांस्कृतिक परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह विवेक का ह्रास और चेतना के शून्य होने का दौर है। मनुष्य अब प्रश्न खड़े नहीं करता। समस्या को मशीनों और सोशल मीडिया के शोर में तिरोहित कर देता है या करने की मंशा रखता है। अकेलापन अब आत्मदर्शन की भूमि नहीं रहा। अकेलेपन में सोशल मीडिया के किसी मंच की कंक्रीट बिछा दी गई है। उसी पर दौड़ती हैं आंखें, कान और मन।

> **त्रासदी यह नहीं है कि इंसान मशीनों जैसा हो रहा है, बल्कि वह आत्मानुभूति की गहराइयों से विमुख होता जा रहा है। जो आत्मसमीक्षा कभी पीड़ा के साथ आती थी, अब उसे 'नकारात्मक तरंगें' कहकर खारिज कर दिया गया है। संवेदनाएं अब इंटरनेट की सामग्री बन गई हैं।**

यहां सब कुछ उपलब्ध है, लेकिन बस मनुष्यता का टोटा है। रील बनाने वाले लोग दूसरे से बेहतर होने में किसी भी सीमा को पार करने के लिए लोग आमादा हैं। बाहर से भरे-भरे दिखने वालों के भीतर भयानक खालीपन पनप रहा है। वह मानवीय चेतना, जो कभी कला के रचाव में जीवन को रचती थी, अब सोशल मीडिया के लिए 'कंटेंट' या सामग्री बन रही है। मानवीय संवेदनाएं अब उपभोक्तावाद के हाथों गिरवी रख दी गई हैं। विवेक का स्थान 'वायरल' होने यानी सुर्खियों में आने की आकांक्षा ने ले लिया है। करुणा की जगह तस्वीरें उतारने के लिए मोबाइल पर थिरकती अंगुलियों ने और सत्य की जगह सुर्खियों और इंटरनेट पर किसी को परेशान करने की प्रवृत्ति ने लिया है। ऐसे में यह प्रश्न उठना अनिवार्य है कि क्या अगली से अगली पीढ़ी मनुष्य कहलाने योग्य बचेगी? आने वाली पीढ़ियां डिग्रीधारी तो होंगी, मगर उनमें सहज जीवन की दृष्टि नहीं होगी। लोग आधुनिक विकास से ओतप्रोत दिखेंगे, पर आत्मविहीन ज्यादा न लगेंगे। मशीनी दासता का यह नया संस्करण पहले से अधिक भयावह होगा।

विकसित युग की गुलामी हथकड़ी से नहीं, 'हैशटैग' से आएगी। शोषण तलवार से नहीं, स्क्रीन से होगा और सबसे बड़ी बात यह पूरी प्रक्रिया लोकतांत्रिक लगेगी, क्योंकि मनुष्य ने स्वयं ही अपने विवेक का दामन छोड़ा होगा। अगर मनुष्य ने अब भी चिंतन नहीं किया, तो वह दिन दूर नहीं जब इतिहास कहेगा कि कभी 'सभ्य मनुष्य हुआ करता था'। यानी मशीनों की गति ने जीवन की गरिमा को निगलना शुरू कर दिया है। रील, एल्गोरिद्म, चैटबाट और स्वचालित जीवनशैली के बीच मनुष्य की चेतना एक 'डेटा पाइंट' बनती जा रही है, जो सोचता नहीं, बस 'स्क्राल' करता जाता है। आधुनिक मनुष्य अपने समय का उपभोक्ता तो बन गया है, पर साधक नहीं रहा। अकेलेपन को अब कोई आत्मान्वेषण की भूमि नहीं मानता, बल्कि उस पर मनोरंजन का लेप लगाकर नकली हंसी हंसता जा रहा है। उदाहरणस्वरूप, चिकित्सा क्षेत्र में, जहां कभी एक चिकित्सक की संवेदनशीलता मरीज के जीवन का भरोसा हुआ करती थी, वहां अब चैटबाट आधारित स्वास्थ्य सहायक किसी को 'आपका समय समाप्त हुआ' कहकर स्क्रीन से हटा देता है। वह आपकी पीड़ा नहीं, केवल आपकी 'इनपुट वैल्यू' पढ़ता है। शिक्षा के क्षेत्र में पहले शिक्षक बच्चों की आंखों में देखकर उनके सवालों को पढ़ते थे। अब कृत्रिम मेधा-प्रशिक्षित ई-मंच केवल 'एंगेजमेंट रेट' और 'रीटेंशन टाइम' को पढ़ते हैं। बच्चों की जिज्ञासा अब 'उपभोक्ता के बर्ताव का डेट' बन गई है।

आज की सबसे बड़ी त्रासदी यह नहीं है कि इंसान मशीनों जैसा हो रहा है, बल्कि वह आत्मानुभूति की गहराइयों से विमुख होता जा रहा है। जो आत्मसमीक्षा कभी पीड़ा के साथ आती थी, अब उसे 'नकारात्मक तरंगें' कहकर खारिज कर दिया गया है। संवेदनाएं अब इंटरनेट की सामग्री बन गई हैं। यह केवल पीढ़ी दर पीढ़ी का अवमूल्यन नहीं है, यह सभ्यता के केंद्रीयता का पतन है। आज का बच्चा रोबोट से बात करना जानता है, लेकिन रिश्तों से संवाद करना भूल चुका है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी एआइ से लैस 'रेप्लिका', 'एलेक्सा' और 'एनिमा' अब मनुष्यों के एकाकीपन के उत्तरदाता बन गए हैं। क्या यह तकनीक की जीत है, या समाज की पराजय? कौन बताएगा? जबकि हमें यह समझना होगा कि जब भी मनुष्य ने अपने भीतर के मौन को मशीनों के स्वर से भरने की कोशिश की है, तब तब सभ्यताओं और संस्कृतियों ने अपनी आत्मा गंवाई है।

दुख इस बात का है कि ये परिस्थितियां खुद मनुष्यों की बनाई हुई हैं। जो अपनी चेतना संरक्षित नहीं कर पाया, वह राष्ट्र चेतना को कैसे बचा पाएगा? फिर यह तकनीकी उन्नति केवल एक छलावा बनकर रह जाएगी। अब समय आ गया है जब हमें स्वयं निर्णय लेना होगा कि विकास की अंधी दौड़ में किसे बचाएंगे- मनुष्य को या मशीन को? संवेदना को या स्क्रीन को? विवेक को या 'आभासी दुनिया' को? अब भी नहीं चेते तो मशीनों के बीच रोबोट बनने से कोई नहीं रोक पाएगा। भविष्य में कहानियों में लोग सुनाया करेंगे कि 'वह एक तकनीकी युग था, जिसमें मनुष्य अपने ही भीतर लुप्त हो गया था।'

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

चौपाल

भूजल की चिंता

पंजाब सरकार ने भूजल बचाने के उद्देश्य से किसानों को कहा है कि वे धान की सीधी बिजाई करें। इसके लिए सरकार ने सीधी बिजाई करने वाले किसानों को प्रति एकड़ 1500 रुपए की वित्तीय सहायता देने का भी एलान किया है। इस तरीके से बिजाई से खेतों में हर वक्त पानी बनाए रखने की जरूरत नहीं होती है। सरकार के इस फैसले से कितना पानी बचेगा या फिर अगर बारिश कम होती है, तो फिर सरकार इसके लिए किसानों की कैसे मदद करेगी, यह तो आने वाला समय बताएगा। हर किसान इसके लिए रुचि दिखाए, इसके लिए सरकार को विशेष अभियान चलाने चाहिए। पंजाब में भूजल स्तर गिर रहा है। अगर गंभीरता नहीं दिखाई, तो जल संकट बढ़ेगा। देश में जहां भूजल स्तर में भारी गिरावट आ रही है, वहां कुछ फसलों का उत्पादन बंद कर देना चाहिए या फसल चक्र बदलना चाहिए और कृषि वैज्ञानिकों को इसके लिए कुछ हल निकालना चाहिए, ताकि देश में जल संकट की समस्या ज्यादा विकराल न हो। सरकार को चाहिए कि वह पानी बचाने के दूसरे उपायों पर भी गंभीरता दिखाए, किसानों को जल संरक्षण और बारिश के पानी को संग्रह करने के लिए जागरूक करें।

– राजेश कुमार चौहान, जलंधर

नाहक विवाद

'मध्यस्थता नामंजूर' (संपादकीय, 19 जून) में आपरेशन सिंदूर और उसके बाद भारत तथा पाकिस्तान के बीच हुए युद्ध विराम पर प्रकाश डाला गया है। मगर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप इस बात पर अड़े हुए हैं कि उनके कहने पर ही दोनों देशों के मध्य शांति हुई। पिछले दिनों भारत और अमेरिका के शीर्ष नेतृत्व के बीच संवाद के बावजूद ट्रंप की हठधर्मिता कायम है। बहरहाल, प्रधानमंत्री ने साफ कह दिया कि भारत-पाक के मामले में किसी देश की मध्यस्थता की न तो कोई आवश्यकता है और न ही उसे किसी की मध्यस्थता स्वीकार्य है। हमारे देश में विभिन्न विपक्षी नेता अनावश्यक रूप से इस विषय को तूल दे रहे हैं जो सर्वथा आपत्तिजनक है। हालांकि भारत सरकार के हिसाब से आतंकवादियों की समाप्ति तक आपरेशन सिंदूर जारी रहेगा। इस पर पक्ष-विपक्ष में जारी विवाद समाप्त होना चाहिए। इसके अलावा अंतरराष्ट्रीय कूटनीति भी किसी वाद-विवाद का विषय नहीं है। यह गंभीर तथा उच्च स्तरीय मामला है।

– इशरत अली कादरी, भोपाल

आपदा में सुरक्षा

पहाड़ों से चट्टान खिसकने और उससे होने वाले हादसे से सजग रहने की जरूरत है। हमें पहाड़ी क्षेत्रों में आपदा से सुरक्षा के लिए बंदोबस्त शुरू कर देना चाहिए। जोशी मठ क्षेत्र में आई दरारें भविष्य में बड़ी आपदा का संकेत है। यह भूकम्पीय क्षेत्र है। यहां निर्माण गतिविधियों का भी असर पड़ा है। लिहाजा इस स्थल पर सावधानी बरतने की आवश्यकता है। वर्षा पूर्व जहां आवश्यकता हो और भूस्खलन होने की संभावना हो, वहां सतर्कता जरूरी है। प्रकृति से छेड़छाड़ का ही नतीजा है कि बादल फटने और भारी वर्षा से पहाड़ों पर तबाही मचती है। इसको कम कैसे किया जाए, अब इस पर ध्यान देना होगा। अगर पहले से उपाय कर लिए जाएं, तो जान-माल के नुकसान को कम किया जा सकता है। इसके लिए सभी प्रदेशों के पहाड़ी क्षेत्रों में जहां सर्वाधिक वर्षा होती है, वहां अवरोधी संरचनाओं तथा अन्य इंतजामों पर ध्यान देकर प्राकृतिक आपदाओं को सहन करने वाला क्षेत्र बनाया जाना चाहिए, ताकि प्राकृतिक आपदा के पूर्व प्रबंधन से नागरिक सुरक्षित हो सकें।

– संजय वर्मा 'दृष्टि' मनावर, धार

निज भाषा

'भाषा की ताकत' (संपादकीय, 21 जून) पढ़ा। निश्चय ही अंग्रेजी भाषा प्रेमियों और उनकी मानसिकता ने राष्ट्रभाषा के उत्थान के मार्ग में कांटे बोए हैं। गृहमंत्री के कथन में अंग्रेजी के प्रति दुराव नहीं, बल्कि देश की भाषाओं के पुनर्जागरण हेतु लोकचेतना को सक्रिय करना है। हिंदी का विरोध करने वाले अपने राज्य की क्षेत्रीय भाषाओं में निर्मित चलचित्रों को हिंदी में डब कर कमाई करने से परहेज नहीं करते। वोट की राजनीति एवं क्षेत्रीयता के नकारात्मक पक्षों ने राष्ट्रभाषा को कमतर करने की हर तिकड़म अपनाई है। किसी भी भारतीय भाषा की समृद्धि एवं प्रगति दूसरी भाषा के प्रति पूर्वाग्रह एवं संकीर्णता से नहीं हो सकती। कोई दो राय नहीं कि गृहमंत्री भारतीय भाषाओं के लिए कुछ ठोस पहल करना चाहते हैं, तो उम्मीद की जानी चाहिए कि अब कुछ बेहतर होगा।

– अशोक कुमार, पटना, बिहार

https://t.me/AllNewsPaperPaid

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, बुधवार 25 जून 2025

संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

ट्रंप और नेतन्याहू ईरान के आगे झुके

नौ सौ चूहे खाकर बिल्ली हज को चली, यह बात इस समय अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर चरितार्थ हो रही है। ट्रंप के खिलाफ उनके पहले कार्यकाल में दो बार महाभियोग प्रस्ताव लाया जा चुका है, कई कानूनी पचड़ों में ट्रंप फंसे हैं, कब ट्रंप सच बोलते हैं, कब दुनिया को बरगलाते हैं इसका ठिकाना नहीं, लेकिन अब वो इजरायल और ईऱान को धर्म और सत्य के मार्ग से भटका हुआ बताकर उन्हें सद्बुद्धि देने की प्रार्थना ईश्वर से कर रहे हैं।

दरअसल भारतीय समयानुसार सोमवार देर रात से लेकर मंगलवार तक ट्रंप ने अपने सोशल मीडिया प्लेटफार्म ट्रुथ पर कम से कम 10 पोस्ट किए, जिसमें उन्होंने ईरान और इजरायल के बीच युद्धविराम का ऐलान किया। एक पोस्ट में ट्रंप ने कहा, 'इजराइल और ईरान लगभग एक साथ मेरे पास आए और 'शांति' की अपील की। मुझे यह पता था कि अब शांति का समय आ गया है। दुनिया और मध्य पूर्व ही असली विजेता हैं!'

उन्होंने लिखा है, 'दोनों देश भविष्य में जबरदस्त प्रेम, शांति और समृद्धि देखेंगे. उन्हें बहुत कुछ हासिल करना है और अगर वे धर्म और सत्य के मार्ग से भटक गए तो उन्हें बहुत कुछ खोना पड़ेगा।'

एक अन्य पोस्ट में ट्रंप ने लिखा-सभी को बधाई! इजरायल और ईरान के बीच पूरी तरह से सहमति बन गई है कि 12 घंटों के लिए पूर्ण और संपूर्ण युद्ध विराम होगा (अब से लगभग 6 घंटे बाद, जब इजरायल और ईरान अपने अंतिम मिशनों को पूरा कर लेंगे!), इसके बाद ईरान-इजरायल के युद्ध को समाप्त माना जाएगा! आधिकारिक तौर पर ईरान युद्ध विराम की शुरुआत करेगा और 12वें घंटे में इजरायल युद्ध विराम की शुरुआत करेगा। 24वें घंटे में 12 दिवसीय युद्ध के आधिकारिक अंत को दुनिया द्वारा सलामी दी जाएगी।

मैं दोनों देशों इजरायल और ईरान को बधाई देना चाहता हूं कि उनके पास 12 दिवसीय युद्ध को समाप्त करने के लिए सहनशक्ति, साहस और बुद्धिमत्ता है। यह युद्ध सालों तक चल सकता था और पूरे मध्य पूर्व को नष्ट कर सकता था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ और न ही कभी होगा!

इसी तरह के कई और पोस्ट ट्रंप ने लिखे हैं, जिसमें जाहिर हो रहा है कि वो एक तरफ दुनिया का सुप्रीम लीडर खुद को मान चुके हैं और दूसरी तरफ उन्हें हर हाल में नोबेल शांति पुरस्कार चाहिए। पता नहीं ट्रंप के मन में ये कैसी कुंठा है कि वे हर वक्त अपना वर्चस्व दिखाने के साथ-साथ दूसरों से अपने लिए तारीफें सुनना चाहते हैं। पाकिस्तान जैसे देश ट्रंप की इस ख्वाहिश को पूरा भी करते हैं।

ट्रंप ने जिस अंदाज में इजरायल और ईरान के बीच युद्धविराम का ऐलान किया, उसी तरह भारत और पाकिस्तान के बीच भी किया था। जिसमें पाकिस्तान तो पूरी तरह अमेरिकी पाले में दिखा, लेकिन प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अब तक इसका खुलकर विरोध नहीं किया है। पिछले हफ्ते ट्रंप से फोन पर हुई चर्चा में दावा है कि श्री मोदी ने तीसरे पक्ष की मध्यस्थता को स्वीकार नहीं किया, मगर अमेरिका ने ऐसा कोई आधिकारिक बयान नहीं दिया और अब भी ट्रंप यही दावा कर रहे हैं।

इधर इजरायल ने युद्धविराम मान तो लिया है, लेकिन उसकी अकड़ अब भी दिख रही है, इजरायल के प्रधानमंत्री कार्यालय की तरफ से कहा गया है कि सेना ने अपने सभी लक्ष्य साध लिए हैं। साथ ही ईरान को चेतावनी दी है कि अगर वह युद्धविराम का उल्लंघन करेगा तो फिर जवाबी कार्रवाई होगी। वहीं ईरान ने इजरायल पर ट्रंप के ऐलान के बाद कुछ और हमले किए और बता दिया कि अपने लिए फैसला वह खुद लेगा। ईरान के विदेश मंत्री सईद अब्बास अराग़ची ने साफ कहा है कि अगर इजरायल ने सैन्य अभियान बंद कर दिया, तो 'हमारा भी किसी तरह की जवाबी कार्रवाई करने का कोई इरादा नहीं है।' ईरान का साफ कहना है कि हमले की शुरुआत इजरायल ने की, तो रोकने की पहल भी उसे ही करनी होगी।

बहरहाल, डोनाल्ड ट्रंप सोमवार तक ईरान को परिणाम भुगतने और सत्ता बदलने की धमकी दे रहे थे, फिर एक दिन में उनके विचार कैसे बदल गए, इसके प्रत्यक्ष तौर पर तीन कारण दिखाई देते हैं। पहला, ईरान पर हमले के बाद अमेरिका समेत दुनिया के कई देशों में ट्रंप का विरोध शुरु हो गया। दूसरा, ईरान ने होर्मुज जलडमरूमध्य को बंद करने का फैसला लिया, जिसके बाद वैश्विक बाजार में घबराहट दिखी, कच्चे तेल की कीमतें बढ़ने लगीं। फारस की खाड़ी को ओमान की खाड़ी से जोड़ने वाले इस संकरे से जलमार्ग से 20-25 प्रतिशत तेल और गैस विश्व में भेजा जाता है। इसे बंद करने से एशिया, यूरोप, उत्तरी अमेरिका सब पर असर पड़ता। अमेरिका ने तो इसके बाद सीधे चीन से अपील की थी कि वह होर्मुज का रास्ता बंद करने से ईरान को रोके। और तीसरा बड़ा कारण ईरान का कतर के अल उदैद एयरबेस पर हमला करना था, जो मध्यपूर्व में अमेरिका का अहम सैन्य अड्डा है। कुछ दिनों पहले ही अमेरिका ने यहां से अपने विमान हटा लिए थे। पिछले महीने ही डोनाल्ड ट्रंप ने इस बेस का दौरा भी किया था। अमेरिका के लिए रणनीतिक तौर पर अहम इस बेस को निशाना बनाकर ईरान ने जाहिर कर दिया कि वह न केवल इजरायल बल्कि अमेरिका पर भी हमला कर सकता है और उसे किसी तरह भी झुकाया नहीं जा सकता। इसके बाद ही डोनाल्ड ट्रंप की तरफ से युद्ध विराम की बात कही जाने लगी।

हालांकि कतर ने इस हमले को अपनी स्वतंत्रता, संप्रभुता पर हमला बताया तो ईरान ने साफ कर दिया कि उसका मकसद केवल अमेरिकी ठिकाना है, और कुछ नहीं। जाहिर है ईरान ने एक बार फिर इजरायल और अमेरिका को गलत साबित किया है, जो दूसरों की संप्रभुता की धज्जियां उड़ाते हुए हमले करते हैं। इजरायल-ईरान हमले में ईरान के साथ मध्यपूर्व के दूसरे देशों को भी अपने अस्तित्व की चिंता होने लगी और उन्हें संभवत: यह समझ आ गया कि ट्रंप किसी के सगे नहीं हैं। आज वे उनसे लाभ ले रहे हैं और कल को उन पर भी हमला बोल सकते हैं। ट्रंप ने जिस तरह ईरान को फिर से महान बनाने के लिए सत्ता परिवर्तन की बात कही थी, उससे भी खाड़ी देश सावधान हो गए। इसी तरह यूरोप के देश भी जो अमूमन अमेरिका के साथ खड़े रहते हैं, इस बार उन्होंने हाथ पीछे खींच लिए, क्योंकि उन्हें समझ आ गया कि ट्रंप अकारण दुनिया को युद्धों में उलझा रहे हैं और खुद शांति की बात करते हैं। ईरान ने पिछले 13-14 दिनों में जिस तरह सिर ऊंचा रखकर इस लड़ाई को लड़ा है, उससे एक तरफ छोटे देशों में नया स्वाभिमान जागा है और अमेरिका का डर दूर हुआ है। वहीं इजरायल के अभेद्य होने का जो गुब्बारा फुलाया गया था, वह भी फूट गया। कुल मिलाकर वियतनाम का इतिहास फिर दोहाराया जा रहा है।

आपातकाल के पांच दशक और मौजूदा 'आफतकाल'

आपातकाल यानी भारतीय लोकतंत्र का पांच दशक पुराना एक स्याह और शर्मनाक अध्याय.., एक द:स्वप्न.., एक मनहूस और त्रासद कालखंड! दस साल पहले यानी भाजपा के सत्ता में आने और नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के एक साल बाद आपातकाल के चार दशक पूरे होने के मौके पर उस पूरे कालखंड को शिद्दत से याद करते हुए भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता और देश के पूर्व उप प्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने देश में फिर से आपातकाल जैसे हालात पैदा होने का अंदेशा जताया था। हालांकि आडवाणी इससे पहले भी कई मौकों पर आपातकाल को लेकर अपने विचार व्यक्त करते रहे थे, मगर यह पहला मौका था जब उनके विचारों से आपातकाल की अपराधी कांग्रेस नहीं, बल्कि उनकी अपनी पार्टी भाजपा हैरान-परेशान होकर बगलें झांक रही थी। वह भाजपा जो कि आपातकाल को याद करने और उसकी याद दिलाने में हमेशा आगे रहती है।

आडवाणी ने एक अंग्रेजी अखबार को दिए साक्षात्कार में देश को आगाह किया था कि लोकतंत्र को कुचलने में सक्षम ताकतें आज पहले से अधिक ताकतवर हैं और पूरे विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि आपातकाल जैसी घटना दोहराई नहीं जा सकती। बकौल आडवाणी, 'भारत का राजनीतिक तंत्र अभी भी आपातकाल की घटना के मायने पूरी तरह से समझ नहीं सका है और मैं इस बात की आशंका से इनकार नहीं करता कि भविष्य में भी इसी तरह से आपातकालीन परिस्थितियां पैदा कर नागरिक अधिकारों का हनन किया जा सकता है। आज मीडिया पहले से अधिक सतर्क है, लेकिन क्या वह लोकतंत्र के प्रति प्रतिबद्ध भी है? कहा नहीं जा सकता। सिविल सोसायटियों ने भी जो उम्मीदें जगाई थीं, उन्हें वे पूरी नही कर सकी हैं।'

आडवाणी का यह बयान यद्यपि दस वर्ष पुराना है लेकिन इसकी प्रासंगिकता तब से अब तक दिनोंदिन बढ़ती गई है। आधुनिक भारत के राजनीतिक विकास के सफर में लंबी और सक्रिय भूमिका निभा चुके एक तजुर्बेकार राजनेता के तौर पर आडवाणी की इस आशंका को अगर हम अपनी राजनीतिक और संवैधानिक संस्थाओं के मौजूदा स्वरूप व संचालन संबंधी व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखें तो पाते हैं कि आज देश आपातकाल से भी कही ज्यादा बुरे दौर से गुजर रहा है।

यह सच है कि उस आपातकाल के दौरान देश के तमाम विपक्षी नेताओं और हजारों कार्यकर्ताओं को आंतरिक सुरक्षा कानून मीसा के तहत जेल में बंद कर दिया गया था। जो लोग गिरफ्तार नहीं किए जा सके थे उनके परिजनों को प्रताड़ित किया गया था। जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम के नाम पर लाखों लोगों की जबरन नसबंदी कर दी गई थी और सेंसरशिप के जरिये अखबारों के मुंह पर ताला लगा दिया था लेकिन उस दौरान कहीं सरकार प्रायोजित दंगे नहीं हुए थे और सांप्रदायिक व जातीय आधार पर लोगों को प्रताड़ित नहीं किया गया था। मगर मोदी राज के अघोषित आपातकाल में यह सब संगठित और सुनियोजित रूप से हो रहा है, जिसमें शासन-प्रशासन की भी पूरी भागीदारी है। दैत्याकार बुलडोजर समूची शासन व्यवस्था का प्रतीक बन गया है, जो कहीं विकास के नाम पर तो कहीं कानून-व्यवस्था के नाम पर कभी भी, किसी के भी कच्चे-पक्के मकान-दुकान को देखते ही देखते जमींदोज कर देता है।

अनिल जैन

> **जिस मीडिया को हमारे यहां लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की मान्यता दी गई है, उसकी स्थिति भी बेहद चिंताजनक है। आज की पत्रकारिता आपातकाल के बाद जैसी नहीं रह गई है। इसकी अहम वजहें हैं बड़े कॉरपोरेट घरानों का मीडिया क्षेत्र में प्रवेश और मीडिया समूहों में ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाने की होड़। इस मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति ने ही मीडिया संस्थानों को जनविरोधी, सरकार का पिछलग्गू और कुछ हद तक देशविरोधी बना दिया है।**

दूसरी तरफ केंद्र सहित देश के आधे से ज्यादा राज्यों में सत्तारूढ़ या सत्ता में भागीदारी कर रही भाजपा के भीतर भी हाल के वर्षों में ऐसी प्रवृत्तियां मजबूत हुई हैं, जिनका लोकतांत्रिक मूल्यों और कसौटियों से कोई सरोकार नहीं है। आपातकाल के दौर में उस समय के कांग्रेस अध्यक्ष देवकांत बरुआ ने चाटुकारिता और राजनीतिक बेहयाई की सारी सीमाएं लांघते हुए 'इंदिरा इज इंडिया-इंडिया इज इंदिरा' का नारा पेश किया था। आज भाजपा में तो अमित शाह, जेपी नड्डा, शिवराज सिंह चौहान, देवेंद्र फडणवीस आदि से लेकर नीचे के स्तर तक ऐसे कई नेता हैं जो नरेंद्र मोदी को जब-तब दैवीय शक्ति बताने में कोई संकोच नहीं करते। वैसे इस सिलसिले की शुरुआत बतौर केंद्रीय मंत्री वेंकैया नायडू ने की थी, जो बाद में उप राष्ट्रपति बनाए गए।

यह स्थिति सिर्फ सत्तारूढ़ दल की नहीं है। आज देश मे लोकतंत्र के पहरुए कहे जा सकने वाले ऐसे संस्थान भी नजर नहीं आते जिनकी लोकतांत्रिक मूल्यों को लेकर प्रतिबद्धता संदेह से परे हो। आपातकाल के दौरान जिस तरह प्रतिबद्ध न्यायपालिका की वकालत की जा रही थी, आज वैसी ही आवाजें सत्तारूढ़ दल के साथ-साथ न्यायपालिका के किसी-किसी कोने से भी सुनाई दे जाती हैं। यही नहीं, सत्तारूढ़ दल की ओर से न्यायपालिका को नसीहत भी दी जा चुकी है कि वे फैसले ऐसे दे, जिन पर अमल किया जा सके। कई महत्वपूर्ण मामलों में तो अदालतों के फैसले भी सरकार की मंशा के मुताबिक ही आ रहे हैं। सूचना के अधिकार को निष्प्रभावी बनाया जा चुका है।

हाल ही में चुनावों के दौरान इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन और मतदाता सूचियों में गड़बड़ियों की गंभीर शिकायतें जिस तरह सामने आई हैं उससे हमारे चुनाव आयोग और चुनाव प्रणाली की साख पर सवालिया निशान लगे हैं। चुनाव में मिले जनादेश को दलबदल और राज्यपालों की मदद से कैसे तोड़ा-मरोड़ा जा रहा है, उसका नजारा भी हम बीते वर्षों में गोवा, मणिपुर, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि राज्यों में देख चुके हैं। नौकरशाही की जनता और संविधान के प्रति कोई जवाबदेही नहीं रह गई है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो समूची नौकरशाही सत्ताधारी दल की मशीनरी की तरह काम करती दिखाई पड़ती है।

जिस मीडिया को हमारे यहां लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की मान्यता दी गई है, उसकी स्थिति भी बेहद चिंताजनक है। आज की पत्रकारिता आपातकाल के बाद जैसी नहीं रह गई है। इसकी अहम वजहें हैं बड़े कॉरपोरेट घरानों का मीडिया क्षेत्र में प्रवेश और मीडिया समूहों में ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाने की होड़। इस मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति ने ही मीडिया संस्थानों को जनविरोधी, सरकार का पिछलग्गू और कुछ हद तक देशविरोधी बना दिया है।

पिछले कुछ वर्षों के दौरान जो एक नई और खतरनाक प्रवृत्ति विकसित हुई वह है सरकार, सत्तारूढ़ दल और मीडिया द्वारा सेना का अत्यधिक महिमामंडन। यह सही है कि हमारे सैन्यबलों को अक्सर तरह-तरह की मुश्किल भरी चुनौतियों से जूझना पड़ता है, इस नाते उनका सम्मान होना चाहिए लेकिन उनको किसी भी तरह के सवालों से परे मान लेना और उसके पराक्रम का खुलेआम चुनावी इस्तेमाल करना तो एक तरह से सैन्यवादी राष्ट्रवाद की दिशा में कदम बढ़ाने जैसा है।

आपातकाल कोई आकस्मिक घटना नहीं बल्कि सत्ता के अतिकेंद्रीयकरण, निरंकुशता और व्यक्ति-पूजा की निरंतर बढ़ती गई प्रवृत्ति का ही परिणाम थी। आज फिर वैसा ही नजारा दिख रहा है। सारे अहम फैसले संसदीय दल तो क्या, कैबिनेट की भी आम राय से नहीं किए जाते; सिर्फ और सिर्फ प्रधानमंत्री कार्यालय और प्रधानमंत्री की चलती है।

आपातकाल के दौरान संजय गांधी और उनकी चौकड़ी की भूमिका सत्ता-संचालन में गैर-संवैधानिक हस्तक्षेप की मिसाल थी, तो आज वही भूमिका राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ निभा रहा है। संसद को लगभग अप्रासंगिक बना दिया गया है। असहमति की आवाजों को चुप करा देने या शोर में डुबो देने की कोशिशें साफ नजर आ रही हैं।

आपातकाल के दौरान और उससे पहले सरकार के विरोध में बोलने वाले को अमेरिका या सीआईए का एजेंट करार दे दिया जाता था, तो अब स्थिति यह है कि सरकार से असहमत हर व्यक्ति को 'पाकिस्तान परस्त' या 'देशविरोधी' करार दे दिया जाता है। आपातकाल में इंदिरा गांधी के बीस सूत्रीय और संजय गांधी के पांच सूत्रीय कार्यक्रमों का शोर था तो आज विकास और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के आवरण में हिंदुत्ववादी एजेंडे पर अमल किया जा रहा है। इस एजेंडे के तहत अल्पसंख्यकों, दलितों और आदिवासियों का तरह-तरह से उत्पीड़न हो रहा है।

आपातकाल के बाद बनी जनता पार्टी की सरकार ने और कुछ उल्लेखनीय काम किया हो या न किया हो लेकिन संवैधानिक प्रावधानों का सहारा लेकर देश पर फिर तानाशाही थोपे जाने की राह को उसने बहुत दुष्कर बना दिया था। यह उस सरकार का प्राथमिक कर्तव्य था जिसे उसने ईमानदारी से निभाया था। लेकिन यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि लोकतांत्रिक मूल्यों और नागरिक अधिकारों का अपहरण हर बार बाकायदा घोषित करके ही किया जाए, यह ज़रूरी नहीं। वह लोकतांत्रिक आवरण और कायदे-कानूनों की आड़ में भी हो सकता है। पिछले एक दशक से देश में यही तो हो रहा है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

उपचुनाव के नतीजों से इंडिया ब्लॉक पार्टियों को बढ़ावा, भाजपा की चिंता बढ़ी

■ **डॉ. ज्ञान पाठक**

चार राज्यों की पांच विधानसभा सीटों पर हुए उपचुनाव के नतीजों से संकेत मिलता है कि भाजपा के लिए चिंता की वजहें हैं, ऐसे समय में जब पार्टी को खुद को मजबूत करने की सख्त जरूरत है। जिन चार राज्यों में उपचुनाव हुए हैं, वे हैं - गुजरात, केरल, पंजाब और पश्चिम बंगाल। चूंकि केरल में विधानसभा का कार्यकाल 23 मई, 2026 को, पश्चिम बंगाल में 7 मई, 2026 को, पंजाब में 16 मार्च, 2027 को और गुजरात में 19 दिसंबर, 2027 को समाप्त होना है, इसलिए चुनाव के नतीजों का खास महत्व है।

केरल का नीलांबर उपचुनाव माकपा समर्थित निर्दलीय विधायक पी वी अनवर के इस्तीफे के कारण कराना पड़ा। यह सीट माकपा के लिए निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है। 2021 के चुनाव में अनवर ने 46.9 प्रतिशत वोट पाकर यह सीट जीती थी। कांग्रेस उम्मीदवार दूसरे स्थान पर रहे और 45.34 प्रतिशत वोट हासिल करने में सफल रहे। भाजपा तीसरे स्थान पर रही और उसे 4.96 प्रतिशत वोट मिले। इस प्रकार यह सीट तीनों राजनीतिक दलों- माकपा, कांग्रेस और भाजपा के लिए रणनीतिक महत्व रखती है।

इस बार माकपा ने अपना उम्मीदवार एम स्वराज को मैदान में उतारा था, जो कांग्रेस उम्मीदवार आर्यदान शौकत से 11,077 वोटों से हार गये। माकपा के लिए यह गंभीर चिंता का विषय है क्योंकि पार्टी एलडीएफ के सत्तारूढ़ गठबंधन का नेतृत्व कर रही है। कांग्रेस उत्साहित है क्योंकि उसने 77737 वोट हासिल करके सीट जीती है जबकि माकपा उम्मीदवार को 66660 वोट मिले हैं।

2021 में एलडीएफ को मिले 81227 वोटों में भारी गिरावट आयी है, और यह संकेत है कि सत्तारूढ़ एलडीएफ केरल के मतदाताओं के बीच सत्ता-विरोधी भावना से ग्रस्त है, जबकि राज्य में अब से 11 महीने के भीतर चुनाव होने की संभावना है। पीवी अनवर को खुद निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में 19,760 वोट मिले।

हालांकि कांग्रेस उम्मीदवार को मिले वोटों में भी 78527 से गिरावट आयी है, लेकिन यह गिरावट एलडीएफ उम्मीदवार की तुलना में कम है। इस प्रकार यह परिणाम आगामी विधानसभा चुनाव में राज्य में कांग्रेस और यूडीएफ के लिए उज्ज्वल भविष्य का संकेत देता है।

केरल भाजपा के लिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि वह राज्य में अपनी राजनीतिक पैठ जमाने की पूरी कोशिश कर रही है। भाजपा उम्मीदवार ने 2021 के चुनाव में 8595 वोट हासिल किए थे, लेकिन इस बार उसे 8648 वोट ही मिल सके। इसका मतलब है कि अपने सघन प्रयासों के बावजूद वह केवल 53 वोट ही बढ़ा पायी। राज्य में खुद को मजबूत करने का भाजपा का सपना टूट गया है।

गुजरात की दो विधानसभा सीटों- विसावदर और कादी- पर उपचुनाव भाजपा, आप और कांग्रेस के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये भाजपा के लिए सबसे महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि पार्टी 1998 से लगातार राज्य पर शासन कर रही है और यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का गृह राज्य है। दो सीटों में से भाजपा ने एक सीट आप के हाथों गंवा दी, जो दर्शाता है कि राज्य में पीएम मोदी और भाजपा का प्रभाव कम होता जा रहा है, जबकि आप का राजनीतिक प्रभाव बरकरार है, बावजूद इसके कि केंद्र की मोदी सरकार ने केंद्रीय जांच एजेंसियों ईडी और सीबीआई के माध्यम से बिना मुकदमा चलाये ही आप के नेतृत्व को राजनीतिक और कानूनी रूप से कुचल दिया है।

सबसे पहले विसावदर सीट की बात करते हैं, जहां आप विधायक भूपेंद्र भयानी के सत्तारूढ़ भाजपा में शामिल होने के बाद उपचुनाव हुए। आप के उम्मीदवार इटालिया गोपाल ने फिर भी भाजपा के उम्मीदवार किरीट पटेल के खिलाफ 17554 वोटों के अंतर से सीट जीत ली। आप उम्मीदवार को 75942वोट मिले, जबकि भाजपा को 58388 वोट मिले हैं। यह एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम है, और भाजपा के लिए अधिक चिंताजनक है, क्योंकि 2022 के विधानसभा चुनाव में उसे मिले 59147 वोटों से उसके वोट में गिरावट आयी है। भाजपा के लिए अतिरिक्त चिंता आप के वोटों में तेज वृद्धि है, जिसने पिछले विधानसभा चुनाव में 66210 वोट हासिल किये थे। कांग्रेस को पिछले चुनाव में 16963 वोटों के मुकाबले इस बार केवल 5501 वोट मिले हैं, जो पार्टी की गिरावट को दर्शाता है।

> **पश्चिम बंगाल में कालीगंज सीट पर उपचुनाव है। टीएमसी विधायक नसीरुद्दीन अहमद की मृत्यु के बाद इस सीट पर उपचुनाव हुआ। भाजपा ममता बनर्जी के नेतृत्व वाली टीएमसी को सत्ता से बेदखल करने की पूरी कोशिश कर रही है, जो इस उपचुनाव के परिणाम को महत्वपूर्ण बनाता है। टीएमसी उम्मीदवार अलीफा अहमद ने 50,000 से अधिक मतों के अंतर से जीत हासिल की। चुनाव परिणाम बताते हैं कि मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के नेतृत्व में टीएमसी राज्य की राजनीति की कमान संभाल रही है।**

गुजरात की कादी विधानसभा सीट पर भाजपा ने कांग्रेस उम्मीदवार को 39452 मतों के अंतर से हराया है। भाजपा विधायक करशन सोलंकी के निधन के बाद इस सीट पर उपचुनाव कराना पड़ा। भाजपा उम्मीदवार राजेंद्र कुमार (राजूभाई) दानेश्वर चावड़ा को 99742 वोट मिले, जबकि कांग्रेस उम्मीदवार रमेशभाई चावड़ा को 60290 वोट मिले। भाजपा के प्रति सहानुभूति के बावजूद, इसके वोट 2021 में इसे मिले107052 वोट से घट गये, लेकिन कांग्रेस को मिले 78858 वोट में तेज गिरावट का सामना करना पड़ा। आप उम्मीदवार तीसरे स्थान पर रहे और उसे पिछले चुनाव में मिले 7253 वोटों के मुकाबले केवल 3090 वोट मिले। सभी दलों के वोटों में सामान्य गिरावट को मतदान प्रतिशत में सामान्य गिरावट से समझा जा सकता है। फिर भी, इंडिया ब्लॉक को यह सबक सीखना चाहिए कि अगर वे एकजुट होते हैं तो वे गुजरात में भी भाजपा को कड़ी टक्कर दे सकते हैं, जो भाजपा के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है।

आप ने न केवल गुजरात में एक सीट जीती है, उसके मौजूदा विधायक के भाजपा में चले जाने और भाजपा द्वारा आप के रैंक और फाइल को तोड़ने के सभी प्रयासों के बावजूद, बल्कि पंजाब में लुधियाना पश्चिम सीट पर भी जीत हासिल की है। यह उन राजनीतिक विश्लेषकों के लिए आंख खोलने वाली बात होनी चाहिए जो भविष्यवाणी कर रहे थे कि आप जल्द ही एक राजनीतिक पार्टी के रूप में समाप्त हो जायेगी। आप के उम्मीदवार संजीव अरोड़ा ने यह जीत हासिल की। आप विधायक गुरप्रीत बस्सी गोगी के निधन के बाद इस सीट पर उपचुनाव कराना पड़ा। आप उम्मीदवार को 35179 वोट मिले, जबकि कांग्रेस उम्मीदवार को 24542 वोट मिले। इससे यह संकेत मिलता है कि आप अभी भी कांग्रेस से आगे है। भाजपा के उम्मीदवार जीवन गुप्ता को केवल 20323 वोट मिले। इस सीट पर 2022 के चुनाव की तुलना में सभी दलों के वोटों में सामान्य गिरावट आयी है, लेकिन कांग्रेस और भाजपा के वोटों में गिरावट आप के मुकाबले ज्यादा तेज है। 2022 के चुनाव में आप को 40443, कांग्रेस को 32931 और भाजपा को 28107 वोट मिले थे। यह दर्शाता है कि आप पंजाब में किसी भी अन्य राजनीतिक दल से ज्यादा मजबूत है और इसलिए राज्य में आगामी विधानसभा चुनाव में इसका भविष्य उज्ज्वल है। भाजपा और कांग्रेस के पास पंजाब में अपने राजनीतिक भविष्य को लेकर चिंतित होने के कारण हैं। यह शिरोमणि अकाली दल (एसएडी) पर भी लागू होता है, जिसे 2022 में 10072 वोटों के मुकाबले इस बार केवल 8203 वोट मिले हैं।

आखिरी, लेकिन कम महत्वपूर्ण नहीं, पश्चिम बंगाल में कालीगंज सीट पर उपचुनाव है। टीएमसी विधायक नसीरुद्दीन अहमद की मृत्यु के बाद इस सीट पर उपचुनाव हुआ। भाजपा ममता बनर्जी के नेतृत्व वाली टीएमसी को सत्ता से बेदखल करने की पूरी कोशिश कर रही है, जो इस उपचुनाव के परिणाम को महत्वपूर्ण बनाता है। टीएमसी उम्मीदवार अलीफा अहमद ने 50,000 से अधिक मतों के अंतर से जीत हासिल की। चुनाव परिणाम बताते हैं कि मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के नेतृत्व में टीएमसी राज्य की राजनीति की कमान संभाल रही है, भले ही भाजपा सरकार उसे हटाने की तमाम बातें कर रही हो।

जबकि केरल में, अप्रैल/मई 2026 में विधानसभा चुनावों से पहले इस साल के अंत तक पंचायत चुनाव होने हैं, पश्चिम बंगाल में, 2026 के विधानसभा चुनावों से पहले कोई अन्य चुनाव नहीं है। इसलिए टीएमसी की जीत पार्टी नेतृत्व को विधानसभा चुनावों के लिए सकारात्मक अभियान को आगे बढ़ाने में मदद करेगी।

ललित सुरजन की कलम से

शिवराज सिंह अखबार निकालेंगे?

'दुनिया में ऐसा कौन सा राजनेता है जो अखबारों को पसंद करता हो? फर्क इतना है कि कुछ नेता आलोचना को सहज भाव से स्वीकार कर लेते हैं, कुछ मन ही मन कुढ़ते रहते हैं और कुछ अपनी नाराजगी खुलकर जाहिर कर देते हैं। मध्यप्रदेश और भाजपा के ही पूर्व मुख्यमंत्रियों की बात करूं तो कैलाश जोशी अखबार में छपी आलोचना से कभी विचलित नहीं होते थे। वीरेन्द्र कुमार सखलेचा को अपनी सरकार के विरुद्ध एक शब्द भी लिखा जाना नागवार गुजरता था। सुन्दरलाल पटवा इसकी कोई परवाह ही नहीं करते थे कि क्या छप रहा है। वे कहते थे- मैं अपना काम कर रहा हूं और अखबार वाले अपना। मध्यप्रदेश में ही कांग्रेस के मुख्यमंत्रियों के इस बारे में अपने-अपने विचार हैं। द्वारिकाप्रसाद मिश्र सामान्य तौर पर आलोचना सहन कर लेते थे, लेकिन एक समय एक अखबार के विज्ञापनों पर उन्होंने कुछ दिन के लिए रोक लगा दी थी। श्यामाचरण शुक्ल संपादकों को सीधे फोन पर नाराजगी जतलाते थे और फिर तुरंत सहज हो जाते थे। अर्जुन सिंह पत्रकारों का कद नापकर तदनुरूप व्यवहार करते थे। दिग्विजय सिंह सखलेचाजी की ही तरह असहिष्णु थे।'

(देशबन्धु में 14 अगस्त 2014 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2014/08/blog-post_13.html

पावन प्रसंग

मन को अशांत करती है ईर्ष्या

सूर्य अस्ताचल के पीछे छिपने जा रहा था। राह चलते ब्राह्मण समाज का मूर्धन्य वर्ग अपने परिजनों की लंबी होती जा रही छाया को देखकर अनुभव कर रहा था कि उनकी चिंता भी इसी प्रकार बढ़ती जा रही है। कहीं दुष्ट और आसुरी प्रकृति के लोग उनका संहार करने के लिए पीछे-पीछे न आ रहे हों। वे रह-रहकर पीछे मुड़कर देख लेते थे। दूर तक कहीं किसी के आने का संकेत नहीं मिलता था; फिर भी चिंता तो थी ही। जिस प्रांत से वे लोग भागकर आ रहे थे; उसमें दुष्ट-प्रवृत्ति के अवांछनीय व्यक्तियों ने ऐसा उत्पात मचा रखा था कि ब्राह्मणों का वहां रहना भी दूभर हो गया था और उन्हें अपनी प्राण-रक्षा भी कठिन लगने लगी थी।

प्राण-रक्षा के लिए ब्राह्मणों का दल अपने परिवारों सहित महर्षि गौतम के आश्रम में आश्रय पाने के लिए निकल पड़ा था। स्त्रियां व्याकुल होकर पूछ उठतीं- 'कितनी दूर है गौतम का आश्रम?' तो उनके साथ चल रहे पुरुष कह उठते- 'कल मध्याह्न तक पहुंच जाएंगे।'

समाज में अवांछनीयताएं इतनी बढ़ चुकी थीं कि रक्षा के लिए भागे ब्राह्मण और उनके परिवार की स्त्रियों को रात में रुकना भी खतरे से खाली नहीं लगा। पता नहीं वे लोग पीछे आ रहे हों और उनके रुकते ही उन तक पहुंच जाएं; इसलिए वे रात को भी चलते रहे और अगले दिन मध्याह्न के समय ब्राह्मणों ने महर्षि गौतम के आश्रम में प्रवेश किया। विदित था कि महर्षि के आश्रम में सिंह और गो-शिशु एक साथ रहते थे। वहां सभी दुष्ट प्रवृत्तियों का शमन हो जाता था; इसलिए सभी ब्राह्मण वहां पहुंचकर निश्चिंत और निर्भय हो गए। महर्षि गौतम से जब उन्होंने सारी स्थिति स्पष्ट की, तो महर्षि ने कहा-'प्रिय अतिथियो! मैं सब तरह से तैयार हूं। आप अपने अग्निहोत्र के साथ यहां निवास करें।'

समय बीतने लगा। ब्राह्मणों के प्रदेश से समाचार आते रहते थे। वहां दुष्ट और अवांछनीय तत्वों के उत्पात शांत होने लगे थे। इधर महर्षि गौतम द्वारा इतने ब्राह्मणों को प्रश्रय दिए जाने के कारण उनकी कीर्ति भी बढ़ रही थी। एक बार भ्रमण करते हुए देवर्षि नारद महर्षि गौतम के आश्रम में आए। उन्होंने महर्षि की प्रशंसा करते हुए कहा- ऋषिवर आपकी यह कीर्ति तो दिग्दिगंत में गाई जा रही है। धन्य हैं आप जैसे परोपकारी और ब्रह्मनिष्ठ संत, जिनके दर्शन कर मैं कृतार्थ हो गया।

नारद तो चले गए, पर प्रश्रित ब्राह्मणों के - मन में ईर्ष्याग्नि भड़क उठी। गौतम का यश - चारों ओर फैल रहा है। फिर एक ब्राह्मण जाने की तैयारी करने लगे। सुबह का समय था महर्षि गौतम अग्निहोत्र से जैसे ही उठे. और वे अरनी पर्णकुटी की ओर जाने लगे, तो उन्होंने देखा कि आश्रम के आंगन में एक दुबली पतली गाय पड़ी है। उन्होंने डैसे ही निकट जाकर देखा कि गाय जीवित है या मृत। उसकी परिक्रमा करने के लिए उसकी पीठ पर हाथ के दंड से हल्का सा प्रहार किया चारों ओर से ब्राह्मण निकल पड़े और उन्होंने शोर मचाया- हाय! हाय! इस पुनीत ब्रह्मवेला में गौहत्या? छोड़ो छोड़ो इस ढोंगी का आश्रम। और प्रकट हो जाने दो संसार के सामने इस पातक को। ऋषि ने ध्यानस्थ होकर देखा कि तो पाया कि यह ब्राह्मणों द्वारा बनाया गया गाय का पुतला है जो उन्हें कलंकित करने के लिए रचा गया है। महर्षि गौतम गुरु ने गंभीर वाणी में कहा-हे ब्राह्मणों, मैं समझ गया हूं कि आपके मूर्धन्य होकर भी आप लोगों के हृदय में इस प्रकार ईर्ष्या और कलुष है, तो आपके समाज में अशांति, अव्यवस्था और विग्रह क्यों नहीं आएगी?

-युग निर्माण योजना

आपके पत्र

दुर्घटना पीड़ितों के लिए 'कैशलेस' उपचार : नीयत नेक व्यवस्था बेकार

देश में जब सरकार यह कहती है कि 'अब किसी भी सड़क हादसे में घायल को पहले सात दिन रुपए 1.5 लाख तक मुफ्त इलाज मिलेगा', तो लगता है जैसे व्यवस्था ने कोई इंसानी चेहरा पहन लिया है। लेकिन जब ज़मीन पर उतरकर इस योजना की हकीकत देखते हैं, तो वो चेहरा धुंधला दिखता है- कभी फाइलों में खोया, कभी पोर्टल में अटका, और कभी अस्पताल की बेरुखी में दम तोड़ता।

यह नकदरहित उपचार योजना मोटर वाहन अधिनियम की धारा 162 के तहत शुरू की गई थी। उद्देश्य यही था कि किसी गरीब या अमीर को इलाज के लिए अपनी जेब नहीं टटोलनी पड़े। पहली दृष्टि में यह लगता है कि सरकार ने आम जन की पीड़ा को समझा है। लेकिन फिर वही पुराना सवाल उठता है— क्या नीयत और नीति के बीच की दूरी को व्यवस्था कभी पाट पाएगी?

अभी तक कई राज्यों ने तो इस योजना को लागू करने के आदेश ही नहीं दिए हैं। राजधानी दिल्ली से सटे नोएडा और गाजियाबाद जैसे विकसित क्षेत्रों में भी जून 2025 तक अस्पतालों को पता ही नहीं था कि योजना चालू हो चुकी है। क्या ये हास्यास्पद स्थिति नहीं कि योजना चालू हो गई है लेकिन अस्पताल और डॉक्टर उसे ढूंढ रहे हैं जैसे कोई खोया हुआ यातायात संकेत? और जो अस्पताल योजना से जुड़े भी हैं, वहां इलाज की सीमा 1.5 लाख की है। अब ज़रा सोचिए — एक गंभीर सड़क हादसे में भर्ती मरीज़ का आईसीयू, सर्जरी, दवाइयां, जांच—क्या ये सब 1.5 लाख में सिमट सकते हैं? निजी अस्पतालों ने तो साफ कहा है— हमें घाटे में क्यों काम करना चाहिए? और सरकार जवाब देती है — 'देशसेवा!' लेकिन क्या देशसेवा खाली डॉक्टरों की ज़िम्मेदारी है? नीति निर्धारकों की नहीं?

संकट सिर्फ पैसों तक सीमित नहीं है। पोर्टल — हां वही कम्प्यूटर पर बना पोर्टल— जिसे देखकर अस्पताल का बाबू भी माथा पकड़ ले। कभी दस्तावेज़ अपलोड नहीं होते, कभी फार्म अधूरा रह जाता है, और कभी पूरा क्लेम 'त्रुटि' में चला जाता है। मरीज तो क्या, अस्पताल तक को नहीं मालूम होता कि किससे संपर्क करें, कहां सुधार करवाएं। अस्पताल, पुलिस, बीमा एजेंसियां और राज्य स्वास्थ्य प्राधिकरण— सबके पास अलग-अलग नियम, अलग-अलग समझ, और एक जैसी असमंजस है। कोई नहीं जानता किसका क्या काम है। लगता है जैसे योजना एक मंचन है जिसमें सभी पात्र हैं, लेकिन किसी को पटकथा नहीं दी गई।

और तो और, कई बार दुर्घटना इतनी गंभीर होती है कि आसपास के जो अस्पताल हैं, वे योजना में पंजीकृत नहीं होते। ऐसे में वे 'स्थिति स्थिरीकरण' (स्टेबिलाइजेशन) भी करने से डरते हैं, उन्हें डर है कि कहीं पैसा न फंस जाए! परिणाम— घायल मरीज एंबुलेंस में इधर से उधर ढोया जाता है, और उसका 'गोल्डन ऑवर' यानी जीवन बचाने का सबसे कीमती समय— रास्तों में ही बीत जाता है।

अब बात करें सबसे बुनियादी लेकिन सबसे उपेक्षित पक्ष की-जागरूकता। जनता को नहीं पता कि ऐसी कोई योजना है। सड़क पर पड़ी एक घायल महिला को देखकर लोग कैमरा तो निकाल लेते हैं, लेकिन इलाज के लिए योजना का नाम नहीं बता पाते। अस्पताल में कार्यरत स्टाफ तक को नहीं मालूम होता कि कैसे योजना को लागू किया जाए। योजना का लाभ तब मिलेगा जब लाभार्थी को पता ही नहीं कि वो लाभार्थी है?

-प्रियंका सौरभ

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770

ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 110

लोकतंत्र पर धब्बा

आजाद भारत के इतिहास में 25 जून को एक ऐसी घटना की 50 साल पूरे हो रहे हैं जिसमें 21 महीनों तक सत्ता का अतिरेक देखने को मिला था। उस अवधि में नागरिकों की संविधान प्रदत्त स्वतंत्रताओं को खत्म कर दिया गया था और विभिन्न संस्थानों की नियंत्रण एवं संतुलन व्यवस्था पूरी तरह विफल हो गई थी। आपातकाल पर राष्ट्रपति, कैबिनेट और संसद ने मुहर लगाई थी। यह आपातकाल बाह्य आक्रमण और आंतरिक अशांति के खतरे के नाम पर लगाया गया था। इस फैसले को सर्वोच्च न्यायालय के पीठ के उस कुख्यात निर्णय से भी बल मिला जिसके तहत हैबियस कार्पस (बंदी प्रत्यक्षीकरण, यह सुनिश्चित करता है कि किसी व्यक्ति को गैर कानूनी तरीके से हिरासत में नहीं रखा जा सकता) जैसे मौलिक संरक्षण तक को निरस्त कर दिया गया था। कुल मिलाकर देखें तो जिन लोगों या संस्थाओं को लोकतांत्रिक मूल्यों का संरक्षण करना था उनके द्वारा इनके उल्लंघन ने तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली सरकार को प्रतिपक्षियों को असीमित अवधि तक हिरासत में रखने में मदद की। इसने प्रेस की आजादी को भी अभूतपूर्व तरीके से कुचले जाने की परिस्थितियां तैयार कीं। संविधान के अनुच्छेद 352 की आड़ लेकर इंदिरा गांधी ने जनसंख्या नियंत्रण का एक ऐसा कठोर कार्यक्रम आरंभ किया जिसने हजारों परिवारों के नागरिक अधिकारों का उल्लंघन किया। उन्होंने झुग्गियों को तोड़ने की एक परियोजना भी चलाई जिसका नतीजा विरोध कर रहे रहवासियों को पुलिस द्वारा मारे जाने के रूप में सामने आया। मानवाधिकारों के हनन की यह कहानी अफसरशाही या निर्वाचित पदाधिकारियों द्वारा नहीं लिखी गई थी बल्कि यह इंदिरा गांधी के बेटे द्वारा असंवैधानिक शक्ति के प्रयोग से जन्मी थी। प्रेस पर लगे प्रतिबंधों तथा खबरों को गायब किए जाने के कारण देश की आबादी का बड़ा हिस्सा इस बारे में ठीक से जान ही नहीं पाया।

ऐसे समय में जब प्रेस की आज़ादी को कुचलने के छिपे हुए प्रयासों की बात जोर पकड़ रही है, यह याद करना उचित है कि आपातकाल के दौरान लोकतंत्र के इस चौथे खंभे पर किस कदर दबाव बनाया गया था और इसके क्या परिणाम हुए थे। उस समय जो दमनकारी गतिविधियां सामने आई थीं उनमें आपातकाल की घोषणा के महज कुछ घंटों के भीतर दिल्ली के प्रमुख समाचार पत्रों के दफ्तरों-प्रेस की बिजली काट देने जैसी घटना शामिल थी ताकि उन्हें छपने से रोका जा सके। आश्चर्य नहीं कि निरंतर दमन और दबाव के माहौल में जहां बिना जमानत के जेल भेज दिया जाना आम था, कई संपादकों ने सीमित प्रतिरोध की राह चुनी। जो अधिक साहसी थे, उन्होंने तानाशाही की सीमाओं को परखने का प्रयास किया। मिसाल के तौर पर इंडियन एक्सप्रेस ने अभिव्यक्ति की आज़ादी के दमन के विरुद्ध मूक प्रतिरोध के रूप में अपने संपादकीय पन्ने को पूरी तरह खाली प्रकाशित कर दिया था। सूचनाओं का प्राथमिक स्रोत सरकारी नियंत्रण वाला दूरदर्शन और आकाशवाणी ही रह गए थे, जो सरकार का प्रचार करते थे। ऐसे में आम भारतीय दमन को ठीक से समझ भी नहीं पा रहे थे। किसी भी लोकतांत्रिक देश में स्वतंत्र प्रेस न केवल लोगों को शिक्षित करने का काम करती है बल्कि वह उन्हें वैचारिक चयन और विकल्प भी मुहैया कराती है। प्रेस सरकारों के लिए भी अहम है। सत्ता से सच बोलना भले असहज करे लेकिन वह उसे बताता है कि जनता क्या सोच रही है। इन आवाजों को खामोश करना इंदिरा गांधी की बुनियादी गलती थी। अपने इर्द गिर्द मौजूद लोगों के कहने में आकर उन्होंने चुनावों की घोषणा कर दी और उनकी पार्टी सत्ता से बाहर हो गई।

50 साल बाद आपातकाल बुजुर्ग पीढ़ी की यादों में है जिन्होंने उसे जिया। 1990 के बाद जन्मे भारतीयों के लिए उदारीकरण के बाद आई समृद्धि और आत्मविश्वास ने उस काले दौर की समझ को धुंधला कर दिया है। परंतु उसकी छाया बरकरार है क्योंकि संस्थागत ढांचा और शासन संस्कृति वही पुरानी है। उदाहरण के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने 1975 में हैबियस कार्पस पर लगे प्रतिबंधों को 2017 में जाकर समाप्त किया। 25 जून, 1975 और 21 मार्च, 1977 के बीच आपातकाल के दौरान भारतीय गणराज्य के बुनियादी विचारों को मजाक बना दिया गया। यह दिखाता है कि जब लोकतंत्र की रक्षा के लिए जिम्मेदार लोग उसे जानबूझकर कमजोर करते हैं तो इसके कितने बुरे परिणाम सामने आते हैं। उन तमाम सबक को भूलना नहीं चाहिए।

हवाई सुरक्षा ढांचे पर पुनर्विचार आवश्यक

देश की हवाई सुरक्षा नियामक एजेंसी के मौजूदा स्वरूप में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है। बता रहे हैं केपी कृष्णन

हमें हाल ही में हुई त्रासद हवाई दुर्घटना के बाद सामूहिक राष्ट्रीय शोक की घड़ी में देश की हवाई सुरक्षा क्षमताओं को लेकर आत्मावलोकन करने की भी आवश्यकता है। सैद्धांतिक तौर पर हम जानते हैं कि बाजार के स्तर पर होने वाली विफलताएं सरकारों को हस्तक्षेप के लिए प्रेरित करती हैं। कुछ ही विमानन कंपनियों के छोटे से समूह के एकाधिकार से बाजार की ताकत की समस्या हो सकती है। कुछ विमानन कंपनियां मुनाफा बढ़ाने के लिए सुरक्षा व्यय में कटौती कर सकती हैं। आमतौर पर यात्रियों से यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि वे किसी विमानन कंपनी की सुरक्षा का आकलन कर सकें क्योंकि उन्हें इस विषय में बहुत अधिक जानकारी नहीं होती। विमान दुर्घटनाएं अक्सर कई पक्षों पर भारी पड़ती हैं। ऐसे में इन बाजार विफलताओं से निपटने और विमानन कंपनियों में हस्तक्षेप करने के लिए सरकारी एजेंसी की आवश्यकता है। फिलहाल हमारे देश में यह काम नागर विमानन महानिदेशालय यानी डीजीसीए करता है।

नियामकीय सिद्धांत हमें इस बारे में बहुत कुछ बताता है कि ऐसे संगठन को किस तरह गठित किया जाना चाहिए। इसके लिए कार्यकारी सरकार की मदद, विशेषज्ञों की विशेषज्ञता, और सहजता से तथा निर्णायक कदम उठाने की क्षमता की आवश्यकता होती है। इसे विधायी रूप से शक्तिसंपन्न होना चाहिए कि वह इस क्षेत्र का नियमन कर सके, स्वायत्त हो और पर्याप्त संसाधन संपन्न हो यानी उसके पास मानव संसाधन, वित्तीय व्यवस्था और जरूरी खरीद के लिए पर्याप्त संसाधन हों। उसे इनके लिए किसी सरकारी विभाग पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। हमें यह याद करना चाहिए कि सांविधिक नियामक प्राधिकरण (एसआरए) की स्थापना की एक वजह विशेष कौशल, श्रम शक्ति और प्रक्रिया तैयार करना भी है जो सरकार से अलग हों।

मौजूदा डीजीसीए की बात करें तो इसके पास एक मजबूत संगठनात्मक ढांचा और समर्पित काम करने वाले लोग हैं जो हर कीमत पर सुरक्षा को बरकरार रखना चाहते हैं। परंतु इसकी संस्थागत डिजाइन में कई जरूरी तत्व नदारद हैं। डीजीसीए की शक्तियां मोटे तौर पर कार्यकारी अधिसूचनाओं के जरिये आती हैं। इसके अलावा ये शक्तियां आज़ादी के पहले बने एक कानून और 2024 के एक पूरक अधिनियम की बदौलत भी आती हैं। संस्था के पास ऐसा कोई स्पष्ट उद्देश्य या स्वायत्तता नहीं है जो संसद के एक आधुनिक, समग्र और विशिष्ट अधिनियम से प्राप्त हो, जिसमें इसके अधिकार, स्वतंत्रता और संचालन की संरचना को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया हो। यह संस्था नागर विमानन मंत्रालय के सीधे प्रशासनिक नियंत्रण में एक अधीनस्थ कार्यालय के रूप में काम करती है। बजट, नीतिगत निर्देश और यहां तक कि स्टाफ की संख्या से जुड़े निर्णय भी अक्सर मंत्रालय से ही आते हैं। इससे एजेंसी की क्षमता के विकास में बाधा उत्पन्न होती है। डीजीसीए अपने मानव संसाधन के लिए पारंपरिक लोक सेवा भर्ती प्रक्रिया का पालन करता है। ऐसे में उत्कृष्ट विमान चालकों, विमानन रखरखाव इंजीनियरों, एयर ट्रैफिक कंट्रोल विशेषज्ञों और दुर्घटनाओं की जांच करने वालों को साथ जोड़ना मुश्किल होता है क्योंकि उनके पास विमानन कंपनियों, एआरओ (मेंटेनेंस, रिपेयर और ओवरहॉल करने वाली संस्थाएं) या अंतरराष्ट्रीय विमानन संस्थाओं में काम करने के बेहतर अवसर होते हैं।

मंत्रालय के अधीनस्थ कार्यालय के रूप में डीजीसीए के वित्तीय संसाधन भी सालाना बजट आवंटन पर निर्भर रहते हैं। अक्सर उसे अन्य मंत्रालयीन प्राथमिकताओं से जूझना पड़ता है। इसकी वजह से अक्सर उसे कम फंडिंग मिलती है और बेहतरीन जांच उपकरणों, उन्नत प्रणालियों और प्रशिक्षण सुविधाओं या अहम आईटी अधोसंरचना आदि में निवेश की उसकी कोशिशें कमजोर पड़ जाती हैं। जबकि सुरक्षा निगरानी में इन सब की अहम भूमिका होती है। संसाधनों की बाधा और खरीद की सीमाएं दोनों ऐसी तकनीक को तेजी से अपनाने और लागू करने में दिक्कत पैदा करती हैं।

एक पारंपरिक सरकारी विभागीय ढांचे में संचालन अनिवार्य तौर पर कई तरह की मंजूरियों पर निर्भर होता है और धीमी निर्णय प्रक्रिया उत्पन्न करता है। विमानन के क्षेत्र में जहां हालात तेजी से बदल सकते हैं, वहां ऐसी देरी एजेंसी के प्रभाव को कम करती है। ये ढांचागत और परिचालन सीमाएं मिलकर समस्याओं को बढ़ाती हैं और नियामक की स्वायत्तता को लेकर भरोसा कमजोर होता है। वहीं बेहतरीन कार्य व्यवहार को अपनाने में धीमापन और सुरक्षा प्रबंधन में नवाचार की संभावना कम होती है। कुल मिलाकर ये बातें डीजीसीए के लिए उसके प्राथमिक उद्देश्य को हासिल करने की क्षमता पर असर डालती हैं।

विकसित देशों की ऐसी ही सरकारी एजेंसियों की बात करें तो अमेरिका में फेडरल एविएशन एडमिनिस्ट्रेशन (एफएए) नामक एक समकक्ष एजेंसी है। यह विमानों के डिजाइन, निर्माण, रखरखाव और परिचालन का नियमन करती है। यह सभी प्रकार के नागरिक विमानों, विमान चालकों, मैकेनिकों और विमान कंपनियों का प्रमाणन करती है और यह सुनिश्चित करती है कि वे उसके कठोर मानदंडों को पूरा करें। इसकी परिचालन शाखा यानी एयर ट्रैफिक ऑर्गनाइजेशन (एटीओ) हवाई क्षेत्र का प्रबंधन करती है। एफएए के पास अपने कर्मी और खरीद व्यवस्था है जो अधिकांश संघीय एजेंसियों का संचालन करने वाले नियमों से अलग है। यूके में समकक्ष एजेंसी का नाम है सिविल एविएशन अथॉरिटी यानी सीएए। यह विमानों के डिजाइन, निर्माण, रखरखाव और परिचालन का नियमन करती है। इसके काम में यूके में पंजीकृत विमानों का प्रमाणन, विमान चालकों, एयर ट्रैफिक कंट्रोलरों का प्रमाणन और विमानन कंपनियों द्वारा सुरक्षा अनुपालन सुनिश्चित करवाना शामिल है। नियामकीय सिद्धांत के अनुसार ही तथा नियामक और सेवा प्रदाता के बीच के अंतर को एक कदम आगे ले जाते हुए, विमानन क्षेत्र का परिचालन प्रबंधन पूरी तरह स्वतंत्र संस्था द्वारा किया जाता है जिसका नाम है: एनएटीएस। यह सार्वजनिक-निजी भागीदारी में काम करती है। यह ढांचागत अलगाव उनकी प्रशासनिक स्वायत्तता सुनिश्चित करता है। सीएए एक सार्वजनिक निकाय के रूप में यूके के सिविल सेवा नियमों से बंधा नहीं है और इसलिए उसने अपनी नीतियां तय की हैं और उसकी अपनी खरीद प्रक्रिया भी है जो सरकार से अलग है। एनएटीएस एक निजी कंपनी है वह पूर्ण व्यावसायिक स्वायत्तता के साथ संचालित होती है। उसने अपने अलग खरीद नियम तय किए हैं और उसकी रोजगार शर्तें सरकारी प्रारूप से पूरी तरह बाहर हैं।

आगे की राह क्या है?

संसद द्वारा एक नया व्यापक कानून बनाया जाना जरूरी है ताकि एक विमानन सुरक्षा प्राधिकरण (एएसए) का गठन किया जा सके। हमें भारतीय वित्तीय संहिता की तर्ज पर एक स्वच्छ, आधुनिक और व्यवस्थित मसौदा कानून की जरूरत है। नए संगठन को परिचालन की स्वायत्तता हासिल होनी चाहिए और उसका अपना गवर्निंग बोर्ड होना चाहिए जिसके पास स्पष्ट रूप से व्याख्यायित शक्तियां हों, जिसके पास सुरक्षा को बाकी चीजों पर प्राथमिकता देने का शासनादेश हो। बोर्ड का घटक और उसकी भूमिका राज्य की क्षमता हासिल करने की दृष्टि से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। बोर्ड को प्रबंधन टीम को भी जवाबदेह बनाना चाहिए और संगठन की समस्त गतिविधियां पारदर्शिता और जवाबदेही के लिहाज से अनुकूल होनी चाहिए।

उसके पास वित्तीय स्वायत्तता होनी चाहिए। उसकी फंडिंग के लिए हवाई सफर पर एक समर्पित उपकर लगाया जा सकता है या फिर एक खास आवंटन जो सालाना सरकारी आवंटन पर निर्भर न हो। इससे वह जरूरी अधोसंरचना, तकनीक और मानव संसाधन में निवेश करने में सक्षम होगा। उसे अपनी मानव संसाधन नीतियां तैयार करने की स्वायत्तता होनी चाहिए जिसमें नियुक्तियों में लचीलापन, प्रतिस्पर्धी वेतन और एक विशिष्ट विमानन सुरक्षा पेशेवर काडर तैयार करना शामिल हो।

अनुबंध प्रणाली जटिल तकनीकी दिक्कतों को हल करने में एक अहम बाधा बन कर सामने आ रही है। ऐसे में नई संस्था को सरकारी अनुबंधों के अनुभवों के आधार पर विकसित नए ज्ञान का इस्तेमाल करने वाला होना चाहिए। अगर भारत को एक प्रमुख वैश्विक अर्थव्यवस्था और प्रमुख हवाई परिवहन केंद्र बनना है तो एक ऐसा सुरक्षा नियमन ढांचा आवश्यक है जो विश्व स्तरीय हो, स्वायत्त हो और किसी भी तरह की कमजोरी से मुक्त हो।

(लेखक आईसीपीपी में मानद सीनियर फेलो और पूर्व अफसरशाह हैं)

दरों में कटौती से नहीं बदलेंगे वृद्धि संबंधी हालात

गत 6 जून को भारतीय रिजर्व बैंक ने रीपो दर में 50 आधार अंक (यह घटकर 5.5 फीसदी रह गई) और नकद आरक्षित अनुपात (सीआरआर) में 100 आधार अंक की कटौती करके बाजारों को चौंका दिया। सीआरआर में इसे सितंबर से नवंबर तक चरणबद्ध तरीके से 25-25 आधार अंकों की कटौती के रूप में लागू किया जाएगा। उम्मीद है कि इससे व्यवस्था में 2.5 लाख करोड़ रुपये की अतिरिक्त नकदी आएगी और यह उम्मीद जगाता है। इस ऐलान के दिन निफ्टी सूचकांक में एक फीसदी की तेजी आई जबकि अगले दिन मामूली सुधार देखने को मिला।

बहरहाल, सप्ताह के अंत तक सूचकांक दोबारा कटौती के पहले के स्तर तक गिर गया। रिजर्व बैंक अपने रुख को 'समायोजन' से 'तटस्थ' कर रहा है ऐसे में कोई नरमी चक्र नहीं होगा। केवल 100 आधार अंकों की कटौती से मांग में अपेक्षित सुधार नहीं होगा। रिजर्व बैंक की अपेक्षा है कि सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी गत वर्ष की तरह 6.5 फीसदी रहेगी और उपभोक्ता मूल्य आधारित मुद्रास्फीति थोड़ी कम रहेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि कुल वृद्धि अनुमान कमजोर ही हैं। इसकी वजह यह है कि अर्थव्यवस्था के चार मुख्य कारक धीमे पड़े हुए हैं।

पहले खपत की बात करते हैं। अंतिम निजी खपत व्यय (पीएफसीई) जो देश के जीडीपी में करीब 60 फीसदी का हिस्सेदार है उसकी वृद्धि दर कोविड के पहले के 6.8 फीसदी से घटकर 2019-20 में 4.1 फीसदी रह गई। महामारी के बाद सुधारों के एक छोटे दौर के बाद इसमें दोबारा गिरावट आई और रिजर्व बैंक के मुताबिक वित्त वर्ष 24 में यह घटकर 5.4 फीसदी रह गई और राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के मुताबिक तो यह केवल 4.4 फीसदी रह गई। खपत में वापसी अल्पकालिक रही क्योंकि यह ऋण और सरकार द्वारा कल्याण व्यय में इजाफे पर केंद्रित थी। आखिरकार अधिकांश क्षेत्रों (इंजीनियरिंग, वित्तीय सेवा, खुदरा, सूचना प्रौद्योगिकी, लॉजिस्टिक्स और उपभोक्ता वस्तु) में औसत आय वृद्धि मुद्रास्फीति से कम रही। परंतु ऋण आधारित खपत की अपनी सीमाएं हैं। वर्ष 2023 के मध्य से ही पर्सनल लोन में वृद्धि कम हुई है और वह 22 फीसदी से घटकर करीब 10 फीसदी रह गई, जो घटते खपत की वजह से है।

अतार्किक विकल्प

देवाशिष बसु

जीडीपी वृद्धि में दूसरा तत्व है विशुद्ध निर्यात (यानी निर्यात में से आयात को घटाने के बाद आया आंकड़ा)। भारत के निर्यात की हालत ठीक नहीं। मोबाइल फोन के बढ़ते निर्यात जैसी सुर्खियां बटोरने वाली खबरें वस्तु निर्यात के क्षेत्र में हमारे कमजोर प्रदर्शन को छिपा लेती हैं। वित्त वर्ष 24 में वस्तु निर्यात में वृद्धि गिरकर 12.8 फीसदी रह गई और वित्त वर्ष 25 में इसके केवल दो फीसदी बढ़ने की उम्मीद है। साल दर साल देश का शुद्ध निर्यात नकारात्मक बना हुआ है। आयात पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। जीवाश्म ईंधन और स्वर्ण आयात केवल तभी लाभदायक साबित होते हैं जब इनकी कीमतें कम होती हैं। निर्यात में इजाफा नहीं हो रहा है क्योंकि कारोबार की भारी लागत भारतीय निर्यातकों की उत्पादकता और प्रतिस्पर्धी क्षमता को छीन लेती है। देश का सेवा निर्यात और भारी भरकम धनप्रेषण कुछ हद तक कमजोर शुद्ध निर्यात के प्रभाव को कम कर देता है।

वृद्धि का तीसरा कारक है निजी पूंजीगत व्यय। नई चमकती दमकती फैक्ट्रियों के निर्माण के तमाम प्रमाण हमारे सामने हैं लेकिन सबसे व्यापक और विश्वसनीय आंकड़े इतनी अच्छी तस्वीर नहीं पेश करते। सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के एक दूरदर्शी सर्वेक्षण के मुताबिक वास्तविक वांछित निजी पूंजीगत व्यय वित्त वर्ष 25 के 6.56 लाख करोड़ रुपये से घट कर वित्त वर्ष 26 में 4.9 लाख करोड़ रुपये रह जाएगा। यह करीब 26 फीसदी की गिरावट होगी। यह सर्वेक्षण बड़े उपक्रमों तक सीमित था और छोटे तथा मझोले उपक्रमों की स्थिति और खराब है। धीमे व्यय की एक वजह धीमी मांग भी है। इसकी एक वजह राज्य भी है जो एक फलते-फूलते, प्रतिस्पर्धी और नवाचारी कारोबारी माहौल की राह में आड़े आता है।

यह बात हमें वृद्धि के चौथे इंजन की ओर ले जाती है- सरकारी पूंजीगत व्यय। शायद मौजूदा माहौल में यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। भारत पुराने दबदबे वाले मॉडल पर टिका हुआ है और ठहरी हुई वृद्धि के दौर में भी नागरिकों और कारोबारियों से बहुत भारी मात्रा में पैसे उगाहे जा रहे हैं। ध्यान रहे कि विनिर्माण और निर्यात क्षेत्र की वृद्धि निहायत धीमी है और बड़ी कंपनियां भी अपना राजस्व दो अंकों में करने को लेकर संघर्ष कर रही हैं। परंतु वित्त वर्ष 20 से 25 के बीच वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी से सरकार की प्राप्तियां 19.46 फीसदी वार्षिक की जबर्दस्त गति से बढ़ीं। वित्त वर्ष 23 और 24 में जीएसटी संग्रह और भारी उधारी के दम पर सरकार ने व्यय में काफी इजाफा किया। वित्त वर्ष 24 के केंद्रीय बजट में 10 लाख करोड़ रुपये के भारी भरकम पूंजीगत आवंटन की घोषणा की गई जिसे वित्त वर्ष 25 में बढ़ाकर 11 लाख करोड़ रुपये कर दिया गया। इसे रेलवे, सड़क, शहरी परिवहन, जल संबंधी कार्यों, ऊर्जा में बदलाव और रक्षा उत्पादन पर खर्च किया जाना था। इससे वृद्धि को दो साल तक गति मिली। हालांकि भारी आवंटन के बावजूद वास्तविक सरकारी पूंजीगत व्यय वित्त वर्ष 25 में आश्चर्यजनक रूप से धीमा रहा। उस वर्ष कोई वृद्धि नहीं हुई जबकि राजस्व व्यय बढ़ा और राजस्व घाटा 22 फीसदी हो गया। एक ऐसे समाज में जहां विधि के नियम कमजोर हैं, बेतहाशा भ्रष्टाचार है और लालफीताशाही का बोलबाला है वहां वृद्धि के कारक के रूप में सरकारी पूंजीगत व्यय की सीमा जाहिर है। इतना ही नहीं अगर कर और व्यय के नीचे प्रसार की उम्मीद थी तो वह भी नाकाम साबित हुई है। देश में ग्रामीण क्षेत्रों में मेहनताने और रोजगार वृद्धि में स्थिरता आई है। इसने खपत वृद्धि को प्रभावित किया है।

स्पष्ट है कि रिजर्व बैंक और मौद्रिक नीति समिति का काम ढांचागत मुद्दों को हल करना और जादू की छड़ी से वृद्धि तैयार करना नहीं है। अगर मौजूदा आर्थिक रणनीति के नाकाम होने के किसी प्रमाण की आवश्यकता है तो वेतन वृद्धि इसका प्रमाण है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक कर्मचारी भविष्य निधि में शुद्ध पेरोल यानी वेतन के मामलों का जुड़ाव वित्त वर्ष 24 में 5.1 फीसदी ऋणात्मक रहा और वित्त वर्ष 25 में यह 1.3 फीसदी ऋणात्मक है। मानसिक श्रम वाले कामों से संबंधित नौकरियों के लिए जॉबसीक सूचकांक वित्त वर्ष 23 से ही स्थिर है। रोजगार सृजन में कमी दिखाती है कि 6.5 फीसदी की हेडलाइन जीडीपी वृद्धि कितनी नाकाम साबित हुई है। यह उपभोग को भी बाधित करता है जो अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा है। नीति निर्माता तथ्यों का सामना करने से बच नहीं सकते। हमारे सामने ढांचागत मुद्दा है न कि चक्रीय।

(लेखक मनीलाइफडॉटइन के संपादक और मनीलाइफ फाउंडेशन में ट्रस्टी हैं)

आपका पक्ष

भूजल को संभालना जरूरी

पंजाब सरकार ने प्रदेश में भूजल बचाने के मकसद से किसानों को कहा है कि वे धान की सीधी बोआई करें। इसके लिए सरकार ने सीधे बोआई करने वाले किसान को प्रति एकड़ 1,500 रुपये की वित्तीय सहायता देने का भी ऐलान किया है। इस विधि से खेतों में हर वक्त पानी रखने की जरूरत नहीं होती है। सरकार के इस फैसले से कितना पानी बचेगा या फिर अगर बारिश कम होती है तो सरकार इसके लिए किसानों की कैसे मदद करेगी यह तो आने वाला समय ही बताएगा। ऐसे में एक सवाल यह भी है कि सभी किसान इसमें रुचि दिखाएंगे या फिर सरकार को कोई खास अभियान चलाना पड़ेगा। उल्लेखनीय है कि पंजाब में भूजल स्तर गिरता जा रहा है। अगर यहां इसके लिए गंभीरता नहीं दिखाई गई तो रेगिस्तान की संख्या बढ़ने का खतरा है। देश में जहां भूगर्भ जलस्तर में भारी गिरावट आ रही है, वहां कुछ फसलों का उत्पादन बंद कर देना चाहिए या फसलचक्र में परिवर्तन करना चाहिए और कृषि वैज्ञानिकों को इसके लिए कुछ समाधान निकालना चाहिए। लेकिन सवाल यह है कि देश के जिन राज्यों में भूजल स्तर बहुत गिरता जा रहा है, क्या वहां किसान चावल की खेती करना बंद कर दे, क्योंकि इस फसल के लिए भी पानी की बहुत ज्यादा जरूरत होती है? सरकारों को चाहिए कि वे पानी बचाने के दूसरे उपायों पर भी गंभीरता दिखाए, किसानों को जल संरक्षण और बारिश के पानी को स्टोर करने के लिए जागरूक करे। सरकारों को चाहिए कि वे कृषि विशेषज्ञों के साथ मिलकर ऐसी तकनीक विकसित करें कि देश के हर राज्य में मौसम की बेरुखी से होने वाले फसलों के नुकसान से किसानों को बचाया जा सके, अर्थात जिस तरह मौसम का चक्र परिवर्तन हुआ है, उसी हिसाब से फसलों को पैदा किया जाए, उनकी खेती की जाए।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पंजाब सरकार ने किसानों से धान की सीधी बोआई करने के लिए कहा है। बताया गया है कि इससे खेती में कम पानी की जरूरत होती है

उपायों के प्रति गंभीर रवैया

हवाई हादसे तकनीकी खराबी, मानव की त्रुटि और लापरवाही तथा मौसम संबंधी समस्याओं के कारण होते हैं। इन हादसों से बचने के लिए या इन्हें टालने के लिए विमानन कंपनियों और संबंधित अधिकारियों को सुरक्षा उपायों का सख्ती से पालन करना चाहिए। उड़ान भरने से पूर्व विमान के रखरखाव की नियमित जांच के साथ ही उसकी सूक्ष्म सुरक्षा जांच भी की जानी चाहिए। सावधानी, सतर्कता और सुरक्षा उपायों को गंभीरता से लेने पर ही हवाई हादसों को टाला जा सकता है।

वर्षा अग्रवाल, भोपाल, मध्य प्रदेश

मानकों का सख्ती से पालन हो

एयर इंडिया के ड्रीमलाइनर हादसे ने देश को हिला दिया। इसके साथ ही केदारनाथ में हेलीकॉप्टर दुर्घटना ने विमानन उद्योग को कड़े सुरक्षा मानक तय करने और उसका पालन करने, एयरलाइंस को दुर्घटनाओं की जिम्मेदारी लेने को और दुर्घटनाग्रस्त एवं मृत यात्रियों को निश्चित क्षतिपूर्ति देने की बाध्यता सुनिश्चित करने की जरूरत बढ़ा दी है ताकि दुर्घटनाओं पर स्वतः रोक लग सके। पर्वतीय क्षेत्रों में हेलीकॉप्टर सेवाएं खराब मौसम के बावजूद जारी रहतीं हैं। डीजीसीए अकेले नियंत्रण करने की स्थिति में नहीं है, परंतु सुरक्षा मानकों की अवहेलना पर कठोर दंड की व्यवस्था होनी चाहिए।

विनोद जौहरी, दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने मंगलवार को नई दिल्ली में दक्षिण ऑस्ट्रेलिया की गवर्नर फ्रांसिस एडमसन से मुलाकात की। इस दौरान दोनों के बीच विभिन्न मुद्दों पर चर्चा हुई।

दैनिक जागरण

अतीत के सबक ही भविष्य में सही राह दिखाते हैं

सवालों में संघर्ष विराम

सवालों और संशय के बीच इजरायल-ईरान के बीच छिड़े भीषण युद्ध पर विराम लग गया। इस युद्ध में अमेरिका ने कूदकर और ईरान के परमाणु ठिकानों को निशाना बनाकर पश्चिम एशिया के साथ विश्व शांति एवं स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर दिया था। फिलहाल यह खतरा टलता दिख रहा है, लेकिन अभी यह कहना कठिन है कि इजरायल-ईरान के बीच की दशकों पुरानी दुश्मनी खत्म हो जाएगी और ऊर्जा के स्रोत वाले पश्चिम एशिया में शांति भी आ जाएगी, जैसा कि अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप कह रहे हैं। उनकी किसी बात पर भरोसा करना ठीक नहीं। वह अपनी ही बात और अपनी ही नीति से पलट जाते हैं। अब वह बीच-बचाव की मुद्रा में दिख रहे हैं और इजरायल को भी नसीहत दे रहे हैं। उनकी और इजरायली प्रधानमंत्री की मानें तो ईरान ने परमाणु हथियार बनाने की क्षमता खो दी है, लेकिन ईरान कह रहा है कि वह अपना परमाणु कार्यक्रम जारी रखेगा। क्या वह परमाणु हथियार हासिल करने का इरादा सचमुच छोड़ देगा? क्या उसके बचे-खुचे विज्ञानी यह विस्मृत कर सकते हैं कि परमाणु हथियार बनाते कैसे हैं? क्या अमेरिका से सदा सशंकित रूस और चीन भी यह चाहेंगे कि ईरान परमाणु हथियार बनाने का इरादा छोड़ दे? स्पष्ट है कि ऐसे सवालों का जवाब भविष्य ही देगा।

इस पर हैरानी नहीं कि ईरान भी अपनी जीत और शत्रु को सबक सिखाने का दावा कर रहा है। ऐसा ईरानी जनता और खास तौर पर कट्टर मजहबी सत्ता के समर्थकों का मनोबल बढ़ाने के लिए किया जा रहा है। दिख यही रहा है कि जिस तरह भारत के आपरेशन सिंदूर से पाकिस्तान पस्त हो गया था, वैसे ही, बल्कि उससे ज्यादा इजरायल और अमेरिकी सेनाओं के सामने ईरान भी पस्त हो गया। ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्ला खामेनेई ने खूब गर्जन-तर्जन किया और उनकी सेनाओं ने इजरायल को कुछ नुकसान पहुंचाने के साथ पश्चिम एशिया में अमेरिका के ठिकानों को निशाना बनाने की कोशिश की। इसी क्रम में कतर, इराक आदि में अमेरिकी अड्डों को निशाना भी बनाया गया, लेकिन ये कुलमिलाकर निष्प्रभावी हमले थे। ईरान ने ये हमले कर एक तरह से अपनी खीझ मिटाई। वास्तव में उसे इन हमलों के बहाने संघर्ष विराम की ट्रंप की पेशकश स्वीकारने का जरिया मिल गया। ऐसा कोई जरिया उसके लिए जरूरी भी था, क्योंकि कोई देश यह नहीं कहता कि वह असहाय हो गया। इसका एक उदाहरण पाकिस्तान है, जिसने भारत से हमेशा पिटने के बाद भी अपनी जीत का दावा किया। चूंकि भारत के ईरान और इजरायल, दोनों से संबंध हैं, इसलिए उसने किसी एक पक्ष में खड़े न होकर सही किया। भारत को सबसे पहले अपने हित ही देखने चाहिए। वर्तमान वैश्विक हालात और ट्रंप के रवैये को देखते हुए तो ऐसा करना और भी आवश्यक है।

चिंताजनक कार्यशैली

उत्तराखंड में सड़क दुर्घटनाओं में कमी लाने के लिए सुरक्षा उपायों को लेकर तंत्र की उदासीनता चिंता में डाल रही है। मैदानी क्षेत्र हों या पर्वतीय, दोनों ही सड़क दुर्घटनाओं के लिहाज से संवेदनशील हैं। हर साल तकरीबन एक हजार लोग दुर्घटनाओं में मारे जाते हैं। देहरादून, हरिद्वार, ऊधम सिंह नगर और नैनीताल में अधिक दुर्घटनाएं हो रही हैं। इनमें कमी लाने के उद्देश्य से सभी जिलों में दुर्घटना संभावित स्थलों को चिह्नित कर सुरक्षा उपाय सुझाए गए, लेकिन इनके क्रियान्वयन पर तंत्र की सुस्ती नहीं टूट रही है। अस्थाई राजधानी देहरादून का ही उदाहरण ले लीजिए, यहां देहरादून-दिल्ली राजमार्ग पर सुरक्षा समिति ने सात महीने पहले आशारोड़ी के निकट चिह्नित दुर्घटना संभावित स्थल पर सुरक्षा उपाय करने के सुझाव दिए थे, पर यह फाइलों से बाहर नहीं निकले। एक रोज पहले इसी जगह हादसे में चार पर्यटकों की जान चली गई। जिम्मेदारों की सुस्ती का आलम यह कि देहरादून में ऐसे 19 अन्य स्थल चिह्नित हैं, इनमें भी सुरक्षा उपायों को लेकर बातें खूब हुईं, पर ज्यादातर में काम नहीं हुआ। यह स्थिति अस्थाई राजधानी की है तो प्रदेश के दूर-दराज के क्षेत्रों में क्या होगी, इसका अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। दुर्घटना होने पर तंत्र कुछ समय के लिए जागता है और लीपापोती के बाद फिर से लंबी चादर तानकर ओढ़ लेता है। नतीजा, आए दिन दुर्घटना में जान गंवाने वालों की संख्या बढ़ रही है। इस पर गंभीरता से मनन करने की जरूरत है। अन्यथा, हादसों में लोग जान गंवाते रहेंगे और उसके बाद तंत्र लकीर पीटता रहेगा।

सुरक्षित सफर के लिए तंत्र को पारंपरिक अंदाज से हटकर काम करना होगा, तभी हादसों में कमी लाई जा सकती है

न भूलें आपातकाल थोपने के पीछे का इरादा

भूपेंद्र यादव

यदि 1977 में इंदिरा गांधी सत्ता में लौटतीं तो संवैधानिक व्यवस्था, बहुदलीय प्रणाली, न्यायपालिका आदि को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचता

कांग्रेस सरकार द्वारा 1975 से 77 तक लगाया गया आपातकाल भारत के लोकतांत्रिक इतिहास का सबसे काला अध्याय है। उस दौर में इंदिरा सरकार ने संविधान की मूल भावना को दरकिनार कर लोकतंत्र के आत्मा, संवैधानिक संस्थाओं, प्रेस की स्वतंत्रता, न्यायपालिका की निष्पक्षता और नागरिक अधिकारों पर आघात किया। आपातकाल का कालखंड भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में कलंक के टीके की तरह है। इस पर काफी चर्चा हुई है। किताबें भी लिखी गई हैं, लेकिन इस पहलू पर उतनी चर्चा नहीं हुई कि आपातकाल लगाने के पीछे इंदिरा गांधी की मंशा क्या थी? अगर 1977 में इंदिरा गांधी दोबारा सत्ता में लौटतीं तो भारत के लोकतंत्र और संविधान के मूल ढांचे पर इसके क्या प्रभाव पड़ते?

आपातकाल के दौरान किया गया 42वां संविधान संशोधन संविधान के मूल आत्मा को बदलने का एक प्रयास था। इसके मूल में एकदलीय प्रणाली को स्थापित करने की मंशा थी। यह एक तरह से संविधान को ही बदलने का प्रयास था। इस संशोधन के माध्यम से न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कम किया गया, नागरिक अधिकारों को सीमित किया गया और इंदिरा गांधी ने अपनी सरकार को असाधारण शक्तियां दे दीं।

कांग्रेस के मुखपत्र नेशनल हेराल्ड ने अपने संपादकीय में आपातकाल की हिमायत में लिखा था कि समय आ गया है कि अब देश एकदलीय लोकतंत्र की दिशा में बढ़े। इंदिरा के करीबी सहयोगी बीके नेहरू, जो एक अनुभवी राजनयिक भी थे, ने आपातकाल की सराहना में एक पत्र में लिखा था कि संसदीय लोकतंत्र हमारी जरूरतों का उत्तर देने में सक्षम नहीं है। उन्होंने इंदिरा गांधी से आग्रह किया कि अब जब आपके पास दो-तिहाई बहुमत है, तो संविधान में मौलिक परिवर्तन कर डालिए। इसलिए, यह संदेह निराधार नहीं कि यदि इंदिरा गांधी 1977 में सत्ता में वापसी करतीं तो यह प्रक्रिया और तेज होती। संविधान के मूल ढांचे, जैसे न्यायपालिका की स्वतंत्रता, संघीय व्यवस्था, नागरिक अधिकार, चुनावों की निष्पक्षता को कमजोर करने के लिए और संशोधन लाए जाते। तब भारत की लोकतांत्रिक पहचान खतरे में पड़ जाती।

आपातकाल के समय इंदिरा गांधी ने असहमत विरोधी दलों पर कड़े प्रतिबंध लगाए, सैकड़ों नेताओं को जेल में डाला और अनेक गैर-राजनीतिक संगठनों की आवाज भी दबाई। इसके पीछे उनका इरादा बहुदलीय लोकतांत्रिक व्यवस्था को कमजोर करके देश में एकदलीय प्रणाली को शक्तिशाली बनाने का था। यह अलोकतांत्रिक विचार था। इसके तहत इंदिरा गांधी कांग्रेस को एकमात्र राजनीतिक शक्ति बनाना चाहती थीं।

अवधेश राजपूत

आपातकाल के वक्त भारत में परिवार आधारित तानाशाही का प्रयोग चल रहा था। यदि यह प्रयोग सफल हुआ होता तो देश की निर्णय प्रक्रिया लोकतांत्रिक प्रणाली के बजाय 'एक दल-एक परिवार' की व्यक्तिगत इच्छाओं से संचालित होती। आपातकाल में नौकरशाही को कांग्रेस पार्टी के एजेंडे के प्रति वफादार बनाने के सारे प्रयास हुए। योग्यता और निष्पक्षता को दरकिनार कर केवल वफादारी के आधार पर पदोन्नति दी गई। यदि 1977 में दोबारा कांग्रेस की सरकार बनती, तो पूरी आशंका थी कि इस नीति को और आक्रामक रूप से लागू किया जाता। स्वतंत्र प्रशासनिक संस्थाएं, जैसे संघ लोक सेवा आयोग, कैग, चुनाव आयोग को निष्प्रभावी बनाया जाता और एक 'कमिटेड ब्यूरोक्रेसी' तैयार की जाती। कांग्रेस द्वारा समय-समय पर ऐसी कोशिश की जाती रही है, इसलिए इस आशंका को बल मिलता है। देश में लोकतंत्र की आधारशिला रखने वालों ने स्वतंत्र और स्वायत्त न्यायपालिका की व्यवस्था दी थी। उसे भी इंदिरा सरकार ने सरकार के प्रति प्रतिबद्ध बनाने की कोशिश की थी। सुप्रीम कोर्ट में वरिष्ठता की अनदेखी कर कनिष्ठ जज को मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया। जस्टिस एचआर खन्ना जैसे साहसी न्यायाधीशों को दरकिनार कर दिया गया, क्योंकि उन्होंने नागरिक अधिकारों की रक्षा पर जोर दिया था। यदि इंदिरा सत्ता में कायम रहतीं तो न्यायपालिका पर दबाव और बढ़ता। संवैधानिक समीक्षा की शक्तियों को सीमित किया जाता, न्यायिक नियुक्तियों में सरकार की मनमानी चलती और अदालतें सरकारी एजेंडे को वैध ठहराने का माध्यम बन जातीं।

आपातकाल के दौरान प्रेस की स्वतंत्रता पर अभूतपूर्व हमला हुआ। व्यापक सेंसरशिप लगाई गई। सरकार विरोधी सामग्री प्रकाशित करने पर प्रतिबंध लगाया गया। कई समाचार पत्रों के मालिकों, संपादकों को दंडित किया गया, क्योंकि उन्होंने आपातकाल की आलोचना की थी। कुछ अखबारों ने अपने संपादकीय खाली छोड़ दिए थे।

यदि 1977 में इंदिरा फिर सत्ता में आतीं, लोकतंत्र की बुनियादें-संवैधानिक व्यवस्था, बहुदलीय प्रणाली, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, प्रेस की आजादी और निष्पक्ष प्रशासन आदि गंभीर रूप से कमजोर हो जाता। भारत एक परिवार केंद्रित, पार्टी-प्रधान और अधिनायकवादी राज्य में बदल सकता था, पर भारत में लोकतंत्र की जड़ें बहुत मजबूत हैं, इसे देश ने साबित किया। जनता ने लोकतंत्र के खिलाफ इंदिरा गांधी की मंशा को खारिज कर लोकतंत्र के पक्ष में मतदान किया। इंदिरा गांधी और आपातकाल के लिए जिम्मेदार कांग्रेस के कई दिग्गज नेता चुनाव हार गए। 1977 का लोकसभा चुनाव नई सरकार चुनने से ज्यादा लोकतंत्र और संविधान को कमजोर करने की मंशा रखने वालों को दंडित करने वाला चुनाव था। लोगों ने आपातकाल के लिए जिम्मेदार लोगों को अपने मतदान के अधिकार की ताकत से दंडित किया और इस तरह कि वह एक मिसाल बना।

जनता पार्टी की ऐतिहासिक जीत और इंदिरा गांधी की पराजय ने न केवल लोकतंत्र की रक्षा की, बल्कि यह भी साबित किया कि भारत की जनता अपनी आजादी और संवैधानिक मूल्यों की रक्षा के लिए कोई भी कीमत चुकाने को तैयार है। 1977 का चुनाव भारतीय लोकतांत्रिक चेतना की जीत के नाम रहा। अब जब आपातकाल के 50 साल पूरे हो रहे हैं, तब हमारा लोकतंत्र मजबूती से आगे बढ़ रहा है और अनुच्छेद-356 के दुरुपयोग जैसी प्रवृत्ति खत्म हुई है।

(लेखक केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री हैं)
response@jagran.com

आपसी बैर बढ़ाने वाली राजनीति

राजीव सचान

जब विदेश नीति पर भी सस्ती राजनीति होती है तो पक्ष-विपक्ष के नेताओं के साथ उसके समर्थकों में भी कटुता पैदा होती है

कांग्रेस और कुछ अन्य विपक्षी दलों को मोदी सरकार की विदेश नीति रास नहीं आ रही है। यह कोई नई-अनोखी बात नहीं। ऐसा पहले भी होता रहा है, लेकिन पहले आमतौर पर उस पर आम सहमति कायम होती थी, क्योंकि माना जाता था कि विदेश नीति सत्तारूढ़ दल की की नहीं, देश की होती है। अतीत में इस मान्यता के कुछ अपवाद भी दिखे। विदेश नीति के मामले में जो अपवाद हुआ करता था, वह अब नियम बन गया है। जब भाजपा विपक्ष में थी, तो उसे भी मनमोहन सरकार की विदेश नीति के कुछ मुद्दों पर गहरी आपत्ति थी। परमाणु उत्तरदायित्व विधेयक लंबे समय तक इसलिए विवादों से घिरा रहा, क्योंकि भाजपा और अन्य विपक्षी दलों को उसके कुछ प्रविधान पसंद नहीं थे। यह विधेयक कुछ संशोधनों के साथ पारित होकर कानून तो बना, लेकिन कहा जाता है कि इन संशोधनों के कारण ही विदेशी कंपनियों ने भारत में परमाणु रिएक्टर लगाने में रुचि नहीं दिखाई। जो भी हो, कुछ समय पहले मोदी सरकार ने यह संकेत दिया कि विदेशी परमाणु ऊर्जा कंपनियों को आकर्षित करने के लिए उक्त कानून में कुछ बदलाव हो सकता है। इस पर कांग्रेस ने भाजपा के 2010 के रवैये का हवाला देते हुए कहा था कि उसने तो यू-टर्न ले लिया।

2014 में मोदी सरकार के सत्ता में आने के बाद उसकी विदेश नीति पर लेकर विपक्ष की आपत्तियां लगातार बढ़ती और तीखी होती गई हैं। पाकिस्तान और चीन पर मोदी सरकार की नीति पर तो कुछ ज्यादा ही सवाल उठे। जब जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 निष्प्रभावी किया गया तो देश-दुनिया में हलचल मची। एक समय कांग्रेस के ही नेता कहते थे कि यह अनुच्छेद घिसते-घिसते खत्म हो जाएगा, लेकिन मोदी सरकार ने जब उसे सचमुच खत्म कर दिया तो राहुल गांधी समेत कई विपक्षी नेताओं ने ऐसे बयान दिए, जो पाकिस्तान को अच्छे लगे। इसके पहले डोकलाम विवाद के समय भी कांग्रेस ने मोदी सरकार को कठघरे में खड़ा किया था। राहुल गांधी तो विदेश मंत्रालय को सूचना दिए बिना चीनी दूतावास चले गए थे। इसे लेकर हंगामा मचा तो कांग्रेस की ओर से कहा गया कि वह मामले को समझने गए थे। फिर गलवन में चीनी सैनिकों से खूनी झड़प के बाद भी कांग्रेस समेत कई विपक्षी दलों ने मोदी सरकार को घेरा। राहुल गांधी और कुछ अन्य नेता यदा-कदा कहते रहते हैं कि मोदी चीन से डरते हैं।

पहलगाम आतंकी हमले के बाद सर्वदलीय बैठक। फाइल

पहलगाम में बर्बर आतंकी हमले के बाद राहुल गांधी एवं अन्य विपक्षी नेताओं ने पर्यटकों की सुरक्षा में कमी के सही सवाल उठाकर कठिन वक्त में भारत सरकार के साथ खड़े होने का अच्छा संदेश दिया, लेकिन पाकिस्तान को सबक सिखाने वाले आपरेशन सिंदूर खत्म होते ही उनके सुर बदल गए। ये सुर पाकिस्तान में गूंजने लगे। आपरेशन सिंदूर के अचानक स्थगन और उसका श्रेय ट्रंप की ओर से लेने पर विपक्ष और अन्य अनेक ने उचित ही आपत्ति जताई। इस पर सरकार को भी कहना पड़ा कि ट्रंप सही नहीं। फिर एक दिन आपरेशन सिंदूर पर विदेश मंत्री जयशंकर के बयान को लेकर राहुल गांधी ने उन्हें घेरा और यह पूछा कि वे बताएं कि उनके कारण भारतीय सेना ने पाकिस्तान के खिलाफ सैन्य कार्रवाई में अपने कितने लड़ाकू विमान खोए? विदेश मंत्रालय ने स्पष्टीकरण दिया, लेकिन कांग्रेस को वह रास नहीं आया। उसके एक प्रवक्ता ने यह कहा कि विदेश मंत्री ने आतंकियों को बचाने का पाप किया है। पाकिस्तान को यह अच्छा लगा। यह भी याद करें कि पाकिस्तान के खिलाफ सर्जिकल और एयर स्ट्राइक पर कैसे सवाल उठाए गए थे और उन्हें पाकिस्तान में कितना पसंद किया गया था। ऐसे सवाल विरोध के लिए विरोध की राजनीति का ही परिचय देते हैं। दुर्भाग्य से अब विदेश नीति पर भी ऐसी ही राजनीति होती है।

इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि ट्रंप भारत-पाकिस्तान के बीच संघर्ष विराम का श्रेय लेने की सनक से ग्रस्त हैं। इतना अधिक कि कनाडा गए प्रधानमंत्री मोदी को उनसे फोन पर दो टूक बात करनी पड़ी। इसका सार यही था कि ट्रंप झूठ बोल रहे हैं। उनके झूठ से और पाकिस्तान प्रेम से भारत निपट ही रहा था कि इजरायल-ईरान जंग ने भारत का संकट बढ़ा दिया। इजरायल-ईरान जंग पर मोदी सरकार के रवैये पर सोनिया गांधी ने एक लेख लिखा। उन्होंने गाजा संकट एवं ईरान-इजरायल युद्ध पर मोदी सरकार पर चुप रहने का आरोप लगाया। उन्होंने कहा कि अभी समय है। सरकार को अपनी नीति बदलनी चाहिए। फिर ईरान-इजरायल युद्ध में ट्रंप ने कूदकर भारत और पूरी दुनिया का संकट बढ़ाया। भारत सरकार ने रूस-यूक्रेन युद्ध की तरह से इजरायल-ईरान जंग पर भी तटस्थ रहना तय किया। तटस्थता की यह नीति कई विपक्षी दलों को अच्छी नहीं लग रही। वाम दलों को तो बिल्कुल भी नहीं, लेकिन कांग्रेस भी इस नीति से खुश नहीं।

क्या भारत को सबसे पहले अपने हित की चिंता नहीं करनी चाहिए, जैसा अन्य देश कर रहे हैं? आखिर भारत को इजरायल और ईरान में किसके साथ खड़ा होना चाहिए? दोनों से तो भारत के अच्छे संबंध हैं। क्या कांग्रेस और सोनिया एवं राहुल को याद नहीं कि इजरायल से कूटनीतिक संबंध तो नरसिंह राव सरकार ने आगे बढ़ाए थे। यही काम मनमोहन सिंह ने किया। जब विदेश नीति पर सस्ती राजनीति होती है तो पक्ष-विपक्ष के बड़े नेताओं के साथ उसके कार्यकर्ताओं-समर्थकों में भी कटुता पैदा होती है और देश का माहौल खराब होता है।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

एकांत की साधना

आदि गुरु शंकराचार्य जी के अनुसार मनुष्यों से भरा स्थान ब्रह्मचिंतन में विघ्न है, अतः निर्जन स्थान में वास करना चाहिए। केवल तपस्वियों की नहीं, वरन एकांत में समस्त रचनात्मक प्राणियों की मुक्ति की कुंजी निहित है। यह उस भीतरी द्वार की ओर संकेत करता है, जहां चित्त की निर्झरिणी अविरल बहती है। मनुष्यों की भीड़ में आत्मा का आलोक धीमा पड़ने लगता है। भीड़ का कोलाहल हमारे बाह्य वातावरण को ही नहीं, अपितु सूक्ष्म कंपन में परिवर्तित होकर चित्त की तरंगों को भी विक्षुब्ध करता है। एक साधक के लिए यह विक्षोभ जब ब्रह्मरंध्र पर असर डालता है तो प्रज्ञा-जागृति में अवरोध बनता है।

यह सत्य है कि सभी साधक नहीं होते हैं, परंतु सामान्यजन भी तो किसी न किसी साधना में रत हो सकते हैं। कला, साहित्य, चिंतन, अवलोकन, नृत्य, भ्रमण, खोज, सृजन अपने स्तर पर एक साधना ही हैं। एकांत में कविता लिखना, किसी बांसुरी की धुन में लयबद्ध होना, वृक्ष की छाया में बैठे हुए तितलियों के रंग देखना, कुम्हार की चाक को चलते देखना, यह सब भी तो एक प्रकार का ध्यान है। यह 'ध्यान' भले ही चित्त को निर्विकल्प समाधि में न ले जाए, परंतु सामान्य चित्त की व्यग्रता का शमन अवश्य करता है। एकांत सृजन का गर्भगृह है। जब एकांत में व्यक्ति स्वयं में प्रवेश करता है, तब वह बाह्य नाट्य रंगमंच से विलग होकर उस नादब्रह्म को सुन पाता है, जो दिन-रात उसके अंतस में गूंजता रहता है। जिनके पास साधना का अवलंबन नहीं है, उन्हें ही अकेलापन काटता है। अकेलेपन का विराग वे ही गाते हैं, जिनके जीवन में किसी भी प्रकार की साधना का राग नहीं है। जबकि जिसने एक बार भी आत्मा की निःस्तब्धता को सुनकर रचनात्मक सृजन या प्रेम का जागरण अनुभव किया है, वह जानता है कि एकांत कोई अभाव नहीं, अकेलापन भी नहीं, अपितु आत्मालाप और आत्मलोप के लिए उपलब्ध एक सुंदर अवसर है।

ट्विंकल तोमर सिंह

शिक्षकों की नियुक्ति प्रक्रिया में संतुलन जरूरी

सुधीर कुमार

पीएचडी एक गहन बौद्धिक प्रक्रिया होती है, जो छात्रों में न केवल शोध कौशल, बल्कि धैर्य, समर्पण और तार्किक सोच विकसित करती है

हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ की तर्ज पर बिहार द्वारा असिस्टेंट प्रोफेसर की नियुक्ति प्रक्रिया में किए गए बदलाव ने एक नई बहस को जन्म दे दिया है कि क्या असिस्टेंट प्रोफेसरों की नियुक्ति में पीएचडी डिग्री का कोई महत्व नहीं होना चाहिए? दरअसल अभी तक की नियुक्ति प्रक्रिया में एकेडमिक परफार्मेंस इंडेक्स और विशेषकर पीएचडी डिग्री को अधिक वरीयता दी जाती थी, लेकिन अब नेट (राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा) उत्तीर्ण सभी उम्मीदवारों को लिखित परीक्षा से होकर गुजरना होगा।

इस बदलाव से सबसे बड़ा झटका उन पीएचडी धारकों को लगा है, जिन्होंने पिछली चयन प्रक्रियाओं के आधार पर इस डिग्री को हासिल किया था। नई प्रणाली में न केवल पीएचडी का यह अधिभार खत्म कर दिया गया है, बल्कि अकादमिक शोध-पत्रों के लिए दिए जाने वाले अंकों को भी समाप्त कर दिया गया है। पहले जहां एक शोधपत्र के लिए दो और अधिकतम पांच शोधपत्रों पर 10 अंक मिलते थे, वहीं अब इस समस्त अकादमिक परिश्रम को नजरअंदाज कर दिया गया है। यह सोचनीय है कि बिना पीएचडी असिस्टेंट प्रोफेसर बनने वाले उम्मीदवार छात्रों का शोध निर्देशन कैसे कर सकेंगे? पीएचडी एक गहन बौद्धिक प्रक्रिया होती है, जो न केवल शोध कौशल, बल्कि धैर्य, समर्पण और तार्किक सोच विकसित करती है। यदि इसे पूरी तरह चयन प्रक्रिया से बाहर कर दिया जाए तो शोध संस्कृति को गहरा आघात पहुंचेगा। बिना पीएचडी के असिस्टेंट प्रोफेसर बनाने की प्रक्रिया इस सोच को जन्म देती है कि क्या अब शोध का कोई मूल्य नहीं रह गया है? एक ऐसा शिक्षक, जिसे स्वयं शोध कार्य का अनुभव नहीं है, वह कैसे शोध छात्रों का मार्गदर्शन करेगा? बिना शोध-पत्र के प्रोन्नति भी बाधित हो सकती है। इस स्थिति में चयनित उम्मीदवारों को भविष्य में पीएचडी करनी ही होगी, जिससे कार्यस्थल पर दबाव और समय-संसाधन की चुनौती पैदा होगी। शिक्षण और प्रशासनिक दायित्वों के साथ-साथ पीएचडी करना कई बार गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। इससे भी बड़ी चिंता यह है कि यदि पीएचडी का महत्व नियुक्ति में नहीं रहेगा, तो भविष्य में छात्र केवल फेलोशिप हासिल करने के लिए ही पीएचडी करेंगे। यह उच्च गुणवत्ता वाले शोध को हतोत्साहित करेगा। जब शोध कार्य का कोई व्यावसायिक प्रतिफल नहीं होगा, तो स्वाभाविक रूप से उसका स्तर भी गिरने लगेगा। इससे भारत जैसे देश में अनुसंधान की संस्कृति कमजोर होगी और यह ज्ञान-आधारित समाज बनने के मार्ग में बाधक बन सकता है।

शिक्षकों की नियुक्ति प्रक्रिया में एक संतुलन बनाया जाए। प्रतिभाशाली युवाओं को अवसर मिले ही शोध की गुणवत्ता और प्रासंगिकता को भी नजरअंदाज न किया जाए।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

राजनीतिक अपराध था आपातकाल

'जब जेल जैसा बन गया था देश' शीर्षक से लिखे आलेख में केसी त्यागी ने 50 वर्ष पहले इंदिरा गांधी द्वारा अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए देश पर थोपे गए आपातकाल की उस नकारात्मकता का उल्लेख किया है जो भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकारों का बलपूर्वक दमन करने के आपराधिक कृत्य के रूप में कुख्यात हुई थी। स्वाधीन भारत के इतिहास में काले अध्याय के रूप में दर्ज यह राजनीतिक अपराध कांग्रेस की सर्वोच्च नेता और तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश के प्रति किया था। उस समय आपातकाल के भुक्तभोगी संघ के स्वयंसेवकों और कांग्रेस विरोधी दलों के नेताओं की जुबानी पुलिस की बर्बरता और जेल की यातनाओं को सुनकर सिहरन पैदा हो जाती है। हालांकि आमजन की स्मृति भी कितनी कमजोर होती है कि जिसने आपातकालीन विभीषिका के दंश को भुलाकर देश की सत्ता को कालांतर में पुनः उन्हीं निरंकुश हाथों में सौंप दिया था, जिसने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए देश को आपातकाल की आग में झोंका था। यही कारण था कि कांग्रेस के जिम्मेदार नेताओं ने इस राजनीतिक अपराध के लिए कभी भी पश्चाताप नहीं किया। कांग्रेस का यह आचरण आपातकाल जैसे देशघाती अपराध को स्वीकृति देने जैसा रहा। इस बीच देश के नागरिकों को भी मंथन करना चाहिए कि देश में कभी ऐसी परिस्थितियां दोबारा निर्मित न हों जो आपातकाल जैसी दमनकारी आपदा का कारण बनें।

pandeyvp1960@gmail.com

मेलबाक्स

बिलावल भुट्टो की गीदड़भभकी

पाकिस्तान के पूर्व विदेश मंत्री बिलावल भुट्टो ने एक बार फिर भारत के विरुद्ध जल विवाद को लेकर अनर्गल बयान दिया है। बिलावल ने कहा है कि यदि भारत सिंधु जल संधि के तहत पाकिस्तान को पानी देना बंद करता है तो पाकिस्तान भारत के विरुद्ध युद्ध छेड़ देगा। इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि या तो भारत पानी साझा करे, या फिर वे छह नदियों का पानी अपने देश तक पहुंचाकर रहेंगे। यह बयान केवल बिलावल की बचकाना हरकत है। यह तथ्य जगजाहिर है कि पाकिस्तान अपनी घरेलू विफलताओं और आतंकी गतिविधियों से जनता का ध्यान भटकाने के लिए समय-समय पर भारत विरोधी बयान देता रहता है। बिलावल इससे पूर्व भी इस प्रकार की गीदड़भभकियां दे चुके हैं, जिन पर न पाकिस्तान की अवाम ने कभी विश्वास किया और न ही अंतरराष्ट्रीय बिरादरी ने गंभीरता दिखाई। पाकिस्तान का मीडिया तक उनकी इन बातों को मजाकिया लहजे में लेता है। भारत एक जिम्मेदार राष्ट्र के रूप में आतंकवादी घटनाओं के बाद अपनी सुरक्षा और हितों की रक्षा करना जानता है। पहलगाम में हुए आतंकी हमले के बाद भारत द्वारा सिंधु जल समझौते को आंशिक रूप से स्थगित करने का निर्णय बिल्कुल उचित और राष्ट्रहित में था। पाकिस्तान यदि भविष्य में कोई दुस्साहस करेगा, तो उसका अंजाम भी पहले की तरह शर्मनाक पराजय ही होगा।

सुरेश गोयल, हिसार, हरियाणा

कोचिंग संस्थानों पर बढ़ती निर्भरता

प्रतियोगी परिक्षाओं के लिए कोचिंग संस्थानों पर छात्रों की लगातार बढ़ती निर्भरता और प्रवेश परिक्षाओं की निष्पक्षता से जांच के लिए शिक्षा मंत्रालय ने अब नौ सदस्यीय समिति गठित की है। यह समिति इन कोचिंग संस्थानों के किए जाने वाले दावों एवं स्कूलों की खामियों की भी समीक्षा करेगी एवं कोचिंग सेंटरों पर लगातार छात्रों की निर्भरता कम करने के उपाय सुझाएगी। कोचिंग संस्थानों एवं डमी स्कूलों का चलन पिछले कुछ वर्षों में काफी तेजी से बढ़ा है एवं प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के नाम पर कोचिंग उद्योग छात्रों के अभिभावकों से काफी मोटी रकम वसूल कर रहे हैं। अतः इस विषय में भी जांच जरूरी है, इसके अलावा नवगठित यह समिति स्कूल शिक्षा प्रणाली में मौजूद उन खामियों की भी जांच करेगी जिनके कारण आजकल छात्र कोचिंग सेंटरों में जाने पर मजबूर हो रहे हैं। इस वर्ष कोटा में प्रवेश परिक्षाओं की तैयारी कर रहे अब तक 14 छात्र आत्महत्या कर चुके हैं।

मनमोहन राजावत, शाजापुर

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

अमेरिका का हमला

विश्व व्यवस्था पर संकट

ईरान पर अमेरिका के हमले ने इजरायल-ईरान टकराव को और गंभीर बना दिया है। पश्चिम एशिया में अमेरिका का सीधा हस्तक्षेप संवेनदशील विश्व व्यवस्था को संकट में डाल सकता है। अमेरिका ने ईरानी वायुसीमा का उल्लंघन कर उसके तीन नाभिकीय ठिकानों पर हमला बोला। तीन ईरानी नाभिकीय सुविधाओं-नतांज, फोर्डो और इस्फहान पर अमेरिका के अभूतपूर्व हमले ने अन्य विश्व शक्तियों, जैसे रूस और चीन के परोक्ष हस्तक्षेप की संभावनायें तैयार कर दी हैं। इस प्रकार इजरायल और ईरान के बीच चल रहे 'छाया युद्ध' ने व्यापक टकराव का रूप ले लिया है क्योंकि वाशिंगटन के हस्तक्षेप ने क्षेत्रीय टकराव को बढ़ावा दिया है। इसके ऊर्जा सुरक्षा, अंतरराष्ट्रीय राजनय और विश्व शांति पर प्रभाव पड़ सकते हैं। गंभीर अंतरराष्ट्रीय चिन्ता के इस समय भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी संयम एवं तर्क के स्वर के रूप में उभरे हैं। उन्होंने ईरान के राष्ट्रपति मसूद पेजेश्कियान से सीधे बात कर आगे बढ़ने के एकमात्र रास्ते के रूप में संवाद और राजनय पर जोर दिया। युद्ध में अमेरिका के नाटकीय प्रवेश ने स्थिति गंभीर बना दी है। खाड़ी में अमेरिका के अनेक सैनिक अड्डे हैं और ईरान द्वारा हर्मुज जलमार्ग बंद करने से व्यापक और तत्काल क्षेत्रीय युद्ध का खतरा मंडराने लगा है क्योंकि इस जलमार्ग से दुनिया के 20 प्रतिशत से अधिक तेल का परिवहन होता है। इससे भारत समेत खाड़ी तेल पर निर्भर अनेक देशों को कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। भारत की खाड़ी देशों पर गहरी ऊर्जा निर्भरता के साथ ईरान और अमेरिका, दोनों से निकट संबंध हैं। उस पर इस टकराव का असर पड़ सकता है। हालांकि, भारत ने पिछले वर्षों में तेल आयात में विविधता को बढ़ावा दिया है तथा भारतीय पेट्रोलियम मंत्री हरदीप सिंह पुरी ने आश्वासन दिया है कि फिलहाल चिन्ता की बात नहीं है। लेकिन इसके बावजूद तेल सप्लाई में बाधा से देश में मुद्रास्फीति बढ़ सकती है, आर्थिक अनुमान पटरी से उतर सकते हैं तथा विदेशी मुद्रा भंडार पर दबाव पड़ सकता है। इसके साथ ही लगातार अस्थिरता से भारत का ईरान के चाबहार बंदरगाह में निवेश भी खतरे में पड़ सकता है जो अफगानिस्तान और मध्य एशिया के बीच महत्वपूर्ण संपर्क मार्ग है। इसलिए भारत के समक्ष उपस्थित कठिन राजनयिक चुनौती न केवल विदेश नीति, बल्कि राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय स्थायित्व से जुड़ी है। ऐसे में प्रधानमंत्री मोदी की अपील न केवल भारतीय रणनीतिक गणित के अनुरूप है, बल्कि यह गहराती दुश्मनियों के बीच मध्यस्थ की भूमिका की संभावना भी उजागर करती है।

क्षेत्रीय तनावों के साथ ही वर्तमान समय में युद्ध भड़कने से वैश्विक तेल बाजार प्रभावित हुए हैं। सप्लाई में बाधा के भय से कीमतें बढ़ गई हैं। अब यह केवल इजरायल-ईरान युद्ध नहीं रहा, बल्कि इसमें विश्व शक्तियों के शामिल होने, अर्थव्यवस्थाओं के अस्थिर होने तथा पहले से ही संवेदनशील विश्व व्यवस्था में विभाजन की आशंका पैदा हो गई है। तनाव अब तक के सर्वोच्च स्तर पर पहुंच जाने के बाद राजनय की संभावनायें भी कमजोर होती जा रही हैं। इसके बावजूद वर्तमान समय में दुनिया को ज्यादा राजनय और कम आक्रामकता की जरूरत है। ईरान को ऐसे राजनयिक विकल्प दिए जाने चाहिए जिससे वह अपनी छवि बनाए रखते हुए युद्ध भड़काने से बच सके। अमेरिका को राजनयिक संयम बरतते हुए मध्यस्थता के लिए स्पेस प्रदान करना चाहिए। इजरायल को भी समझना चाहिए कि एकपक्षीय सैनिक अभियानों से क्षेत्रीय शांति नहीं स्थापित की जा सकती है। विश्व राजनीति में गंभीर तनाव के इस क्षण में भारत जैसे देश शांति की विश्वसनीय आवाज के रूप में उभर सकते हैं। परोक्ष राजनय तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ, ब्रिक्स और गुटनिरपेक्ष आंदोलन जैसे बहुपक्षीय चैनलों के माध्यम से भारत युद्धविराम का एक ढांचा तैयार कर सकता है। यदि ऐसा न हो सके तो कम से कम परोक्ष राजनय और बहुपक्षीय मंचों के माध्यम से विभिन्न पक्षों के बीच संवाद का मार्ग खोला जा सकता है जो वर्तमान समय में बुरी तरह बाधित हो गया है। संकट के इस समय दुनिया को भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जैसे लोगों का आह्वान सुनना चाहिए जिन्होंने तनाव घटाने, संवाद तथा राजनय के रास्ते पर लौटने की बात कही है।

विकसित भारत का सपना

समावेशी विकास तथा परिवर्तनकारी सुधारों से भारत दुनिया की सबसे तेज प्रगति करने वाली प्रमुख अर्थव्यवस्था बन गई है। दुनिया में चौथी सबसे अधिक जीडीपी के साथ अब वह विकसित देश बनने की तैयारी कर रहा है।

विवेक सिंह
(लेखक, अर्थशास्त्री हैं)

भारत आर्थिक महाशक्ति के रूप में विकसित हो रहा है। भारत की वृद्धि दर दुनिया में सर्वोच्च है। भारतीय अर्थव्यवस्था 4.2 ट्रिलियन डालर के साथ दुनिया की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। 2014 से 2025 के बीच 11 साल में देश ने उल्लेखनीय आर्थिक व सामाजिक प्रगति प्राप्त की है। हालांकि, इस कालखंड में दूसरे अनेक देशों ने भी प्रगति की है, पर भारत की प्रगति व खासकर आर्थिक प्रगति एकदम अलग है। राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण हो रहा है और जारी रहेगा, पर भारत के संदर्भ में 2014 में हुए सत्ता परिवर्तन को अलग दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। 2014 का ऐतिहासिक जनादेश स्पष्ट था कि भारत स्वयं को विकसित भारत के रूप में देखना चाहता है।

नरेन्द्र मोदी सरकार के विकासोन्मुख निर्णयों के कारण भारत आज दुनिया में सबसे तेज प्रगति करने वाली अर्थव्यवस्था बन गया है। आने वाले वर्षों में भारत की जीडीपी वृद्धि दर 6.5 से 9 प्रतिशत के बीच रहेगी। इसका श्रेय 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास' मंत्र में निहित है जो भारत के 145 करोड़ लोगों को एकजुट करता है। मोदी सरकार ने समावेशी विकास पर जोर दिया है। 2047 तक भारत को विकसित देश बनाने का लक्ष्य स्वतंत्रता की सौवीं वर्षगांठ पर भारत को पूर्ण विकसित देश बनाना है। इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य का केन्द्र भारत को आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से दुनिया का नेता बनाना है। यह लक्ष्य प्राप्त करना कठिन होने के बावजूद असंभव नहीं है।

भारतीय अर्थव्यवस्था 2025 के अंत तक 4.5 ट्रिलियन की हो जाएगी। इस प्रकार भारत की अर्थव्यवस्था 2047 तक 35 ट्रिलियन डालर के आंकड़े तक पहुंच सकती है। भारत को 2047 में 35 ट्रिलियन डालर की विकसित अर्थव्यवस्था बनने के लिए 20 वर्ष तक जीडीपी वृद्धि दर 8 से 11 प्रतिशत होना अनिवार्य होगा जिसके लिए एक समग्र एवं होलिस्टिक दृष्टिकोण जरूरी है। भारत 2028 में दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। इसी प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था के 2030 तक 7 ट्रिलियन डालर, 2040 तक 19 ट्रिलियन डालर तथा 2047 तक 35 ट्रिलियन डालर होने की आशा है। बिना मिशन के कोई दृष्टिकोण प्राप्त नहीं हो सकता है। भारत को 35 ट्रिलियन डालर की विकसित अर्थव्यवस्था बनाना 'मोडी-मिशन आफ डेवलप्ड इंडिया' के माध्यम से संभव हो सकेगा।

किसी भी देश को वस्तुएं एवं सेवायें बेचने के लिए बड़े बाजार की आवश्यकता होती है। यह मांग स्वयं बाजार से पैदा होती है। बाजार उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की पूर्ति करता है। भारत आज दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है। हर देश भारत को दुनिया के सबसे बड़े बाजार के रूप में देख रहा है। भारत को हर क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनना होगा। 'मेक इन इंडिया', 'स्टार्टअप इंडिया' और 'डिजिटल इंडिया' जैसे कार्यक्रम देश को आर्थिक गति प्रदान कर रहे हैं। भारत नौजवानों का देश है। देश की 67 प्रतिशत जनसंख्या युवा है। कार्यबल सहभागिता वर्तमान समय में 56 प्रतिशत है जिसे अगले दस साल में 70 प्रतिशत तक पहुंचाना होगा। विनिर्माण, एमएसएमई और सेवा क्षेत्रों में व्यापक रोजगार के अवसर प्रदान करने होंगे जिनको सरकार को प्राथमिकता देनी चाहिए। भारत दुनिया का आने वाले अनेक दशकों तक सर्वोच्च कार्यबल वाला देश बना रहेगा। भारत को विकसित देश बनाने के लिए व्यापक ढांचागत व नीतिगत सुधार करने होंगे। पिछले दस साल में कैपेक्स खर्च 6 गुना बढ़ गया है जिसे 2030 तक बढ़ा कर 15 लाख करोड़ रना होगा। विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए मेक इन इंडिया व स्टार्टअप इंडिया के साथ ही 6.3 करोड़ एमएसएमई इकाइयों तथा पूंजीगत खर्च पर ध्यान देना होगा।

हमारा लक्ष्य एलेक्ट्रानिक्स, सेमीकंडक्टर, रक्षा और नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्रों में स्वदेशी उत्पादन बढाना होना चाहिए। नागरिकों और कार्पोरेट पर करों का बोझ और घटाना होगा। टैक्स स्लैब तीन से अधिक नहीं होने चाहिए। 'मेक इन इंडिया बट मेक फार वर्ड' के सफल क्रियान्वयन से भारत का निर्यात कई गुना बढ़ सकता है। हमारा कुल निर्यात 825 बिलियन डालर है जो जल्द ही 1 ट्रिलियन डालर हो जाएगा। 2047 तक भारत का निर्यात 10 ट्रिलियन डालर तक पहुंच सकता है। अव्यावहारिक और अनावश्यक नियमों और विनियमों से मुक्ति पाने की आवश्यकता है ताकि 'बिजनेस सुगमता' बढ़े तथा क्रियान्वयन खर्च घटे। इसका भारत आने वाले विदेशी निवेश पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। पिछले दस साल में एफडीआई आगमन 668 बिलियन डालर रहा है।

डिजिटल क्रांति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण चीज इंटरनेट प्रयोगकर्ताओं की संख्या है। 2010 में इंटरनेट प्रयोगकर्ताओं की संख्या केवल 8 प्रतिशत थी जो प्रशंसनीय ढंग से 2025 तक बढ़ कर 55 प्रतिशत हो गई। डिजिटलीकरण के लिए देश में 6.92 लाख किलोमीटर आप्टिकल फाइबर बिछाया जा चुका है।

आज देश में 94 करोड़ ब्राडबैंड ग्राहक हैं। इस समय दुनिया के 49 प्रतिशत डिजिटल लेनदेन केवल भारत में होते हैं। यह भारत के लिए गर्व की बात है कि केवल 2024 में 172 मिलियन डिजिटल लेनदेन हुए। डिजिटल क्रांति-1 के बाद अब डिजिटल क्रांति-2 की आवश्यकता है। भारत में 2030 तक डिजिटल प्रसार 70 प्रतिशत तक ले जाने की आवश्यकता है। पर्यटन का देश की जीडीपी में 5 प्रतिशत योगदा है और पर्यटन क्षेत्र में 7.6 करोड़ लोगों को रोजगार मिलता है। पर्यटन दुनिया में अनेक देशों की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। भारत में पर्यटन उद्योग के लिए असीम संभावनायें हैं। सांस्कृतिक पर्यटन, धार्मिक पर्यटन, ग्रामीण पर्यटन, इको-टूरिज्म, मेडिकल-टूरिज्म और हेरिटेज-टूरिज्म, आदि को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। विश्व पर्यटन में भारत का हिस्सा केवल 1.8 प्रतिशत है, ऐसे में इसे 2040 तक बढ़ा कर 10 प्रतिशत करने की आवश्यकता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पर्यटन उद्योग से जोड़ा जाना चाहिए। देश को ग्राम पर्यटन को बढ़ावा देने से लाभ होगा। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। आज देश में 70,683 उच्च शिक्षा संस्थान, 1,334 विश्वविद्यालय, 51,959 कालेज, 23 आईआईटी और एम्स तथा 2,045 मेडिकल कालेज हैं। शिक्षा और कौशल विकास पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है। नई शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत व्यापक परिवर्तन किए गए हैं, पर अभी स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक जमीनी स्तर पर इनका दिखना बाकी है। शिक्षा को सीधे भारतीय ज्ञान, भारतीय भाषाओं, रोजगार, इंटर्नशिप, कौशल विकास, उद्यमिता एवं शोध से जोड़ा जाना चाहिए।

राज्यों की अर्थव्यवस्था देश की अर्थव्यवस्था से सीधे जुड़ी है। इसे देखते हुए राज्यों और केन्द्र सरकार के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो इसके लिए संविधान संशोधन किया जाना चाहिए। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात व पूर्वोत्तर राज्यों पर ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है। देश की अर्थव्यवस्था को 2047 तक 35 ट्रिलियन डालर की बनाने के लिए उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों की अर्थव्यवस्था कम से कम 5 ट्रिलियन डालर की होनी चाहिए।

कृत्रिम बुद्धि, हरित तकनीकों और क्वांटम कंप्यूटिंग पर ज्यादा निवेश की आवश्यकता है। हरित ऊर्जा क्षेत्र में शोध और निवेश बढ़ाने से अगल पांच साल में कच्चे तेल के आयात के लिए विदेशों पर देश की निर्भरता कम होगी। इससे वर्तमान समय में व्याप्त वैश्विक अनिश्चितता तथा भू-राजनीतिक तनावों से बचा जा सकता है। दुनिया के सर्वाधिक शक्तिशाली देशों और व्यापार समूहों के साथ आर्थिक व रणनीतिक साझेदारियों के रूप में लगातार द्विपक्षीय और बहुपक्षीय समझौते किए जाने चाहिए। भारत दुनिया में सबसे तेज आर्थिक प्रगति करने वाला देश बना हुआ है। इस गति को बनाए रखने के साथ ही इसे और तेज कर विकास की गति बढ़ाने की जरूरत है। यदि हम आने वाले 20 साल में देश की आर्थिक वृद्धि दर 8-11 प्रतिशत पर बनाए रखने में सफल होते हैं तो भारत 2047 में 35 ट्रिलियन डालर की अर्थव्यवस्था वाला विकसित देश बन जाएगा। इसके लिए 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास' मंत्र को सारी जनता तक पहुंचाना और उसके प्रयासों में बदलना होगा।

क्या जगत में उदारता का ह्रास हो रहा है?

> "क्या आज़ादी खोने का डर केवल आम लोगों की भावना है? या फिर कोई और अदृश्य गुलामी चल रही है, जो सत्ता में दिखने वाले लोगों को भी जकड़ लेती है?"

आशा अय्यर कुमार
(लेखिका, स्तम्भकार हैं)

मैं यह कॉलम अवसरों की धरती से लिख रही हूं जो लंबे समय से सपनों की दुनिया में खोई हुई है और पिछले हफ्ते मैंने उस प्रतिष्ठित जगह का दौरा किया जो इस विशाल राष्ट्र के लिए सब कुछ समेटे हुए है: आज़ादी, लोकतंत्र और उम्मीद। आज़ादी के प्रतीक को आधुनिक समय की दासता के सांचे में ढाला जा रहा है।

यह मेरी कल्पना हो सकती है। या शायद यह उस दिन न्यूयॉर्क शहर में कहीं और हो रहे मौन विरोध प्रदर्शनों की प्रतिध्वनि थी। एक बात, हालांकि, स्पष्ट है: हर जगह लोग अब अधिक सतर्क हैं। वे अतिक्रमण से सावधान हैं, चुप करा दिए जाने से, अपनी आजीविका खोने से, संक्षेप में, हर उस चीज़ से जो उनके मन की शांति छीन लेगी। हर जगह डर है, और यह लोगों को ऐसा महसूस करा रहा है जैसे वे अंडे के छिलके पर चल रहे हैं। दिल के किनारे से लेकर सड़क के कोने तक, यहाँ तक कि उन शब्दों में भी एक स्पष्ट डर है जो हम कभी अपनी राय व्यक्त करते समय खुलकर बोलते थे।

लेकिन फिर, इसने मुझे आश्चर्यचकित किया: क्या आज़ादी खोने का डर केवल आम लोगों की भावना है? या फिर कोई और अदृश्य गुलामी चल रही है, जो सत्ता में दिखने वाले लोगों को भी जकड़ लेती है? मेरा मानना है कि यह डर एकतरफा नहीं है। यह सर्वव्यापी है, हर जगह मौजूद है। शासितों और शासकों के बीच। प्रजा और संप्रभुओं के बीच।

यह खुला है, फिर भी अक्सर मौन है - उन लोगों में जो अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को छीने जाने के बारे में अपनी शंकाओं को फुसफुसाते हैं, जिससे वे खुद को कमज़ोर महसूस करते हैं। दूसरे लोग, जो डंडे को थामे हुए हैं, बिना सोचे-समझे घोषणाओं और आवेगपूर्ण कृत्यों के ज़रिए इसे और अधिक स्पष्ट करते हैं। मिसाइल और ड्रोन, भले ही वे सत्ता के प्रतीक लगते हों, वास्तव में वे उस चिंता का एक रूप हैं जो बहादुरी में छिपी होती है। सत्तावादी किसी समय किसी दुश्मन द्वारा कब्ज़ा किए जाने से डरते हैं। वे जान-माल को नष्ट करने के लिए उत्पात मचाते हैं क्योंकि उनकी रातें उनके परिधि में कहीं से अप्रत्याशित घात लगाकर मारे जाने के भयावह विचार से नींद हराम हो जाती हैं। बिना किसी दिखावे या आरक्षण के हम स्वीकार करते हैं: हमारे सोशल हैंडल पर हम जो बड़े-बड़े दावे करते हैं, वे भी एक स्पष्ट भय का मौन प्रदर्शन हैं - उन लोगों द्वारा पदच्युत, छायांकित या निरर्थक बना दिए जाने का जो हमसे अधिक सक्षम और प्रभावशाली दिखते हैं।

> **हर जगह लोग अब अधिक सतर्क हैं। वे अतिक्रमण से सावधान हैं, चुप करा दिए जाने से, अपनी आजीविका खोने से, संक्षेप में, हर उस चीज़ से जो उनके मन की शांति छीन लेगी। हर जगह डर है, और यह लोगों को ऐसा महसूस करा रहा है जैसे वे अंडे के छिलके पर चल रहे हैं।**

हम हर समय डरते हैं, और यह धीरे-धीरे हमारे प्राणों को खा रहा है। हम जो कुछ भी बनाते हैं, वह हमारे भीतर स्वाभाविक रूप से संग्रहीत ऊर्जा के स्रोत से नहीं, बल्कि बाहरी ताकतों द्वारा आता है। हम ब्रह्मांडीय प्रेरणाओं से नहीं, बल्कि एक घबराए हुए भीड़ के दिखावटी आकर्षण से प्रेरित हैं जो अजेय दिखना चाहता है। हमारी कल्पना दांव पर है, और हम केवल रुझानों और मानदंडों का अनुसरण कर रहे हैं क्योंकि हम महत्व खोने से डरते हैं। यह डर हमारे दैनिक जीवन में वास्तविक बातचीत करने वालों की हमारी क्षमता को कम कर रहा है। एक अलिखित नियम है जिसे हम नहीं तोड़ सकते, कहीं ऐसा न हो कि क्यूरेट की गई बातचीत में भाग लेने वाले लोग नाराज़ हो जाएं। और यह देखकर दुख होता है कि पुरुष और महिलाएं हमारे दैनिक व्यवसायों में केवल पारंपरिक धन्यवाद और आपका स्वागत है से जुड़ते हैं। हम ज़रूरी बातों से ज़्यादा बात नहीं कर सकते, क्योंकि इससे किसी और के डर का बटन दब सकता है।

अपने निजी दायरे की रक्षा के लिए अच्छे और सभ्य होने का पूरा दिखावा हमारे सच्चे इंसान होने के व्यक्तिगत साहस को खत्म कर रहा है। हम लोग, दोस्त, रिश्तेदार, पड़ोसी, प्रजा, शासक - और एक पूरी प्रजाति के तौर पर जो होने चाहिए, उससे बहुत दूर हैं। और यह, मैं कहता हूँ, सिर्फ़ आम लोगों पर ही लागू नहीं होता। यह पैदल चलने वाले से लेकर ताकतवर तक सभी पर लागू होता है।

ऐसा लगता नहीं है कि दुनिया पर हावी होने वाला डर - अलग-अलग स्तरों पर, अलग-अलग उपायों से और अलग-अलग कारणों से - जल्द ही खत्म हो जाएगा। फिर भी ऐसे दुर्लभ समय होते हैं जब एक आम इंसान होने की सच्ची भावना जो दूसरे के समान अस्तित्व का सम्मान करता है, जो एक साथ धड़कते पवित्र दिल से प्यार करता है और वह भावना जो हम सभी को एक इकाई के रूप में एक साथ रखती है, उभर कर सामने आती है। ऐसे ही एक क्षणभंगुर पल में, सभी डर को दूर करते हुए, मैंने उस देश के हवाई अड्डे पर इमिग्रेशन गेट पर एक अधिकारी से कहा जहाँ कभी सपने उड़ान भरते थे: आप मुझे बराक ओबामा की याद दिलाते हैं, सर।

सज्जन बहुत प्रसन्न हुए और मुझे हल्के से हंसते हुए कहा, कई लोगों ने मुझसे ऐसा कहा है। मुझे उम्मीद है कि वह वापस ऑफिस आ सकते हैं। मीलों दूर, लेडी लिबर्टी भी हमारी प्यारी नोकझोंक पर मुस्कुरा सकती थी और अपना मुकुट ठीक कर सकती थी - इस उम्मीद में कि साहस और उम्मीद घर और दुनिया में हर जगह वापस आ जाएगी। बिना किसी डर या पक्षपात के।

आप की बात

आपातकाल की याद

25 जून, 1975 की आधी रात तत्कालीन प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी ने देश पर आपातकाल लागू कर लोकतन्त्र का गला घोंटा था। आज जो कांग्रेस स्वयं को लोकतन्त्र का प्रहरी और रक्षक कहते नहीं अघाती उसका इतिहास लोकतन्त्र की हत्या के अनेक अध्यायों से भरा है। 12 जून, 1975 को जब इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने राजनारायण बनाम इन्दिरा गांधी के एक अभियोग में इन्दिरा गांधी के रायबरेली चुनाव को अवैध घोषित कर दिया तो इन्दिरा गांधी ने संविधान और लोकतन्त्र दोनों को अपने हाथ का खिलौना बना डाला। समाचार पत्रों के सम्पादकीय पृष्ठ खाली ही नहीं बल्कि विरोध में काले छोड़े जाने लगे। समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में वही समाचार छपता था जो प्रधानमंत्री कार्यालय से अनुमोदित होता था। मीसा नामक काले कानून के अन्तर्गत किसी को भी बिना पूर्व सूचना के जेलों में ठूंसा गया। थानों और जेलों में प्लास से नाखून तक खींचे गये। अत्याचार में कांग्रेस सरकार ने ब्रिटिश शासन को भी पीछे छोड़ दिया। लालू प्रसाद यादव ने तो आपातकाल में जन्मी अपनी एक बेटी का नाम ही मीसा रख दिया था। नियति का खेल देखिये कि आज वही मीसा भारती और लालू प्रसाद यादव अतीत के प्रति आंखें मूंदने वाली कांग्रेस की आंखों के तारे बने हुए हैं।

- **नरेन्द्र टोंक,** मेरठ

बदलते खाड़ी देश

अगले 30 से 50 वर्षों के भीतर खाड़ी के तेल संपदा से भरपूर देशों की आर्थिक गतिविधियां एकदम से बदलने वाली हैं। यूऐई एवं सऊदी अरब ने इसके लिए योजना बनाना शुरू कर दी है। जीवाश्म ईंधन से छुटकारा पाने के लिए खाड़ी के तमाम देशों ने अगले 25 से 40 वर्षों के भीतर अपने कच्चे तेल के उत्पादन को शून्य करने को हामी भर दी है। उसके बाद उन्होंने नए आय श्रोत तलाशने के लिए एड़ी चोटी का जोर लगाना शुरू कर दिया है। सऊदी अरब ने तेल राजस्व पर निर्भरता कम करने और अर्थव्यवस्था में विविधता के लिए रणनीतिक बदलाव की घोषणा विज़न 2030 के माध्यम से कर दी है। इसमें पर्यटन, नवीकरणीय ऊर्जा, विश्व फुटबॉल प्रतियोगिता का आयोजन और प्रौद्योगिकी जैसे गैर-तेल क्षेत्रों को विकसित करना शामिल है। खाड़ी के किसी भी देश में अब तक आयकर वसूलने का प्रावधान नहीं था। मगर अब ओमान ने आयकर लागू करने के दिशा में काम शुरू कर दिया है। यहां 5 प्रतिशत कर 2028 से सालाना 109,000 डालर से अधिक कमाई पर लागू होगा। कई देशों ने वैश्विक पर्यटन और धार्मिक पर्यटन तक को बढ़ावा देने की व्यापक योजनायें शुरू की हैं जिनमें मंदिर बनवाना तक शामिल हैं।

-**जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर

बिहार में बयानबाजी

बिहार की राजनीति मे उथलपुथल और अनर्गल बयानबाजी नेताओं के लिए बच्चों का खेल बन गया है। यहां राजनीतिक दलों के प्रत्याशी और नेता अनर्गल टीका टिप्पणी, आरोप-प्रत्यारोप और अमर्यादित शब्दों का उपयोग करना अपनी समझदारी और शान समझते हैं। उन्हें सत्ता पाने की होड़ में या कुर्सी मोह मे यह भान नहीं होता की इस वातावरण का जनता जनार्दन पर क्या प्रभाव पड़ेगा घ् बिहार की सियासत मे ऐसे ही शब्दों का उपयोग हो रहा है। बिहार के नेता अब एक दूसरे को चोर और पॉकेटमार बताने लगे हैं। मेरा बाप चारा चोर जैसे पोस्टर दिख रहे हैं। प्रधानमंत्री मोदी के लिए एक नेता ने पाकेटमार जैसे अशोभनीय व अपमानजनक शब्द का प्रयोग किया है। आशंका है कि बिहार के चुनाव नजदीक आने के साथ ही यह अनर्गल बयानबाजी बढ़ती जाएगी। वास्तव में बात बिहार के विकास और उसकी समस्याओं की होनी चाहिए, पर इस प्रकार की बयानबाजी से मतदाताओं का ध्यान असली समस्याओं से हटा कर उनमें विभाजन पैदा कर चुनावी लाभ प्राप्त करने पर केन्द्रित हो जाता है। उम्मीद करनी चाहिए कि बिहार की जनता इस भ्रामक बयानबाजी से प्रभावित हुए बिना चुनाव में सही निर्णय करेगी।

-**योगेश जोशी,** बड़वाह

हथियारों का व्यापार

आधुनिक हथियारों की जरूरत में इंसान खुद अपनी विनाश की पटकथा लिख रहा है। हथियारों की आपूर्ति से आज युद्ध का वैश्विक माहौल बन रहा है। ऐसा लगता है तनाव समृद्ध देशों के लिए रणनीतिक जरूरत बन गई हैं। अपनी सैन्य क्षमता दिखाकर हथियारों का व्यापार बढ़ाना और अंतरराष्ट्रीय मंच पर वर्चस्व बनाए रखने की आतुरता ऐसे देशों की फितरत हो चुकी हैं। शांति-करुणा के कवच ओढ़कर असल में युद्ध के बहाने तलाशे जाते हैं। अपनी करतूतों से उपजे पर्यावरणीय प्रदूषण व ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं का भार विकसित देशों ने आर्थिक रूप से कमजोर देशों पर डाल दिया है जबकि इन समस्याओं के असली जिम्मेदार तो वही हैं। वास्तव में भुखमरी, महंगाई, भ्रष्टाचार और युवा भविष्य के लिए युद्ध लड़ा जाना चाहिए, लेकिन इसे दरकिनार कर दिया गया है। हथियार बनाने वाली कंपनियां दुनिया में चल रहे युद्धों को अपनी मार्केटिंग का माध्यम बनाती हैं और मीडिया भी हथियारों की विनाशक क्षमता का चटखारेदार विवरण पेश कर इन मानव-विरोधी कंपनियों का मुनाफा बढ़ाने में लग जाता है।

- **अमृतलाल मारू,** इंदौर

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid